न. क. क्रूप्स्काया

शिक्षा

चुने हुए लेख एवं भाषण

विदेशी भाषा प्रकाशन गृह

मास्को १९५९

अनुवादक . डॉ० नारायणदास खन्ना

Н. К. Крупская

О ВОСПИТАНИИ.

ИЗБРАННЫЕ СТАТЬИ И РЕЧИ

विषय-सूची

युवक संघटन

स्कूल और पोलीटेक्निकल शिक्षा

स्वाध्याय

मेरा जीवन

अतीत-काल

मेरा जन्म १८६६ में हुआ। मेरे माता-पिता कुलीन घराने के थे, फिर भी उनके न घर था, न ज़मीन-जायदाद। अपने विवाह के बाद तो उन्हे भोजन का सामान खरीदने तक के लिए प्राय कर्ज़ लेना पडता था।

मा अनाथ थी। वज़ीफे से उनकी पढाई-लिखाई चलती थी। इन्स्टीट्यूट की पढाई समाप्त होते ही वे अध्यापिका बन गईं।

पिता

मेरे पिता के माता-पिता की मृत्यु बहुत पहले, उनके बालकाल में ही, हो चुकी थी। उनकी शिक्षा-दीक्षा पहले एक मिलिटरी स्कूल में और फिर मिलिटरी कालेज में हुई थी। यही से उन्होंने अफसरी की स्नातकी परीक्षा पास की थी। वे दिन थे जब अफसरो में असन्तोष की आग भडका करती थी। पिता पढते बहुत थे। वे नास्तिक थे और पश्चिम में सामाजिक आन्दोलनो के बारे में बहुत कुछ जानते थे। जब तक वे जिन्दा रहे हमारा घर क्रान्तिकारियो का अड्डा बना रहा (पहले निहिलिस्ट आये, फिर नरोदवादी* और उसके बाद 'नरोदनया वोल्या' के सदस्य)। मैं स्वय नहीं जानती कि क्रान्तिकारी आन्दोलन में पिता खुद भाग लेते थे या नहीं—जब पिता की मृत्यु हुई उस समय मैं केवल १४ वर्ष की थी। उन दिनों

---

*रूस के एक नरोदवादी (लोकवादी) आन्दोलन के सदस्य।—सं०

के क्रान्तिकारी कार्यों को अत्यधिक गुप्त रखना पड़ता और सच्चे क्रान्तिकारी अपने कामो के वारे में मुह तक न खोलते। जव कभी घर में इस विषय की चर्चा शुरू होने लगती तो मुझे किसी काम से खिसका दिया जाता। फिर भी वहुत-सी वाते मेरे कानो में पड़ ही जाती। वस इन्ही कारणो से मै क्रान्तिकारियो से सहानुभूति रखने लगी थी।

पिता कुछ भावुक किस्म के व्यक्ति थे। वे अन्याय नही सह सकते थे। तरुण अफसर के रूप में उन्हे, १८६३ में, पोलैण्ड का उपद्रव शान्त करने के लिए वहा जाना पडा था। लेकिन वे एक खराव अफसर थे उन्होने पोलिश कैदियो को मुक्त किया, निकल भागने में उनकी सहायता की और वह सव कुछ किया जिससे पोलिश लोगो पर ज़ारशाही सेना की विजय का कम से कम असर पड़ सकता था। कारण स्पष्ट था। पोलिश जनता रूसी जारशाही के असह्य दमन-चक्र के खिलाफ जिहाद कर रही थी। इस सैनिक कार्यवाही के पश्चात् पिता मिलिटरी कानून-अकादमी में भरती हुए, वहां की पढाई पूरी की और ज़िला अफसर के रूप में पोलैंड चले गये। उनकी हमेशा यही धारणा वनी रही कि सिर्फ ईमानदार लोग ही वहां भेजें जायं। जिस समय वे ज़िले में पहुंचे उस समय वहां दमन-चक्र ज़ोरो पर था। यहूदियो को घसीट घसीट कर चौराहो पर लाया जाता और सारे वाज़ार उनकी दाढी मूछें काट ली जाती। पोलिशो को उनके कब्रिस्तानो के इर्द-गिर्द वाड़े वनाने की अनुमति न थी। वहां सूअर छोड़ दिये गये थे जो उनकी कब्रो को अपनी नाको से खोदा करते थे। पिता ने ये सारी वातें वन्द कर दी! उन्होंने वहां एक आदर्श अस्पताल की स्थापना की और घूस लेने वालो को दंड दिया। फलत एक ओर वे सशस्त्र पुलिस और रूसी अधिकारियो की आख के कांटे वने तो दूसरी ओर जनता की, खासकर पोलिशो और जरूरतमन्द यहूदियो की, आंख के तारे।

शीघ्र ही पिता पर शिकायतो की वौछारें की जाने लगी। परन्तु किसी भी शिकायत-पत्र पर लेखक का नाम न होता। उन्हें राजनीतिक

संदिग्ध व्यक्ति घोषित किया गया, बिना कारण बताये नौकरी से बर्खास्त किया गया और उनपर मुकदमा चलाया गया। (उनपर २२ जुर्म थे पोलिश भाषा बोलना, मजूरका नाच नाचना, ज़ार के जन्मदिन पर अपने दफ्तर में जगमगाहट न करना, गिरजे जाने से इनकार करना, आदि।) फैसले में उन्हे सरकारी दफ्तरों में काम करने की मनाही कर दी गई। यह मुकदमा दस वर्ष तक खिंचता रहा। अन्त में पुनर्विलोकन के लिए उसे सीनेट भेजा गया जिसने पिता को दोषमुक्त घोषित कर दिया। किन्तु ये आदेश उनकी मृत्यु से कुछ ही पहले प्राप्त हुए थे।

मुझे निरंकुशता से नफरत कैसे हुई

अपने बचपन में ही मुझे राष्ट्रीय दमन से घृणा हो गई थी क्योंकि मैंने देखा था कि यहूदी, पोल तथा दूसरे लोग किसी भी दशा में रूसियों से खराब न थे। यही कारण था कि जब मैं बड़ी हुई तो तन-मन-धन से रूसी कम्यूनिस्ट पार्टी के कामों में जुट गई। पार्टी ने राष्ट्रों के उन अधिकार की घोषणा की जिसके अधीन वे अपनी इच्छानुसार अपना शासन चला सकते है और रह सकते है। मै खुद इस बात से पूर्णत सहमत थी कि आत्मनिर्णय का उनका अधिकार सर्वमान्य होना चाहिए।

मैंने अपने छुटपन में ही यह अनुभव कर लिया था कि ज़ार के अधिकारी बहुत अधिक स्वेच्छाचारी और अत्याचारी बन गये थे। बड़ी होने पर मै खुद क्रान्तिकारी बन गई और निरंकुशता के विरुद्ध लड़ने लगी।

सरकारी नौकरी से बरखास्त कर दिये जाने के बाद पिता को वे सारे काम करने पड़े जो उन्हे सुलभ हो सके थे। वे बीमे के एजेन्ट और फैक्ट्री के इन्स्पेक्टर बने, उन्होंने न्यायालय में मुकदमों की पैरवी की इत्यादि। हमें हमेशा नगर नगर की खाक छाननी पड़ती। फलत: मुझे सभी किस्म के लोगों के सम्पर्क में आने का मौका मिला।

मां प्राय: मुझे वताया करती कि वे किस प्रकार एक ज़मींदार-परिवार में शिक्षिका के रूप में काम करती थी, ज़मीदार किसानो से कैसा व्यवहार करते थे, उनपर क्या क्या अत्याचार करते थे। गर्मी के दिनो में एक वार, जव पिता अभी नौकरी की ढूढ़-तलाश में ही लगे हुए थे, मां मुझे उस ज़मीदार परिवार में ले गईं जहां वे शिक्षिका का काम कर चुकी थी। यद्यपि उस समय मेरी उम्र यही कोई पांच वर्ष की रही होगी, फिर भी मैंने वहा वड़ा उत्पात मचाया, खाने के वाद न तो मैंने किसी को धन्यवाद ही दिया और न उनसे नमस्ते ही की। अतएव अन्ततः जव पिता जी आये और हमें रुसानोवो से (ज़मीनदार की जागीर का यही नाम था) वापस ले गये तो मा को वडी खुशी हुई। उस समय तक सर्दी पड़ने लगी थी। रास्ते में किसानो ने हमारी वन्द गाड़ी रोकी और यह समझ कर कि हम सव ज़मीदार परिवार के हैं उन्होने गाड़ीवान की मरम्मत की और हमें भी वर्फ में दफना देने की धमकी दी।

पिता को उनपर कोई क्रोध न आया। उन्होने तो यही कहा कि ये किसान ज़मीदारों से, आज से नही सदियो से, घृणा करते आये हैं और सच पूछो तो ज़मीदार उसके पात्र भी हैं।

रुसानोवो में मेरी दोस्ती किसानो के वच्चो और उनकी माताओ से हो गई। वे सव मुझे चाहती थी, मुझसे प्रेम करती थी। मैं किसानों के पक्ष में थी। मुझे पिता की वात कभी न भूलती। जव मैं वडी हुई उस समय मैं ज़मीदारों की ज़मीन-जायदाद ज़ब्त करने और उसे किसानो में वाटने पर ज़ोर देती रही थी।

वचपन में ही, अर्थात् जव मैं सिर्फ छः वर्ष की थी, मैं फैक्ट्री मालिको से भी घृणा करने लगी थी। उन दिनों पिता उगलिच की हावर्ड फ़ैक्ट्री में इन्स्पेक्टर थे। जव वे वहां की भयानक घटनाओ, श्रमिको के शोषण आदि की वाते करते तो मैं भी उन्हें टुकुर टुकुर सुना करती।

मैं श्रमिको के वच्चों के साथ खेलती थी, और जव कभी हमें

फैक्ट्री का मैनेजर जाता दिखाई पड जाता तो हम पीछे से उनपर बर्फ का गोला फेंकते थे।

जब तुर्की से युद्ध आरम्भ हुआ तब मै आठ वर्ष की थी। उन समय हम किएव में रह रहे थे। मैंने लोगो में उग्र राष्ट्रवादी भावनाओ का प्रस्फुटन देखा था और तुर्की अत्याचारो की कहानिया सुनी थी। मैंने जख्मी तुर्की कैदियो को देखा था, और उस तुर्की बच्चे के साथ खेली थी जिसे हमारे सैनिक पकड़ लाये थे। उस समय मुझे मालूम हुआ कि युद्ध कितनी भयानक चीज है।

एक दिन पिता मुझे वेरेश्चागिन के चित्रो की नुमाइश दिखाने ले गये। एक चित्र मे एक बडा राजा और कुछ अधिकारी दिखाये गये थे। वे सफेद वर्दिया पहने और दूरबीने लिये, किसी सुरक्षित स्थान मे, लडाई में जूझने और मरने वाले सैनिको को देख रहे थे। उस समय मेरी समझ में कुछ न आया। लेकिन बाद में, प्रथम विश्व-युद्ध के समय, जब सेना ने लड़ने से इनकार किया था, मेरी सारी सहानुभूति उन्ही के पक्ष में उमड़ पडी थी।

‘तिमोफेइका’

एक बार वसन्त ऋतु में, जब मै कोई ११ साल की थी, मुझे गाव भेज दिया गया। उस समय पिता कोस्यकोव्स्की नामक जमींदारिनी की जायदाद की देख-भाल किया करते थे। प्स्कोव प्रदेश में कोस्यकोव्स्की की एक छोटी-सी फैक्ट्री थी जहा लेखन-सामग्री तैयार की जाती थी। यहा का काम बडा उलझा हुआ था और पिता उसकी समुचित व्यवस्था कर रहे थे। कोस्यकोव्स्की को उनकी बडी जरूरत थी और वे पिता के साथ व्यवहार भी अच्छा करते थे।

उसी वसत ऋतु में मै सख्त बीमार पड गई और कोस्यकोव्स्की ने मुझे अपनी जागीर में ले जाने का प्रस्ताव किया। इस जागीर का नाम था

'स्तुदेनेत्स' और यह वेलया स्टेशन से कोई २५ मील दूर थी। मेरे माता-पिता राज़ी हो गये। अपरिचितो के सामने मुझे झिझक तो ज़रूर लगी लेकिन जंगल, मैदानो, अक्षय पुष्पो से लदे हुए पहाड़ी ढालो तथा भूमि की सुगंध और हवा में लहराती हुई हरीतिमा ने मुझे मस्त कर दिया।

पहली रात मैंने एक सजे-सजाये अतिथि-कक्ष के गुदगुदे पलंग पर विताई। परन्तु इस समय काफी गर्मी पड रही थी, इसलिए मैंने उठकर खिड़की खोल दी और फिर तत्काल ही सारा कमरा लिलक पुष्पो की सुरभि से भर गया। दूर कही वुलवुल अलाप रही थी। मैं खिड़की पर खड़ी हो गई और देर तक खडी रही। दूसरे दिन प्रात.काल मैं वडे तड़के उठी और नदी के किनारे ढाल पर स्थित वाग में निकल गई। वहा मुझे साधारण सूती लिवास पहने हुए एक लडकी दिखाई दी। उसकी अवस्था यही कोई १८ की रही होगी। नीचा माथा और लहराते हुए काले काले वाल। उसने मुझे अपना परिचय दिया। वह एक स्थानीय अध्यापिका थी। नाम था अलेक्सान्द्रा तिमोफेयेव्ना अथवा 'तिमोफेइका'। दस ही मिनट में हम गहरे दोस्त वन गये और मैंने उसके सामने वे सारी वाते कह डाली जिनका असर वहां मुझपर हुआ था। वह ज़मीदारिनो के स्कूल में पढ़ाती थी। स्कूल की उच्च कक्षा के विद्यार्थी परीक्षा की तैयारी कर रहे थे। इस कक्षा में पाच छात्र थे—इल्यूशा, सेन्या, मीत्या, वान्या और पावेल। मैं प्राय. वहां जाया करती, उनके साथ सवाल लगाती या पढती। कितना मज़ा आता था इन सव मे।

'तिमोफेइका' के कमरे में वालोपयोगी वहुत-सी पुस्तके थी। मैं इन पुस्तकों को जोड़-जाड कर ठीक करने में उसकी मदद करती थी। उसके यहां इतवारो को मेल-मुलाकाती आते—किशोर भी, जवान भी, और हम सव नेक्रासोव की रचनाएं पढ़ते। 'तिमोफेइका' हमें कहानियां सुनाती और मेरा यह अनुभव और भी दृढ हो जाता कि ज़मीदार खराव लोग है, वे कभी किसानो की मदद नहीं करते। उल्टे उन्हे लूटते है,

उनका शोषण करते हैं। इससे मेरा यह विश्वास भी पक्का हो जाता कि किसानो की मदद करनी चाहिए। मुझे कोस्यकोव्स्की लोग पसन्द न थे। वे अपनी शान ही में चूर रहते। उनकी मा हमेशा सफेद लिबास में रहती, दात दबा कर मिमियाती और नौकरो पर बरसा करती। मुझे उनकी ये आदते अच्छी न लगती।

जमींदारिन नजीमोवा और उसके कुत्ते

निकटवर्ती जागीर में हो आने के बाद से तो मुझे जमींदारो के प्रति और भी घृणा हो गई थी। इस जागीर में मैं, कोस्यकोव्स्की, 'तिमोफेइका' तथा उच्च कक्षा के उन पाचो विद्यार्थियो के साथ गई थी जिन्हें वहा अपनी परीक्षाएं देनी थी।

जागीर की मालकिन थी नजीमोवा। वह धनी थी इसलिए सभी उसकी चापलूसी में लगे रहते। जब गिरजे जाती तो पादरी का हाथ चूमने के बाद उसे २५ रूबल का नोट थमा देती और इसी लिए पादरी भी बिना उसके प्रार्थना आरम्भ न करता।

परीक्षाए स्कूल में हुई थी और पादरी तथा स्कूलो के एक इन्स्पेक्टर द्वारा ली गई थी। विद्यार्थी घबडा गये थे। इल्यूशा तो इतना डर गया था कि उसने 'श्ची'* तक के हिज्जे गलत कर दिये। मैं सह न सकी। मैंने सोचा कि जा कर उससे कह दू कि वह अपनी गलती ठीक कर ले। लेकिन 'तिमोफेइका' ने मुझे चुप रहने और हस्तक्षेप न करने के आदेश दिये। वह खुद परेशान थी। विद्यार्थियो ने परीक्षाए जल्द पास कर ली लेकिन इल्यूशा को अपने उस डर से छुटकारा पाने में बहुत समय लग गया था। वह पीला पड गया था और पत्ती की तरह कापता था। परीक्षा के बाद नजीमोवा ने हमें खाने पर बुलाया। यह देख कर तो मुझे बहुत ही

---

* रूस में इस्तेमाल किया जाने वाला पत्ता गोभी का शोरबा।—सं०

आश्चर्य हुआ कि उसके यहा ढेरो पालतू कुत्ते थे। वे कुर्सियो पर उछलते-कूदते और कमरे भर में दौड़ लगाते। जव हम मेज़ पर वैठे उस समय दो लड़किया आकर खड़ी हो गईं। उनके पैर नंगे थे। नज़ीमोवा ने पहले अपने कुत्तो के लिए शोरवा उड़ेला और लड़कियो ने हर कुत्ते के आगे एक एक प्लेट रख दी। उसके वाद खाना हमारे सामने आया। हर चीज़ में क्या शानोशौकत थी! वढिया खूवसूरत-सा वाग, वीच में तालाव और तालाव के चारो ओर गुलाव के वड़े वड़े फूल। फिर भी मेरा दिल वहा न लगा और जव घर वापस जाने का समय आया तो मैं वडी खुश हुई। मैंने सोचा, "'तिमोफेइका' ठीक कहती है कि विना ज़मीदारो के हमारा काम वड़े मज़े में चल सकता है, वड़ी आसानी से।" पिता से भी मैंने यही वात सुन रखी थी।

जव कभी 'तिमोफेइका' किसानो के लिए पुस्तके ले कर पास-पड़ोस के गावो में जाती तो मुझे भी अपने साथ ले लेती। वह किसानो से वाते करती, लेकिन मुझे उसकी सारी वाते समझ में न आती।

इसके वाद एक महीने के लिए 'तिमोफेइका' कही चली गई।

फ़ैक्ट्री के श्रमिको के साथ

इसी वीच पिता और मा फैक्ट्री के निकट रहने आ गये। मैं भी उनके साथ गई थी। फैक्ट्री कोस्यकोव्स्की की जागीर से लगभग एक मील दूर थी। वहा मेरी दोस्ती फैक्ट्री में काम करने वाले वहुत-से तरुणो से हो गई। (इल्यूशा भी वहां काम करता था।) मैं लपेटने के काम आने वाले कागज़ो के दस्ते और रीम वनाने में उनकी मदद करती। मेरी दोस्ती उस वूढे से भी हो गई जो फ़ैक्ट्री में इंधन लाया करता था। उसने मुझे गाड़ी में जुता हुआ अपना घोड़ा हांकने की अनुमति दे दी थी। मुझे यह काम वडा अच्छा लगता। हम गाड़ी पर जंगल में जाते। मैं गाड़ी लादने में वूढ़े की मदद किया करती। फिर

हम लोग गाड़ी के साथ साथ चहलक़दमी करते हुए फैक्ट्री चले आते और इंधन की लकड़िया गोदाम में डाल देते। मा और पिता मेरे इस उत्साह और मेरे खुरदरे हाथो को देख कर हसा करते।

वहा ऐसी स्त्रिया भी थी जो फैक्ट्री के निकट दिन भर एक सायवान के नीचे बैठी रहती और गंदे चीथडो को छाटते समय तरह तरह के गीत गाया करती। फटे-चिथडे, पुराने कपडे, नीली कमीजें आदि खास खास फेरीवालो से गावो में खरीदी जाती और फैक्ट्री में कागज़ बनाने के काम आती। मै भी स्त्रियो में मिल जाती। उनके साथ गाने गाती और चिथडे बीनती।

एक स्त्री ने मुझे एक पालतू खरगोश दे रखा था। वह घर में ज़ीने के नीचे रहा करता था। मेरा एक और अच्छा दोस्त था—एक दोगली नस्ल का कुत्ता कर्सोन। खाने के बाद मै उसकी प्लेट शोरबे, खट्टे दूध, हड्डियो और रोटी से भर देती और फिर उसे बुलाती। कर्सोन भागता हुआ चला आता और खाने पर टूट पडता।

आखिरकार जाने का समय आ गया। मुझे 'तिमोफेइका', जो उस समय तक वापस आ चुकी थी, बच्चो, बूढे गाडीवान, चर्ची मार्या और कर्सोन को छोडने का बडा अफसोस रहा। जब गाडी दरवाज़े पर लगी और हम सब उसमें बैठ गये तब कर्सोन आकर उसके नीचे लेट गया और हमें उसे खीच-खाच कर वहा से हटा कर ही अपनी गाडी आगे बढानी पड़ी।

जाडे में मुझे सूचना मिली कि भेडिये कर्सोन को खा गये। इससे मुझे बडा दुख हुआ। मै अक्सर 'तिमोफेइका' के बारे में भी पूछताछ किया करती। एक दिन पिता ने हमें बताया कि पुलिस ने उसके कमरे पर छापा मारा और कुछ निषिद्ध साहित्य तथा गिरफ्तारियों ने मरे हुए ज़ार की एक तस्वीर उठा ले गये। 'तिमोफेइका' ने सवाल हल करने के लिए इस तस्वीर को एक कागज के रूप में इस्तेमाल किया था। बाद

में मैंने सुना कि 'तिमोफेइका' को प्स्कोव जेल में दो वर्षों के लिए एक ऐसी काल-कोठरी में डाल दिया गया था जहां खिड़की तक न थी। वाद में मेरी उसकी मुलाकात कभी न हुई। उसका कुलनाम था यवोर्स्काया। उन दिनो जाड़े के मौसम में मै दर्जे में वैठी वैठी छोटे छोटे मकानो के चित्र वनाया करती और उनपर 'स्कूल' लिख कर एक साइनवोर्ड-सा लटका दिया करती।

इस प्रकार मै गांवो की अध्यापिका वनने के स्वप्न देखा करती। उन दिनों के वाद से मैं हमेशा ही गावों के स्कूलो में और गावो के वच्चो को पढ़ाने में दिलचस्पी लेने लगी।

पहली मार्च १८८१

क्रातिकारियो के प्रति मैं सहानुभूति कैसे न प्रकट करती!

मुझे पहली मार्च १८८१ की वह शाम अच्छी तरह याद है जव 'नरोदनया वोल्या' के सदस्यों ने अलेक्सान्द्र द्वितीय की हत्या की थी। उस दिन, पहले मेरे कुछ संवंधी आये थे। वे डरे हुए थे। उनके मुह से वोल तक न फूट रहे थे। इसके वाद मेरे पिता का एक पुराना सहपाठी, जो एक अफ़सर था, हाफता हुआ आया और हत्या का सारा व्योरा हमें सुना डाला, कैसे गाडी उड़ा दी गई, इत्यादि। "हाथ पर वाधने वाली पट्टी के लिए मैंने थोड़ा क्रेप खरीद लिया है," हमें क्रेप दिखाते हुए वह वोला। मुझे याद है कि मुझे यह देख कर वड़ा आश्चर्य हुआ था कि वह व्यक्ति ज़ार की मृत्यु पर शोकसूचक काला कपड़ा वाधने का कितना इच्छुक था। यह वही ज़ार था जिसकी उसने हमेशा आलोचना की थी। यह अफसर निहायत कंजूस था और इसी लिए मैंने भी सोचा, "अगर इसने क्रेप खरीदने में पैसा खर्च किया है तो जरूर ही वह सच कह रहा होगा।" उस रात मुझे जरा भी नीद न आई। मैं सोच रही थी, "अव ज़ार मर चुका है तो हर चीज़ वदलेगी। लोग आजाद होगे।"

लेकिन मेरी सोची हुई बात ठीक न निकली। हर चीज़ वैसी ही बनी रही जैसी कि चली आई थी, बल्कि उससे भी बदतर। पुलिस ने 'नरोदनया वोल्या' के सदस्यो को गिरफ्तार करना शुरू किया। ज़ार के हत्यारो को फांसी दे दी गई। फांसी के लिए वे लोग उसी रास्ते से ले जाये गये थे जिसपर मेरी पाठशाला पडती थी। शाम को मेरे चचा ने मुझे बताया था कि जब मिखाइलोव को फांसी दी जा रही थी उस समय रस्सा खुद चर्र से टूट पडा था।

हमारे कई क्रान्तिकारी दोस्तो को भी नज़रबन्द कर दिया गया। सामाजिक क्रियाशीलता ठप हो गई।

अध्ययन

पहले पहल मैंने पढाई-लिखाई घर पर ही शुरू की। उस समय मा ही मेरी अध्यापिका थी। मैंने बहुत छुटपन से ही पढना शुरू कर दिया था। मुझे पुस्तके प्यारी थी क्योकि वे मेरे लिए एक नयी दुनिया का निर्माण करती थी। और मै एक के बाद दूसरी, और फिर तीसरी, किताब खत्म करने लगी।

मै पाठशाला जाने की इच्छुक थी, लेकिन जब मैंने दस वर्ष की उम्र से वहा जाना शुरू किया तो वह मुझे अच्छी न लगी। दर्जा बडा था—वहा हम लगभग पचास विद्यार्थी थे। मै बहुत ही शर्मीली लडकी थी और बात बात में परेशान हो उठती। किसी ने भी मेरी ओर कोई ध्यान न दिया। अध्यापक हमें काम देते, नाम ले ले कर पुकारते, पाठ दुहरवाते और अक देते। प्रश्न पूछना कायदे के खिलाफ था। हमारे दर्जे की अध्यापिका बेईमानी से काम लेती—उन धनी लडकियो की लल्लो-चप्पो करती जो अपनी अपनी गाडियो मे बैठ कर स्कूल आया करती थी, और गरीबो जैसे कपडे पहने हुई लडकियो पर भौंकती और उनमें नुक्स निकाला करती। लेकिन वहा एक चीज़ इससे भी ज्यादा थी–

लड़कियो में परस्पर मित्रता न थी और इसी कारण मेरा जी भी खिन्न हो उठता और मैं अकेलापन महसूस करने लगती। मैं बड़ी मेहनत से पढती, और दूसरी लडकियो से तेज थी। लेकिन दर्जे में मैं अपने पाठो को ठीक ठीक न पढ पाती क्योकि मेरे दिमाग में तो दूसरी वाते घूमा करती थी।

पिता ने देखा कि मुझे वह पाठशाला अच्छी नही लगती। फलत उन्होने मुझे दूसरी ओवोलेस्की प्राइवेट पाठशाला में भेज दिया।

वहा की वात दूसरी थी। वहा हमपर न कोई चीखता, न चिल्लाता। वहां के वच्चो को काफी आजादी मिली हुई थी। वे खुश थे। वहां मेरे वहुत-से दोस्त वन गये। वहा मेरा पढ़ने में भी मन लगा। उस पाठशाला की सुखद स्मृतियां आज भी मेरे दिमाग में चक्कर लगा रही हैं। इस पाठशाला से मैंने वहुत कुछ सीखा था। इसी ने मुझे काम करना सिखाया था और इसी की वजह से मैं सार्वजनिक कार्यकर्त्री भी वन सकी थी।

गुजर-वसर के साधन

पिता मेरे सव से वड़े मित्र थे। उनसे मैं अपने दिल की सारी वाते कह सकती थी। वे चल वसे उस समय जव मेरी उम्र सिर्फ चौदह की थी। अव मा और मैं अपने परिवार में ये ही दो प्राणी रह गये। मां का स्वभाव वडा मधुर था। वे उत्साही थी लेकिन मुझे हमेशा वच्ची ही समझती रही। लेकिन मैं थी कि आत्मनिर्भर एवं स्वतंत्र होने की ही वात सोचा करती। हां जव उन्होने मुझे अपने वरावर का समझना शुरू किया तो हम दोनो सहेलियां भी वन गईं। लेकिन ऐसा काफी समय वाद हुआ था। वे मुझे वहुत प्यार करती और हम वड़े सुख से रहती-वसती। वे मेरे क्रान्तिवादी कार्यो से सहानुभूति प्रकट करती और मेरी मदद करती। पार्टी के जो साथी मुझसे मिलने आते वे मां को खूव चाहते। वे भी किसी को भूखा न लौटने देती और हर शख्स का ध्यान रखती। जव पिता

की मृत्यु हो गई तो गुजर-बसर की जिम्मेदारी भी हमारे ही कन्धो पर आ पडी। मैं पढाने का काम करने लगी। मैं और मा कुछ लिखा-पटी का काम कर लेती। फिर हमने एक बड़ा मकान किराये पर लिया और उसके कमरे किराये पर दिये। हमारा सम्पर्क सभी तरह के लोगो से रहा—विद्यार्थी, बुद्धिजीवी, टेलीफोन आपरेटर, दर्जिने, डाक्टरो के सहायक आदि। चूकि मैं पाठशाला में प्रथम रहा करती थी इसलिए पाठशाला की सिफारिश से मुझे पढाने का काम मिल गया। यह काम कोई सुखकर न था। धनी लोग अध्यापिकाओ को हेय दृष्टि से देखते और उनके अध्यापन-कार्यों में बाधाए डालते। स्नातक बनने के बाद मैंने स्कूली अध्यापिका होने के स्वप्न देखे थे लेकिन मुझे कोई जगह न मिली।

कोई चारा नहीं

उन दिनो मुझे लेव तोलस्तोय पढना बहुत भाता था। उसने विलासिता और काहिली का जीवन व्यतीत करने वालो की कडी निन्दा की थी, देश के तत्कालीन प्रशासन की आलोचना की थी और यह दिखाया था कि जमीदारो और धनियो के जीवन को सुखद और समृद्ध बनाने के लिए क्या क्या किया जा रहा था। उसने यह उल्लेख भी किया था कि किस प्रकार हाड-तोड मेहनत के कारण श्रमिक मरे जा रहे है और किसान खेतो में जी तोड काम कर रहे हैं। तोलस्तोय हर चीज का स्पष्ट एव सजीव विवरण प्रस्तुत करना खूब जानता था। मैंने अपने चतुर्दिक होने वाली घटनाओ पर सोचा-विचारा था और अनुभव किया था कि उसने जो कुछ भी लिखा है वह बिल्कुल ठीक है। उन [illegible] के आधार से मैंने क्रान्तिवादी सघर्ष को एक दूसरी ही दृष्टि से देखा था और उसके कारणो की गहराई में भी प्रवेश किया था। लेकिन किया क्या जाए? भ्रष्ट अधिकारियो और जारो की हत्या तथा आतंक से [illegible] नही हो सकती। तोलस्तोय ने मार्गदर्शन किया था—अब [illegible]

थी मेहनत करने की और आत्म-विकास की। मैंने घर-गृहस्थी के काम शुरू कर दिये। गर्मियो में मैं किसानो की तरह खेतो में काम करती। विलासिता के जीवन को मैंने तिलांजलि दे रखी थी। अब मैंने लोगो की ओर अधिक ध्यान देना शुरू किया। उनकी बाते बड़े संयम के साथ सुनी। लेकिन शीघ्र ही मुझे मालूम हो गया कि मैं चाहे भी जो कुछ क्यो न करूं इससे न तो वस्तु-स्थिति में ही परिवर्तन होगा और न अन्याय ही मिटेगा। यह ठीक है कि मैंने किसानो के रहन-सहन के तरीके देखे थे और यह सीखा था कि किसानो और श्रमिको के साथ मृदुता से कैसे बातचीत करनी चाहिए। मगर इससे भी क्या लाभ हो सकता था? मैंने सोचा था कि रहन-सहन की दशाओ को बदलने और शोषण को निर्मूल करने की शिक्षा मुझे उच्च शिक्षा-संस्था में मिलेगी।

उन दिनों न तो यूनिवर्सिटियो में ही स्त्रियो को भर्ती किया जाता था और न उच्च शिक्षा की अन्य संस्थाओ में ही। ज़ारीना का कहना था कि स्त्रियों को घर पर रहना चाहिए और पढ़ने के बजाय अपने पतियो और बच्चो की देखरेख में लगना चाहिए। स्त्रियो के चिकित्सा-पाठ्यक्रमो और उच्चतर कोर्सो को बन्द करने के आदेश दे दिये गये थे। इसलिए मुझे खुद ही अपनी पढ़ाई-लिखाई चलानी पड़ी और मैंने इस ओर यथासम्भव अधिक से अधिक ध्यान दिया।

कुछ समय बाद पीटर्सबर्ग में स्त्रियो के उच्चतर कोर्स फिर आरम्भ हो गये। मगर उन्हे देख कर तो बहुत अधिक निराशा होती थी। दो ही महीनो के भीतर मुझे मालूम हो गया कि जो कुछ भी मैं जानना चाहती हूं उसकी शिक्षा कभी न ग्रहण कर सकूगी क्योंकि इन कोर्सो में जो भी बताया जाता था उसका वास्तविक जीवन से कोई मेल न था।

उस समय जमाना और था। सामाजिक समस्याओं पर न तो अच्छी पुस्तकें ही थीं, और न सभाएं ही होती थीं। श्रमिक संघटित न थे। उनकी अपनी कोई पार्टी भी न थी। यद्यपि मैं बीस साल की हो चुकी थी फिर भी मार्क्स के बारे में कुछ न जानती थी। श्रम आन्दोलन या कम्यूनिज्म का तो नाम भी मैंने न सुना था।

उन दिनों विद्यार्थी आन्दोलन अपनी शैशवावस्था में था। एक दिन मुझे एक विद्यार्थी-मंडल का निमंत्रण मिला और उनसे मेरी आंखें खुल गईं। मैंने कोर्सों में जाना बन्द कर दिया और मार्क्स और दूसरी जरूरी किताबें पढने लगी। मैंने समझ लिया था कि सिर्फ श्रमिकों का क्रान्तिवादी आन्दोलन ही जीवन को एक नया मोड दे सकता है और यदि कोई सचमुच जनता के लिए उपयोगी बनना चाहता है तो उसे श्रमिकों की भलाई के लिए अपनी बलि देनी होगी।

वसन्त ऋतु में मैंने अपने एक दोस्त से मार्क्स की 'पूंजी' और दूसरी उपयोगी पुस्तकें ला देने का अनुरोध किया। उन दिनों सार्वजनिक पुस्तकालय तक में मार्क्स की पुस्तकें न मिल सकती थीं। फिर उन्हें इधर-उधर से जुटाना तो एक बडी ही टेढी खीर थी। 'पूंजी' के अलावा मुझे न० सीबर की 'आदिकालीन आर्थिक संस्कृति सम्बन्धी लेख', व० व० (व० प० वोरोनत्सोव) की 'रूस में पूंजीवाद का भविष्य' और येफीमेन्को की 'उत्तर की खोज' नामक पुस्तकें भी मिल गई थीं।

उसी वर्ष वसन्त के आरम्भ में मैंने तथा मां ने गांव में एक छोटा-सा मकान किराये पर लिया। मैं इन पुस्तकों को अपने साथ ले गई। गर्मी भर मैंने अपने मालिक मकान—स्थानीय किसान—की सहायता की। उसके पास काम करने के लिए काफी लोग न थे। मुझे [illegible]

नहलाना-धुलाना पड़ता, शाक-सब्जियो के वाग में बुग्राई ग्रादि करनी होती, घास इकट्ठी करनी होती ग्रौर फस्ल काटनी होती। उन दिनो ग्राम-जीवन मेरे ग्राकर्षण का केन्द्र बन रहा था। प्राय ग्राधी रात को मेरी ग्राख खुल जाती ग्रौर मुझे चिन्ता होने लगती कि कही घोड़ो ने जई के खेत को तो नही रौद डाला है। ग्रपने खाली समय में मैं बडे मनोयोग के साथ 'पूजी' पढा करती। पहले दो ग्रध्याय समझने में वड़ी कठिनाई हुई, लेकिन उसके ग्रागे के ग्रध्याय ग्रासानी से समझ में ग्रा गये। यह ग्रध्ययन ऐसा लगता जैसे वसन्त ऋतु का पानी पिया जा रहा हो। मैंने ग्रनुभव किया कि तोलस्तोय का ग्रात्म-विकास का सिद्धान्त भी समस्या का सही हल नही है। समस्या का हल था एक सशक्त श्रम ग्रान्दोलन।

एक दिन सायकाल मैं दालान में वैठी ये पक्तिया पढ रही थी: "पूजीवाद ग्रपनी ग्राखिरी घड़िया गिन रहा है। स्वामित्वहरण करने वालो का स्वामित्व हरण किया जा रहा है।" मेरा दिल धडकने लगा ग्रौर यह धड़कन मुझे साफ सुनाई देने लगी। मैं ग्रपने ही विचारो में इतनी तल्लीन थी कि मालिक के वच्चे के साथ मेरे पास वैठी हुई युवती नर्स क्या कह गई मेरी समझ में न ग्राया: "हम उसे श्ची कहते है तुम कहती हो शोरवा, हम उसे नाव कहते है ग्रौर तुम तरणी, हम उसे पतवार कहते है ग्रौर तुम क्या कहती हो भगवान जाने।" ग्रौर वह मेरी चुप्पी से परेशान हो कर न जाने क्या क्या वकती गई। क्या तव मैं यह जानती थी कि मैं "स्वामित्वहरण करने वालो के स्वामित्वो का हरण होते हुए" देखने के लिए जीवित रहूगी। उन दिनो इस प्रश्न में मेरी कोई दिलचस्पी न थी। वस, लक्ष्य स्पष्ट था ग्रौर उस लक्ष्य को प्राप्त करने का मार्ग भी वैसा ही स्पष्ट, वैसा ही साफ था। ग्रौर उसके वाद से यत्र-तत्र श्रमिक ग्रान्दोलन की मुठभेड़ें सुनाई पडने लगी—१८९६ में (पीटर्सवर्ग की सूती वस्त्र मिल की हड़ताल), ९ जनवरी को, १९०३—१९०५,

१९१२ (लेना नदी का हत्याकाड)* और १९१७ में—मै पूजीवाद की मौत की घडी के बारे में सोच रही थी, जो तेज, और तेज, बढ़ती ही चली आ रही है। मैंने सोवियतो की दूसरी कांग्रेस में भी इसके बारे में सोचा विचारा था उस समय जब भूमि और उत्पादन के साधन जनसम्पत्ति घोषित किये जा चुके थे। अन्तिम लक्ष्य प्राप्त करने के पूर्व अभी कितनी बाधाए पार करनी थी। क्या मै अन्तिम बाधा देखने के लिए जीवित रहूगी? मै नही जानती थी। उसे मैं जरूरी भी नहीं समझती थी। हम जानते थे कि हमारे स्वप्न का साकार हो सकना सम्भव है और इसमें विलम्ब की कोई गुजाइश नही। सभी इसे आसानी से समझ सकते है। हमारे स्वप्न फलीभूत होंगे ऐसा प्रत्यक्ष दिखाई पड रहा था। पूजीवाद अन्तिम सासे ले रहा था।

नेवस्काया जस्तावा

मै तीन वर्षो तक मडल की मीटिगो में गई। वहा मैंने बहुत कुछ देखा, अनुभव किया। चीजो को देखने का मेरा दृष्टिकोण बदल रहा था। लेकिन सिर्फ जानना ही तो काफी न था। मै काम करना चाहती थी, उपयोगी बनना चाहती थी। विद्यार्थियो और श्रमिको के सम्पर्क बालू की भित्ति थे। श्रमिको के साथ उठने-बैठने के कारण विद्यार्थियो को तग किया जाता था। जारशाही हुकूमत ने उन दोनो के बीच एक पत्थर की दीवार खडी करने की कोशिश की थी। इसलिए जब कभी विद्यार्थियो को श्रमिको के साथ बातचीत करने के लिए जाना होता तो उन्हे अपना हुलिया बदलना

---

*४ अप्रैल १९१२ को जारशाही सरकार ने साइबेरिया की लेना नदी की सोने की खानो के श्रमिको की हत्या की थी। रूसी सर्वहारा वर्ग ने इस हत्याकाड का जवाब बडी बडी राजनीतिक हडतालो और प्रदर्शनो द्वारा दिया था और इन्ही हडतालो और प्रदर्शनो से १९१२-१४ में एक नये क्रान्तिवादी सघर्ष का सूत्रपात किया था।—स०

होता। विद्यार्थियो और श्रमिको के वीच जो सम्पर्क था वह नगण्य था। इसलिए मैंने नेवस्काया जस्तावा से कुछ दूर स्मोलेन्स्कोये ग्राम में एक रविवारीय सन्ध्या स्कूल में अध्यापिका वनने का निश्चय किया। (नेवस्काया ज़स्तावा का नाम आजकल वोलोदार्स्की जिला पड़ गया है।)

स्कूल काफी वडा था। वहा कोई ६०० विद्यार्थी थे जिनमें मैक्सवेल, पाल, सेम्यान्निकोव और दूसरी मिलो के श्रमिक थे। मैं वहां प्राय प्रतिदिन जाती थी।

मैंने स्कूल में लोगो के साथ घनिष्ठता स्थापित की, श्रमिको से परिचय प्राप्त किया और उनके जीवन का अध्ययन किया। उन दिनो के विनियम वड़े कठोर होते थे। एक दौरा-इन्स्पेक्टर ने एक रिफ्रेशर कोर्स महज इसलिए वन्द कर दिया कि वहा के विद्यार्थी पाठ्यक्रम में निर्दिष्ट जोड-वाकी के वजाय सही-वटो के सवाल लगाया करते थे, एक श्रमिक को इसलिए निर्वासित कर दिया गया कि उसने, मैनेजेर के साथ वातचीत में 'श्रमसाधिता' शब्दो का इस्तेमाल किया था। और फिर भी इस स्कूल में काम किया जा सकता था क्योंकि यहां हर कोई हर कुछ कह सकता था वशर्ते कि वह 'जारशाही', 'हडताल', 'क्रान्ति' जैसे शब्दो का प्रयोग न करे। अगले वर्ष स्कूल में और भी अधिक मार्क्सवादी भरती हो गये थे। हमने अपने विद्यार्थियो को, विना मार्क्स का नाम वताये हुए, मार्क्सवाद पढाने का प्रयत्न किया। मुझे यह देख कर आश्चर्य होता था कि मार्क्सवादी दृष्टिकोण से वातचीत करते समय श्रमिको को कठिन से कठिन विषय समझाना भी कितना आसान हो जाता था। वातावरण मार्क्सवाद सीखने के अनुकूल वनता जा रहा था। यदि पतझड़ के दिनो में किसी गाव से कोई छोकरा आ जाता, तो पहले तो, 'भूगोल' या 'व्याकरण' के घटे में अपने कान वन्द कर लेता और रुदाकोव के पुराने और नये टेस्टामेन्ट* पढ़ा करता, फिर वसन्त आते

---

*वाइविल के दो भाग।—सं०

आते, स्कूल बन्द होने के बाद, मंडल की बैठक के लिए भागा जाता और अगर पूछा जाता कि वह जा कहां रहा है तो बड़ी [illegible] हंस देता। ‘भूगोल’ के घंटे में अगर कोई श्रमिक यह कहे कि “दस्तकारियां बड़े बड़े उत्पादनों की प्रतिद्वन्द्विता नहीं कर सकतीं” या यह पूछ बैठे कि “अर्खांगेल्स्क मुजीक (किसान) और इवानोवो-वोज्नेसेन्स्क श्रमिक में क्या फर्क है?” तो यह आसानी से समझा जा सकता है कि वह मार्क्सवादी मंडल का सदस्य है और इन वाक्यों का अर्थ समझता है। ये वाक्य दोस्तों में सम्पर्क स्थापित करने के लिए निर्देश-चिह्न होते थे। इनका प्रयोग करने वाला आपका स्वागत कुछ ऐसे ढंग से करता मानो आपसे कह रहा हो “आप हमीं में से एक हैं।” और जो लोग मंडल की बैठकों में नहीं जाते थे और “अर्खांगेल्स्क मुजीक और इवानोवो-वोज्नेसेन्स्क श्रमिक का फर्क” नहीं जानते थे खुद वे लोग भी हमारी इज्जत करते और हमारे साथ बड़े स्नेह से पेश आते।

“आज पुस्तकें मत बांटें,” एक दिन मेरे एक विद्यार्थी ने मुझे चेतावनी दी (ये पुस्तकें प्रायः पुस्तकालय से आती थीं), “आज यहां कोई नये साहब बैठे हैं। पहले वे कोई साधू-संन्यासी थे। कौन जाने वे कौन हों। हम उनके बारे में बाद में कुछ और जान जायेंगे ”

“जब वह काला-सा आदमी इधर उधर घूम रहा हो तो आप कुछ न कहा करें,” एक अधेड़ श्रमिक मुझे सचेत कर देता, “उसका संबंध खुफिया पुलिस से है।”

एक विद्यार्थी को सैनिक सेवा के लिए बुलावा आ पहुंचा। विदा[illegible] से दो-एक दिन पूर्व वह अपने एक दोस्त को लाया जो पुतिलोव [illegible] में काम करता था।

“उसके लिए रोज शाम को यहां आना बड़ा कठिन है क्योंकि [illegible] दूर रहता है। लेकिन ‘भूगोल’ पाठ के लिए वह रविवारों को [illegible]।’

मैंने उस स्कूल में पाच साल तक पढ़ाया और फिर जेल भेज दी गई।

इन पाच वर्षों में मार्क्सवाद सबंधी मेरे ज्ञान का विकास हुआ और मैं हमेशा के लिए श्रमिक वर्ग के साथ बंध गई।

इसी बीच सक्रिय मार्क्सवादियो ने एक संघटन की स्थापना की जो पहले बड़ा कमज़ोर लग रहा था। वे अपने को सामाजिक-जनवादी कहते थे ठीक वैसे ही जैसे कि जर्मनी की श्रमिक पार्टी के लोग अपने को कहा करते थे। व्लादीमिर इल्यीच लेनिन १८९४ में पीटर्सबर्ग पहुचे और वहा के कार्यों में जान आ गई। संघटन और मज़बूत हुआ। मै और व्लादीमिर इल्यीच एक ही जिले में काम करते थे। शीघ्र ही हम गहरे दोस्त बन गये। पत्रको की सहायता से हमारे सघटन ने व्यापक संघर्ष के बीज बो दिये। हम अवैध पैम्फ्लेट निकालने लगे। हमारा विचार एक लोकप्रिय किन्तु अवैध पत्रिका निकालने का भी था। जैसे ही इस सबध में सारे कार्य प्रायः पूरे हुए कि व्लादीमिर इल्यीच और उनके साथियो को गिरफ़्तार कर लिया गया। सघटन के लिए यह एक बहुत बड़ा आघात था। लेकिन हमने अपनी शक्ति जुटाई और हम पत्रको का प्रकाशन करते रहे। अगस्त १८९६ में हमने बुनकरो में हडताल कराने का आन्दोलन किया और इसे एक संघटित ढग पर चलाने में बुनकरो की सहायता की। हड़ताल के बाद बहुत-से लोग गिरफ़्तार किये गये। मै भी उनमें से एक थी। निर्वासन काल में मैंने व्लादीमिर इल्यीच से विवाह कर लिया। उसके बाद मेरा जीवन उनके जीवन से बंध गया। जहां तक मुझसे हो सकता था मैंने उनके कामो में सहायता की। इसके बारे में चर्चा करने के माने यह है कि मै आपको व्लादीमिर इल्यीच के जीवन और कार्यों की कहानी सुनाऊं। जिन वर्षों में मुझे देश से बाहर रहना पड़ा था उनमें मेरा मुख्य कार्य रूस के साथ सम्पर्क स्थापित करना था। १९०५-१९०७ में मै केन्द्रीय समिति की सेक्रेटरी थी। १९१७ के बाद से मै लोक-शिक्षा

के कार्यो में व्यस्त रही हूं। मुझे अपना काम प्रिय है और मैं उसे वहुत महत्वपूर्ण समझती हूं। अक्तूवर क्रान्ति को सफल वनाने के लिए यह जरुरी है कि श्रमिक और किसान ज्ञान प्राप्त करें। विना इसके किसान, सचेतन रूप से, श्रमिक वर्ग का अनुसरण न कर सकेंगे और न इतनी तेजी से सामूहिक खेतो में एक दूसरे के साथ मिल-जुल कर काम ही कर सकेगें। लोक-शिक्षा विषयक मेरा कार्य पार्टी के प्रचार कार्य से संवद्ध है और यह सवध निकट का है।

पुनश्च

यह मेरा सौभाग्य है कि मैंने श्रमिक वर्ग की वढती हुई शक्ति देखी है, पार्टी को उन्नति करते हुए देखा है, दुनिया भर की सवसे वडी क्रान्ति देखी है, एक नये समाजवाद का जन्म देखा है और देखा है मानव जीवन का पूर्णत पुनरुद्धार होते।

मुझे इस वात का हमेशा दुख रहा कि मेरे अपने कोई वच्चे नहीं। लेकिन अव मुझे कोई दुख नही। मेरे तो वहुत-से वच्चे हैं—कम्यूनिस्ट लीग के तरुण सदस्य, तरुण पायोनियर, सभी तो। वे सभी लेनिनवादी है, सभी लेनिनवादी वनना चाहते है।

अपने तरुण पायोनियरो के अनुरोध से ही मैंने यह आत्मकथा लिखी है।

और यह आत्मकथा मैं उन्ही को समर्पित करती हू अपने उन्हीं प्यारे प्यारे वच्चो को।

व्ला० इ० लेनिन से संबंधित लेख

इल्यीच का बचपन तथा प्रारम्भिक वर्ष

व्लादीमिर इल्यीच के बचपन के बारे में लिखते समय मैं मुख्यतया उन्ही बातो का उल्लेख करूगी जो उन्होंने मुझे हमारे वैवाहिक जीवन के दौरान में बताई थी। यह ठीक है कि क्रान्तिकारी कार्यों मे लगे रहने के कारण उन्हें अपने विगत जीवन पर प्रकाश डालने का अवसर कम मिलता था फिर भी हम थे तो एक ही पीढी के (मैं उनसे एक वर्ष बडी थी); और न्यूनाधिक एक ही वातावरण में बडे भी हुए थे। हम इस वातावरण को विभिन्न प्रकार के बुद्धिजीवियो का वातावरण कह सकते है। उन्होंने हमें समय समय पर अपने बारे में जो थोडी-सी बाते बताई थी उनसे मै बहुत कुछ समझ सकती थी।

व्लादीमिर इल्यीच वोल्गा पर स्थित सिम्बीर्स्क नगर में २२ अप्रैल १८७० को पैदा हुए थे। वे वहा १७ वर्ष की उम्र तक रहते रहे। सिम्बीर्स्क एक गुबेर्निया का नगर था और आज जब हम उन दिनो के सिम्बीर्स्क की सडको, मकानो तथा वातावरण के नक्शे देखते है तो हमें ऐसा लगता है कि वह स्थान बडा शान्तिपूर्ण रहा होगा। उस समय वहा न तो कोई कल-कारखाने थे और न कोई रेलवे लाइन ही। रेडियो तथा टेलीफोन की तो बात ही क्या।

इल्यीच का वास्तविक नाम उल्यानोव था। लेनिन नाम तो उन्होंने वहुत वाद में उस समय अपनाया था जब वे क्रांतिकारी हो चुके थे और जव उन्होंने लेखादि लिखना आरम्भ कर दिया था। नाम वदलने का मुख्य कारण यह था कि उन्हे प्राय. अपने गुप्त कार्यों के लिए एक कल्पित नाम का सहारा लेना पडता था। अब लेनिन की यादगार में सिम्वीर्स्क नगर का नाम उल्यानोव्स्क पड़ गया है। आज उल्यानोव्स्क शिक्षा का एक केन्द्र है जहां वहुत से विद्यार्थी अध्ययन करते हैं। वहां लेनिन संग्रहालय की भी एक शाखा है।

व्लादीमिर इल्यीच के पिता इल्या निकोलायेविच आस्त्राखान के एक मध्यम श्रेणी के परिवार के व्यक्ति थे। वे गरीवी में गुज़र-वसर करते थे इसी लिए शिक्षा का मार्ग उनके लिए अवरुद्ध था। ७ वर्ष की अवस्था में वे अनाथ हो गये थे और उनके भरण-पोषण का भार उनके वड़े भाई के कन्धो पर पड़ गया था, जिन्होंने उन्हे पढाने-लिखाने में अपनी सारी पूंजी लगा दी थी। इल्या निकोलायेविच प्रतिभाशाली तथा स्वभाव से परिश्रमी व्यक्ति थे। इसी कारण उन्होंने अपने जीवन में वडी तरक़्क़ी की थी। वे पाठशाला के स्नातक थे और वाद में कज़ान विश्वविद्यालय में भी दाखिल हुए थे। विश्वविद्यालय का पाठ्यक्रम उन्होंने १८५४ में पूरा किया था। तत्पश्चात् वे कुलीन लोगो के पेन्ज़ा कालेज में भौतिकशास्त्र के और गणित के अध्यापक हुए। इसके वाद उन्होंने निज्नी-नोवगोरोद में लड़को और लड़कियों की पाठशालाओ में भी कार्य किया। वाद में वे पहले सिम्वीर्स्क की सार्वजनिक पाठशालाओ के इन्स्पेक्टर और अन्ततः डाइरेक्टर वना दिये गये। इल्या निकोलायेविच ने कज़ान विश्वविद्यालय में उस समय स्नातक परीक्षा पास की थी जव क्रीमिया का युद्ध अपनी चरम सीमा पर था। इस युद्ध ने यह बात पूर्ण रूप से स्पष्ट कर दी थी कि कम्मीगिरी की प्रथा अत्यधिक भ्रष्ट है और निकोलाई प्रथम के अधीन ज़ारशाही क्रूरता की सीमा पार कर चुकी थी।

यह वह काल था जबकि कम्मीगिरी की कड़ी आलोचनाएं की जाती थीं। परन्तु अभी तक क्रान्तिकारी आन्दोलन को कोई बल नहीं मिला था।

इल्या निकोलायेविच की प्रतिभा तथा उनके स्वभाव की जानकारी के लिए 'सोव्रेमेन्निक'* नामक पत्रिका पढ़ना चाहिए। इस पत्रिका का सम्पादन नेक्रासोव तथा पनायेव ने संयुक्त रूप से किया था तथा इसमें बेलीन्स्की, चेरनिशेव्स्की तथा दोब्रोलूबोव ने अपने अपने लेख प्रकाशित करवाये थे। व्लादीमिर इल्यीच तथा उसकी सबसे बड़ी बहन आन्ना प्रायः बताया करती थी कि इल्या निकोलायेविच नेक्रासोव की कविताओं को कितना पसन्द करते थे। अध्यापक के रूप में दोब्रोलूबोव की कृतियां वे विशेष रूप से पढ़ा करते थे। उस काल में अध्यापन का पेशा कम्मीगिरी के विरुद्ध मोर्चा संघटित करने का एक अखाड़ा था। १८५६ में व्ला० दाल ने जिसने 'महान जीवित रूसी भाषा का कोष' का संकलन किया था, कृषकों के मध्य अपनाई जाने वाली शिक्षा-पद्धति का तीव्र विरोध किया था। स्कूलों में बूर्सा पद्धति** के अनुसार शिक्षा दी जाती थी। स्वयं पाठशालाओं में भी, जहां समृद्ध लोगों तथा अधिकारियों के बच्चों को ही शिक्षा मिलती थी, बेंत लगाने की प्रथा आम तौर से प्रचलित थी।

हम सब जानते हैं कि उन दिनों दोब्रोलूबोव ने कम्मीगिरी के ज़माने में दी जाने वाली शिक्षा-प्रणाली के खिलाफ कितनी सख्त आवाज़ उठाई थी। १८६१ में, २५ वर्ष की अवस्था में उसकी मृत्यु हो गई। १८५७ में प्रकाशित उसके 'शिक्षा के क्षेत्र में अधिकार का महत्व' शीर्षक लेख

---

*'सोव्रेमेन्निक'—एक प्रगतिशील, सामाजिक एवं राजनीतिक मासिक पत्रिका, जिसकी संस्थापना पुश्किन ने, १८३६ में, पीटर्सबर्ग में की थी।—स०

**बूर्सा—ज़ारकालीन रूस की एक धार्मिक शिक्षण संस्था जिनकी विशेषताएं थी—सख्ती करना, दंड देना और क्रूरता बरतना।—स०

में कम्मीगिरी की प्रथा के अधीन स्कूलो में व्याप्त गुलामी की दशाओ में अध्यापक के अधिकार की तुलना उस अधिकार से की गई थी जो किसी ऐसे अध्यापक को मिला हो जिसने अपने विद्यार्थियो का सम्मान पाया हो। दोब्रोलूबोव ने अपने लेख में विश्वास उत्पन्न करने के सबंध में पिरोगोव का उद्धरण दिया था जो इस प्रकार है: "... किसी व्यक्ति में विश्वास आसानी से नही उत्पन्न किया जा सकता। विश्वास केवल उन्ही व्यक्तियो में पैदा हो सकता है जिन्हें बाल-काल से ही स्वयं अपना सूक्ष्म निरीक्षण करने की शिक्षा मिली हो, जिन्हें बचपन से इस बात की शिक्षा मिली हो कि सत्य क्या है, ईमानदारी के साथ उसे किस प्रकार व्यवहार में लाया जा सकता है और उन्हें अपने अध्यापकों तथा स्कूल के साथियों के साथ किस प्रकार खुल कर तथा निष्कपटता से बर्ताव करना चाहिए।" दोब्रोलूबोव ने आगे कहा है कि "प्राय. विद्यार्थियो को अध्यापको के विद्याभिमान के कारण नुक्सान उठाना पड़ता है। अध्यापक होने के नाते वह विद्यार्थी को अपनी ऐसी निजी वस्तु समझने लगता है जिसके साथ इच्छानुसार कोई भी सुलूक किया जा सकता है।" परन्तु ऐसा करने में "वह एक आवश्यक बात भूल जाता है– जिन बच्चो को वह शिक्षा दे रहा है उनका वास्तविक जीवन और उनका स्वभाव..." इस लेख में दोब्रोलूबोव ने इस बात की बड़े तीव्र शब्दो में भर्त्सना की थी कि विद्यार्थियो को गुलामो और अधो की भाति अध्यापको की अधीनता में क्यो रखा जाता है? उसने लिखा था, "क्या यह बताने की भी कोई ज़रूरत है कि बिना शर्त आज्ञा पालन कराने की ज़िद से बच्चे के आचरण का स्वाभाविक विकास कितना अवरुद्ध हो जाता है।"

इसी लेख में दोब्रोलूबोव ने कहा था कि यदि बिना शर्त आज्ञा पालन वाली बात पर दृष्टि डाली जाय तो यह आवश्यक है कि अध्यापक भी सर्वथा निर्दोष होना चाहिए। उसने लिखा था: "यदि हम यह मान भी ले कि अध्यापक सदा ही विद्यार्थी के व्यक्तित्व से ऊपर रहेगा

(परन्तु ऐसा सदा नही होता) तो वह समस्त पीढी से तो ऊपर नही उठ सकता। बच्चे को नये वातावरण में रहना है। उसके जीवन-यापन की दशाए वही नही होगी जो २०-३० साल पहले थीं जब स्वय उसका अध्यापक विद्यार्थी के रूप में पढ रहा था। साधारण अध्यापक नये युग की आवश्यकताओ का न केवल पूर्वानुमान ही नही कर सकता अपितु उन्हे समझ भी नही पाता और उन्हे बेकार की चीज़ मान लेता है।"

इस लेख में दोब्रोलूबोव ने शल्य-चिकित्सक तथा शिक्षक प्रोफेसर पिरोगोव के सुविचारो को अपनाये जाने पर जोर दिया था। परन्तु जब प्रतिक्रियावादियो से प्रभावित हो जाने के बाद पिरोगोव ने इस बात पर ज़ोर दिया कि शान्ति और व्यवस्था के प्रति सम्मान की भावना पैदा करने के निमित्त विद्यार्थियो को सज़ा दी जानी चाहिए (जिसमें बेंत लगाने और स्कूल से निकाले जाने की सज़ा भी सम्मिलित है) तो दोब्रोलूबोव ने अपनी पूरी शक्ति से उसका भी विरोध किया था।

नेक्रासोव ने, जिनकी रचनाओ के शौकीन लेनिन के पिता, इल्या निकोलायेविच थे, 'दोब्रोलूबोव की स्मृति में' एक कविता लिखी थी जिसका भाव इस प्रकार था—

कभी न पूरी की इच्छाए अपने मन की,
तुम स्वदेश को प्यार रहे करते नारी सा—
अपनी चाहे,
अपनी कला,
और श्रम-कौशल जैसे उसपर वार दिया था,
शुद्ध और निर्मल आत्माए
तुमने कर दी एकत्रित मा के मंदिर में,
और त्रस्त, संतप्त देश का आवाहन कर
स्वप्न कि सौंपे नव-जीवन के,
सुख-समृद्धि के,

स्नेह-प्यार के,
और, अलौकिक-स्वतन्त्रता के।
किन्तु, न समय अधिक मिल पाया
और, दुखद-अंतिम क्षण आया—
हाय, मृत्यु ने प्राण हर लिये—
रह न गया मस्तिष्क कि जिसकी
वाणी में थी शक्ति अनूठी—
रह न गया वह हृदय कि जो
कलपा-तडपा
इस मानवता को मुक्ति दिलाने के
हित सत्वर।

इल्या निकोलायेविच दोब्रोलूवोव की वडी प्रशसा करते थे, जिसकी विचारधारा ने सिम्बीर्स्क गुवेर्निया में सार्वजनिक स्कूलो के डाइरेक्टर के रूप में उनके कार्य में, तथा उनके पुत्र, लेनिन और अन्य वच्चो की, जो सभी क्रान्तिकारी हो गये थे, पढाई-लिखाई की व्यवस्था करने में उनकी वड़ी मदद की थी और वे उस विचारधारा से वडे प्रभावित हुए थे।

जिस समय इल्या निकोलायेविच ने सिम्बीर्स्क गुवेर्निया में काम करना आरम्भ किया उस समय वहा के प्रायः सभी किसान निरक्षर थे। परन्तु उनके प्रयासो के फलस्वरूप उस गुवेर्निया के स्कूलो की सख्या वढ कर ४५० हो गई। उन्होने अध्यापको के वीच रह कर भी वहुत काम किया। स्कूल केवल आदेश दे कर ही नही खोले जा सकते थे। इसके लिए वहुत कुछ करना पडता था। एतदर्थ इल्या निकोलायेविच को गांव गाव की खाक छाननी पडती, वैलगाडियो पर सफर करना पड़ता और रात कही किसी गन्दी सराय में काटनी पड़ जाती। साथ ही स्कूल खोलने के लिए उन्हे स्थानीय अधिकारियो से घंटो वहस करनी पड़ती तथा किसानो

को भी समझाना-बुझाना पड़ता। इल्यीच ग्राम-जीवन के बारे में अपने पिता से कहानियां सुना करते थे। गांव के बारे में बालक इल्यीच ने अपनी आया से, जिससे वह बड़ा स्नेह करता था, और अपनी माता से जो गांव में ही बड़ी हुई थी, विभिन्न प्रकार की जानकारी प्राप्त की थी।

इस वातावरण के बीच इल्यीच ने ग्राम-जीवन की ओर विशेष ध्यान दिया। क्रान्तिकारी के रूप में उनके द्वारा किये गये सभी कार्यों पर गांवों ने अपना विशेष प्रभाव डाला था और जब उन्होंने मार्क्सवाद का अध्ययन कर लिया उस समय भी ग्राम-जीवन संबंधी अपने ज्ञान के कारण वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे थे कि हमारे पिछड़े हुए देश रूस में भी जहां गरीब किसानों की संख्या अत्यधिक है, समाजवाद की विजय होगी। इसी ज्ञान के कारण उन्होंने अपने संघर्ष की ठीक ठीक रूपरेखा तैयार करने में भी, जिसके कारण हमारे देश को विजय मिली, सफलता प्राप्त की।

इल्या निकोलायेविच आस्त्राखान में बड़े हुए थे। वे सामाजिक प्राणी थे। सार्वजनिक स्कूलों के डाइरेक्टर के रूप में उन्होंने बहुसंख्यक 'इनारोद्त्सी' (पराये) लोगों में ज्ञान का प्रसार करने की ओर विशेष ध्यान दिया था।

१६३७ में मुझे इवान जैत्सेव का एक पत्र मिला था। जैत्सेव पोलेवो-सुन्दिर (चुवाश स्वायत्त जनतंत्र) में अध्यापक थे। उन्होंने अपने जीवन के ७७ वर्षों में से ५५ वर्ष चुवाश स्कूलों में अध्यापन कार्य करने में विताये थे। अब उन्हें 'श्रम-वीर' तथा 'प्रतिष्ठित शिक्षक' की पदवियों से सम्मानित किया गया है। वे सक्रिय सार्वजनिक कार्यकर्ता हैं। उन्होंने उन कक्षाओं को पढ़ाया है जिनका उद्देश्य निरक्षरता तथा अर्द्ध-साक्षरता दोनों ही के स्थान पर साक्षरता लाना था। वे शिक्षा क्षेत्र में काम करने वालों के संघ के चेयरमैन और ग्राम सोवियत तथा स्थानीय ट्रेड-यूनियन समिति के सदस्य थे। उन्होंने कृषि आंकड़े एकत्र किये थे, जनगणना काम में

अनुदेशक के रूप में कार्य किया था और अन्तरिक्ष-विज्ञान-केन्द्रो को भी सहायता दी थी, आदि आदि।

इवान ज़ैत्सेव एक खेतिहर मज़दूर के पुत्र थे। १३ वर्ष की अवस्था तक वे वतखो को चराते रहे। उन्हे पढ़ने-लिखने का चाव था। अतएव स्कूल में भर्ती होने के लिए वे घर से भाग गये। सिम्वीर्स्क पहुंचने में उन्हे दो दिन लगे और यद्यपि शिक्षण-वर्ष आरम्भ हो चुका था फिर भी उन्हे इल्या निकोलायेविच उल्यानोव की सहायता से जिन्हे उस वच्चे पर दया आ गई थी, एक स्कूल में दाखिला मिल गया। अपने पत्र में ज़ैत्सेव ने एक घटना का उल्लेख किया है। यह घटना उसके स्कूल के प्रथम वर्ष की है। एक दिन जव गणित का घटा चल रहा था इल्या निकोलायेविच कक्षा में आये। उन्होने ज़ैत्सेव को वुलाया और उन्हे वोर्ड पर एक प्रश्न हल करने को दिया। जव ज़ैत्सेव सवाल को हल कर चुके और उसे हल करने का तरीका भी उन्हे समझा दिया तो इल्या निकोलायेविच ने उससे कहा था. "शावाश, अव अपनी जगह पर जाओ"।

इस पत्र में आगे लिखा था कि "विश्राम के घटे के वाद हम लोगो से एक निवन्ध लिखने को कहा गया जिसका विषय था 'आज की कोई वात जिसका तुमपर प्रभाव पडा हो'। अध्यापक ने हमें वताया था कि हम स्कूल जीवन की किसी ऐसी घटना पर कुछ लिखें जिसे हम महत्वपूर्ण समझते हो। संक्षेप में, हम अपनी इच्छानुसार अपने भाव व्यक्त कर सकते थे।

"विद्यार्थियो ने विषय सोचने में कुछ मिनट लगा दिये। कुछ लोगो ने कुछ हास्यात्मक घटनाएं उठाईं तो कुछ ने किसी अन्य वात पर लेखनी चलाई। मुझे विषय चुनने में कोई कठिनाई नही हुई क्योकि मैं इल्या निकोलायेविच का अपनी गणित कक्षा में आना और उन्हे सवाल हल करने का तरीका वताना न भूल पाया था। अतएव मैंने उसी घटना के वारे में लिखने का निश्चय किया।

"मैंने लिखा: 'आज प्रात नौ बजे डाइरेक्टर उल्यानोव पधारे। मुझे ब्लैक-बोर्ड पर बुलाया गया और एक सवाल करने को दिया गया जिसमें एक शब्द 'ग्रीवेनिक'* बार बार आया था। मैंने सवाल लिख लिया, उसे पढा और इस बात पर विचार करने लगा कि इसे कैसे हल करना चाहिए। डाइरेक्टर उल्यानोव ने मुझसे कई सवाल किये और मैंने देखा कि जब भी वे 'ग्रीवेनिक' शब्द पर आते तो उन्हे 'र' का उच्चारण करने में कठिनाई होती। 'ग्रीवेनिक' के स्थान पर वे 'घीवेनिक' कहते थे। यह मुझे कुछ विचित्र-सा लगा। मैं सोचने लगा कि यद्दा विद्यार्थी हूं फिर भी 'र' का शुद्ध उच्चारण कर लेता हू जबकि डाइरेक्टर, जो एक महत्वपूर्ण और विद्वान व्यक्ति है, 'र' का उच्चारण नहीं कर पाते और 'घ' कहते है।'

"इसके बाद मैंने कुछ छोटी-मोटी बाते और लिखी और निबन्ध पूरा कर दिया। कापिया इकट्ठा की गई और अध्यापक कलाशनिकोव को दे दी गई।

"दो दिन बाद हमें किसी ऐसे लेख के बारे में सक्षेप में लिखना था जिसे हमने पढा हो। जब हमें कापिया दी गई उस समय हमने अपने पिछले निबन्ध के अक देखे। कुछ विद्यार्थी खुश थे, कुछ के चेहरो से ऐसा मालूम हो रहा था कि न वे खुश है और न दुखी।

"कलाशनिकोव ने मेरी कापी जान-बूझ कर रोक ली थी। बाद में उन्होंने उसे मेरे ऊपर फेंकते हुए गुस्से से चिल्ला कर कहा था: 'सुअर!'

"मैंने अपनी कापी उठा ली और देखा कि मेरा निबन्ध लाल स्याही से पूरा काट दिया गया था और उसमें मुझे ज़ीरो मिला था। नीचे अध्यापक के हस्ताक्षर थे। मैं रुआसा-सा हो गया और मेरी आखो

---

*१० कोपेक का एक सिक्का।—स०

में आंसू छलछला आये। स्वभाव से मै सीधा-सादा, भावुक और सच्चा व्यक्ति था। सारे जीवन मै ऐसा ही रहा हूं।

"इल्या निकोलायेविच कक्षा में आ गये थे। हमने उनका स्वागत किया और अपना काम करते रहे। वे कक्षा में इस डेस्क से उस डेस्क की ओर जाते, कभी कही खडे हो जाते और फिर काम में लगे हुए बच्चो को देखने लगते। वे मेरे डेस्क के पास भी आये। जब उन्होने मेरा पहला निबन्ध, जो लाल स्याही से कटा था और जिसपर मुझे ज़ीरो मिला था, देखा तो मेरे कन्धे पर हाथ रखते हुए मेरी कापी उठा ली। वे उसे पढ़ने लगे। वे उसे पढ़ते जाते और मुस्कराते जाते। आखिर उन्होंने अध्यापक को बुलाया और उससे पूछा: 'जरा मुझे यह तो बताइये कि आपने इस बच्चे को लाल क्रॉस से क्यो सम्मानित किया है और यह बडा-सा अंडा क्यो दिया है? निबन्ध में व्याकरण की कोई अशुद्धिया नही है, यह तर्कसंगत है, उसमें कोई कृत्रिमता नही है और उसे ईमानदारी के साथ निभाया गया है। इसका विषय भी वही है जो आपने निश्चित किया था।'

"अध्यापक महोदय हकबका गये, उनके मुह से शब्द तक न फूटे। घबडा कर कहने लगे कि इस निबन्ध में ऐसी बाते थी जो स्कूल के प्रशासन की शोभा नही बढ़ाती। इसपर डाइरेक्टर उल्यानोव ने हस्तक्षेप किया और कहा: 'यह सर्वोत्तम निबन्धो में से एक है। इसे पढिये। विषय है, 'आज की कोई बात जिसका तुमपर प्रभाव पड़ा हो'। विद्यार्थी ने वही बात लिखी है जिसका उसपर कक्षा में प्रभाव पडा था। यह बहुत सुन्दर निबन्ध है।' इसके बाद उन्होने मेरा कलम उठाया और निबन्ध के अन्त में लिख दिया 'बहुत सुन्दर' और उसके नीचे अपने हस्ताक्षर कर दिये: उल्यानोव।

"मुझे आज भी वह घटना नही भूली है और शायद भूलूगा भी नही। इल्या निकोलायेविच ने अपनी दयालुता, अपनी सरलता और अपनी न्यायप्रियता का परिचय दिया था।"

इल्यीच ने अपने पिता का अनुसरण किया था। पाठशाला की एक उच्च कक्षा में उन्होंने पूरे एक वर्ष तक एक चुवाश साथी को पढाया था। यह व्यक्ति रूसी भाषा में पिछडा हुआ था। उसे पढाने का उद्देश्य यही था कि वह विश्वविद्यालय की प्रवेश-परीक्षाओ में सफल हो सके। और वह सफल हुआ भी।

राष्ट्र के अल्प-सख्यको के प्रति इल्या निकोलायेविच की सहानुभूति ने लेनिन पर उनके क्रान्ति सम्बन्धी सभी क्रिया-कलापो में विशेष प्रभाव डाला था। प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि लेनिन ने सोवियत सघ के निवासियो की पारस्परिक मैत्री के क्षेत्र में कितना महान कार्य किया है।

इल्या निकोलायेविच ने इल्यीच के मनोयोग को एकाग्र करने की दिशा में दोब्रोलूबोव की विधियो का प्रयोग किया था। व्लादीमिर इल्यीच साढे नौ वर्ष की अवस्था में पाठशाला में दाखिल हुए थे। उन्होने सदैव सबसे अधिक अक पाये और अन्त में उन्हे एक स्वर्णपदक मिला था। परन्तु यह सफलता उन्हे इतनी आसानी से न मिली थी, जैसा कि कुछ लोग सोचते है। इल्यीच एक खुशदिल बालक था और उसे दूर दूर तक टहलना अच्छा लगता था। उसे वोल्गा और स्वीयागा नदियो से प्रेम था। तैरना और स्केटिंग उसे विशेष प्रिय थे। एक बार उन्होंने मुझे बताया था कि "मुझे स्केटिंग का बडा शौक था, परन्तु जब मुझे यह पता चला कि इससे मेरी पढाई में विघ्न पडता है तो मैंने उसे छोड दिया।" पढने में उन्हे बडी रुचि थी। पुस्तकें उनके लिए आकर्षण का केन्द्र थी। उनमे उन्हे मनुष्यो तथा मानव-जीवन का परिचय मिलता था और उनके ज्ञान की परिधि का भी विस्तार होता था, जबकि पाठशाला की पढाई नीरस थी, निर्जीव थी और विद्यार्थियो को तोता-रटन के लिए बाध्य करती थी। इल्यीच के पढने का ढग अनोखा था। पहले वे अपने पाठो को तैयार करते और फिर पढने में जुट जाते। आत्मानुशासन के कारण वे अपना बहुत-सा समय नष्ट होने से बचा लिया

करते थे। पढते समय वे बड़े ध्यान-मग्न रहते थे। उनकी पढने की रफ्तार बहुत तेज़ थी। टिप्पणिया तैयार करते समय वे लिखने में लगने वाला अपना बहुत-सा समय बचा लेते थे। जिन्होने उनका हस्तलेख देखा है वे जानते है कि इल्यीच शब्दो के कितने सक्षिप्त रूपो का इस्तेमाल किया करते थे। इस प्रकार वे अपनी आवश्यकतानुरूप सभी कुछ लिख लेते थे और जल्दी लिख लेते थे।

उन्होंने अपनी चेतना-शक्ति का विकास करना भली भांति सीख लिया था। यदि वे कुछ करने की ठान लेते तो उसे अवश्य करते थे। उनका कह देना ही करने का संकल्प होता था। एक बार जब वे छोटे थे उन्हे धूम्रपान की लत पड गई थी। जब उनकी माता जी ने उन्हे सिगरेट पीते हुए देखा तो उन्हे दुख हुआ और उन्होने उनसे यह आदत छोड़ देने के लिए कहा। इल्यीच ने वचन दे दिया कि वे सिगरेट न पियेंगे और फिर कभी उन्होने उसे हाथ से भी न छुआ।

इल्या निकोलायेविच ने इल्यीच को परिश्रम के साथ पढने की शिक्षा दी थी और उनमें वे गुण पैदा करने की कोशिश की थी जिनका आग्रह दोब्रोलूबोव ने किया था—अर्थात् स्कूल में क्या और कैसे पढाया जाता है इस बारे में जानना-बूझना। अध्यापिका कशकदामोवा का, जो इल्या निकोलायेविच के अधीन काम करती थी और उनका सदैव बड़ा आदर करती थी, कहना है कि उन्हे पाठशाला तथा उसकी अध्ययन-प्रणाली और उसके अध्यापको का मज़ाक़ उड़ाते हुए इल्यीच को तंग करना बहुत अच्छा लगता था। इल्यीच प्राय. प्राथमिक स्कूलो की कमियो के बारे में अपने पिता से वाद-विवाद किया करते थे।

कशकदामोवा का कहना है कि इल्या निकोलायेविच अपने पुत्र इल्यीच को यह सिखाया करते थे कि जीवन का सूक्ष्म अध्ययन किस प्रकार सम्भव है। परन्तु जब कभी कक्षा के समय इल्यीच अपने अध्यापको का मज़ाक उड़ाने की स्वतंत्रता लेते (उदाहरणार्थ फ़्रेंच अध्यापक पोर एक बार उनके

मज़ाक का शिकार बने थे) उस समय उनके पिता उन्हें अपने पास बुलाते और समझाते कि भले ही अध्यापक ठीक ठीक न पढा पाते हो फिर भी उनके साथ अशिष्टता का व्यवहार नही करना चाहिए। इल्यीच ने इस विषय में पिता की आज्ञा का पालन किया था।

दोब्रोलूबोव ने बच्चो के संबंध में यह मत प्रकट किया था कि सामान्य भलाई की दृष्टि से ही किसी व्यक्ति को तथा उसके कार्यों को आका जाना चाहिए। इल्यीच के पिता ने उनमें भी इसी गुण का समावेश करने का प्रयत्न किया था। इस प्रकार इल्यीच आत्म-प्रशंसा और अहकार जैसे दोषो से बचे रहे।

ज़ैत्सेव के संस्मरणो से हमें पता चलता है कि इल्या निकोलायेविच कठोर परिश्रम करने पर तो ज़ोर देते ही थे साथ ही इस बात पर भी विशेष बल दिया करते थे कि बच्चो में निष्ठापूर्वक काम करने के गुणो का विकास होना चाहिए। दोब्रोलूबोव का भी यही मत था। निष्ठा इल्यीच के स्वभाव का एक अग बन चुकी थी।

१४-१५ वर्ष की उम्र में इल्यीच तुर्गनेव की ओर आकृष्ट हुए थे। उन्होंने मुझे बताया था कि उस समय उन्हे तुर्गनेव की कहानी 'अन्द्रेई कोलोसोव' विशेष रूप से पसन्द थी, क्योंकि उसमें प्रेम के मार्ग में निश्छलता एवं निष्कपटता के विषय में अच्छे अच्छे विचार व्यक्त किये गये थे। उस समय मै भी 'अन्द्रेई कोलोसोव' की भक्त थी। मै मानती हू कि इतना व्यापक प्रश्न इतनी आसानी से हल नही हो सकता, जितनी आसानी से वह पुस्तक में हल किया गया है क्योंकि यह प्रश्न केवल निश्छलता एव निष्कपटता से ही तो सम्बद्ध नही है। इसके साथ ही यह भी आवश्यक है कि मनुष्य के प्रति उदार अनुभूतियो का प्रदर्शन हो और उनकी ओर ध्यान दिया जाय। हम युवक-युवतियो के लिए, जो मध्यम श्रेणी के लोगों में नाम और धन के लिए विवाह करने की तत्कालीन व्यापक प्रवृत्ति देखते थे और इसके फलस्वरूप कपट और प्रपच का जो वातावरण छाया हुआ था, 'अन्द्रेई

कोलोसोव' एक प्रिय पुस्तक साबित हुई। इसके पश्चात् हमने चेरनिशेव्स्की की 'क्या करना चाहिए?' पुस्तक पढी और हम सब ने उसे बहुत पसन्द किया। इल्यीच ने इस पुस्तक को सब से पहले तब पढ़ा था जब वे पाठशाला में ही थे। मुझे याद है कि जब हमने साइबेरिया में इन विषयो पर वाद-विवाद छेड़ा था उस समय मुझे यह देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ था कि इल्यीच को चेरनिशेव्स्की की पुस्तक का कितना व्यापक ज्ञान था। वे चेरनिशेव्स्की के प्रति तभी से आकृष्ट हुए थे जब से उन्होंने उसकी 'क्या करना चाहिए?' नामक पुस्तक पढी थी।

इल्या निकोलायेविच ने सार्वजनिक जीवन में सक्रिय भाग लिया था। उन्होंने अपनी पूरी शक्ति से उस अज्ञान के विरुद्ध मोर्चा लिया था जो जनता के बीच व्याप्त था। इल्या निकोलायेविच अपने समय के सपूत थे। अतएव जिन चीज़ो ने उनके बच्चो अलेक्सान्द्र और व्लादीमिर को प्रभावित किया था—चेरनिशेव्स्की के लेखानुसार—वे थी: १८६१ का सुधार जो जागीरदारो के हित में किया गया था; भूमि विमोचन भुगतान* तथा किसानो की सर्वोत्तम ज़मीनें हथिया लेना—उनसे इल्या निकोलायेविच बहुत अधिक प्रभावित नही हुए थे। उनके लिए तो अलेक्सान्द्र द्वितीय ज़ार उद्धारक के रूप में था। इल्यीच कहते थे कि जब पिता जी को ज़ार की हत्या के समाचार मिले थे उस समय वे बहुत घबडा गये

---

*'१९ फर्वरी १८६१ के स्टैट्यूट' के अनुसार—उस वर्ष रूस में कम्मीगिरी की प्रथा का उन्मूलन हुआ था—किसानो को उन ज़मीनों के लिए ज़मीदारो को धन देना होता था जो उन्हे दी जाती थी। कुल मिला कर यह धन ऐसी ज़मीनो के वास्तविक मूल्य से बहुत अधिक होता था अर्थात् २ अरब रूबल। इन भुगतानो को दिये जाने पर किसान न सिर्फ उस ज़मीन का मूल्य चुकाते थे जिसे वे दीर्घ काल से जोता बोया करते थे बल्कि अपनी निजी आज़ादी का मूल्य भी चुका देते थे।—सं०

थे। उन्होंने तत्काल अपने कपडे पहने और मृतक-आत्मा की शांति के लिए की जाने वाली सामूहिक प्रार्थना के लिए गिरजाघर की ओर चल दिये। उस समय इल्यीच केवल ११ वर्ष के थे परन्तु अलेक्सान्द्र द्वितीय की हत्या का समाचार, जो सारे नगर में बिजली की तरह फैल गया था, बच्चों तक में जोश भर देने के लिए पर्याप्त था। इसके पश्चात् इल्यीच—जैसा उन्होंने स्वयं मुझे बताया था—सभी प्रकार की राजनैतिक वार्ताओं को बडे ध्यानपूर्वक सुनते रहे।

इल्यीच ने बालोपयोगी वे सभी पत्र-पत्रिकाए तथा पुस्तके पढी थीं जिन्हे उनके पिता बच्चो के लिए मगाया करते थे। इन पत्रिकाओं में 'बाल-शिक्षा'* भी एक थी। उन दिनो की बालोपयोगी पत्र-पत्रिकाओं में अमेरिका, तुर्की से युद्ध और बालकन सबधी विषयो पर बहुत कुछ लिखा जाता था। यहा यह उल्लेखनीय है कि १८६१-१८६५ तक के वर्षों में अमेरिका के उत्तरी तथा दक्षिणी राज्यो के बीच नीग्रो-गुलामी-प्रथा का उन्मूलन करने के लिए गृह-युद्ध हो रहे थे। वास्तव में यह युद्ध पूजीवाद के और अधिक व्यापक प्रसार के लिए मार्ग प्रशस्त करने के उद्देश्य से हो रहा था। परन्तु युद्ध किया जा रहा था स्वतंत्रता बनाये रखने के नाम पर। इल्यीच के एक सहपाठी कुज्नेत्सोव का कहना है कि साहित्य पर वे सदा अच्छे अच्छे निबन्ध लिखा करते थे। उन दिनो उस पाठशाला के, जहा इल्यीच पढा करते थे, डाइरेक्टर फ० म० केरेन्स्की थे (फ० म० केरेन्स्की सामाजिक-क्रान्तिकारी तथा १९१७ की अस्थायी सरकार के प्रधान-मत्री अ० फ० केरेन्स्की के पिता थे)। वे स्कूल मे साहित्य पढाया करते थे। केरेन्स्की इल्यीच के निबन्धो पर सदा सब से अधिक अक दिया करते थे। एक बार निबन्ध की कापी लौटाते समय केरेन्स्की ने इल्यीच से कुछ

---

*'बाल-शिक्षा'—उदारवादी बालोपयोगी पत्रिका जो जारशाही रूस में १८६६-१९०६ में प्रकाशित की गई थी।—सं०

रूखे शब्दो में कहा था. "ये दलित वर्ग है कौन जिनके बारे में तुमने लिखा है?" अन्य विद्यार्थी यह जानने को उत्सुक थे कि इल्यीच को केरेन्स्की ने कितने अंक दिये हैं। परन्तु बाद में पता चला कि उन्हे सब से अधिक अंक मिले थे।

उल्यानोव का परिवार बडा था। उसमें ६ बच्चे थे। वे जोडो में बडे हुए। सब से बडे आन्ना और अलेक्सान्द्र, फिर व्लादीमिर और ओल्गा और अन्तत दिमीत्री तथा मारिया। इल्यीच ओल्गा से बडा स्नेह करता था। बचपन में दोनो साथ साथ खेलते थे और बड़े होने पर दोनो ने मार्क्सवाद का अध्ययन भी साथ साथ किया था। १८९० में वह महिलाओ के उच्च पाठ्यक्रमो में भर्ती होने के लिए पीटर्सबर्ग चली गई थी। दुर्भाग्यवश उसे टाइफस हो गया और १८९१ में वह मर गई।

अलेक्सान्द्र का, जो क्रान्तिकारी हो गये थे, इल्यीच पर बडा प्रभाव पडा था। आन्ना और अलेक्सान्द्र 'ईस्क्रा'* कवियो (कूरोचकिन भ्राता, मिनायेव, जूलेव तथा अन्य लोग) की ओर आकृष्ट हुए थे। इन कवियो को चेरनिशेवियन कवि कहा जाता था। इन लोगो ने सामाजिक जीवन तथा नैतिक क्षेत्र में भूदासत्व से चिपके रहने वालो का बडा विरोध किया था और यह स्पष्ट कर दिया था कि यह प्रथा अत्यधिक "अपमानजनक, बुरी तथा दोषपूर्ण" है। आन्ना को 'ईस्क्रा' कवियो की कविताएं याद थीं और स्वयं भी वह कविता करती थी। उसे यह कविताएं आजीवन याद रहीं। उसके जीवन के अन्तिम दिनो में, जब फालिज़ के कारण वह खाट से चिपक गई थी, मुझे दफ़्तर से आने के बाद प्रायः उससे बातें करने का अवसर मिल जाता था और हम दोनो चाय पीते समय 'ईस्क्रा' कवियो के बारे में वाद-विवाद छेड दिया करती थी। उस समय यह देख

---

*'ईस्क्रा'—क्रान्तिकारी-जनवादी रूसी व्यंग-पत्रिका, जो पीटर्सबर्ग में १८५९-१८७३ में प्रकाशित हुई थी।

कर मुझे आश्चर्य होता था कि उसकी स्मृति तेज है। उसे ऐसी ढेरों कविताएं याद थीं जो उस काल के बुद्धिजीवी लोगों के गले का हार बनी हुई थीं। साइबेरिया में इल्यीच के साथ अपने निर्वासन काल में मुझे यह देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ था कि उन्हें 'ईस्क्रा' कवियों की कविताओं के विषय में कितना अधिक ज्ञान था।

'ईस्क्रा' कवि अनर्गल तथा बेकार की बातों का सदा उपहास किया करते थे। ऐसी बातें अलेक्सान्द्र तथा इल्यीच को भी पसन्द नहीं थीं। जब कभी इन भ्राताओं से मिलने और उनसे बेकार की बातें करने के लिए कई सबधी एक साथ आ टपकते उस समय उनका प्रिय वाक्य यह होता था. "अपनी अनुपस्थिति से हमें प्रसन्न करने की कृपा करें।" अलेक्सान्द्र को पीसरेव के लेख पढ़ना विशेष प्रिय था और उन्हें पीसरेव के प्राकृतिक विज्ञान विषयक लेखों में, जिनमें धर्म का विरोध किया जाता था, खास दिलचस्पी थी। उस समय पीसरेव की कृतिया प्रतिषिद्ध घोषित कर दी गई थी। इल्यीच भी, जो उस समय केवल १४-१५ वर्ष का बालक था, पीसरेव के लेखों को चाट जाया करता था। कहना चाहिए कि १८५६ में दोब्रोलूबोव ने अन्तिम रूप से धर्म को तिलाजलि न दी थी और इल्या निकोलायेविच भौतिक-विज्ञान तथा अन्तरिक्ष-विज्ञान के अध्यापक होते हुए भी आजीवन ईश्वर में विश्वास करते रहे। उन्हें यह सुन कर बड़ा क्लेश हुआ था कि उनके पुत्रों ने धर्म का त्याग कर दिया है। अलेक्सान्द्र ने मुख्यतया पीसरेव के प्रभाव के कारण गिरजा जाना बन्द किया था। आन्ना का कहना है कि एक बार जब इल्या निकोलायेविच ने अलेक्सान्द्र से रात्रि-प्रार्थना के लिए गिरजा जाने को कहा था उस समय उन्होंने दृढ़ता के साथ इन्कार कर दिया था और फिर उनसे इस प्रकार का प्रश्न कभी न किया गया। इल्यीच ने अपने पिता तथा उनके एक अध्यापक मित्र की बातचीत का हवाला देते हुए बताया था कि उनके पिता ने अपने मित्र से कहा था कि मेरे बच्चे गिरजे के पुजारी नहीं हैं। उस समय इल्यीच जिनकी उम्र १४-१५

की रही होगी, वहां मौजूद थे परन्तु वातचीत शुरू होते ही पिता ने उन्हें किसी काम से खिसका दिया था। जव वे वापस आये तो पिता जी के मित्र ने मुस्कराते हुए उनसे कहा था: "इसे छडी लगाइये, छोड़िये नही।" यह सुन कर इल्यीच ने उसी समय धर्म से अपना संवध विच्छेद कर लेने का निश्चय कर लिया था। वे भागते हुए वाग में गये, और अपना क्रॉस, जिसे वे गले में पहने हुए थे, उतार कर वही फेंक दिया।

अलेक्सान्द्र विश्वविद्यालय में प्राकृतिक विज्ञान का अध्ययन करने के लिए पीटर्सवर्ग गये थे। वहा उनका रुझान क्रान्तिकारी कार्यो की ओर हुआ और यह वात उन्होंने आन्ना तक से न वताई थी। जव वे गर्मियो की छुट्टियो में घर आये उस समय भी उन्होंने इसके वारे में किसी को न वताया था। इस वीच इल्यीच में यह उत्कंठा होने लगी थी कि वे अपने उन विचारो को जो वार वार उनके मस्तिष्क में आते जाते थे किसी के सामने रखें और उनपर विचार-विमर्श करे। पाठशाला में ऐसा कोई न था जिसके साथ वे वातचीत कर सकते। एक वार उन्होंने अपने एक सहपाठी को चुना जिसके वारे में उनका ख्याल था कि वह क्रान्ति का समर्थक है। अतएव क्रान्ति के विषय में वातचीत करने के उद्देश्य से स्वियागा के किनारे किनारे टहलने का कार्यक्रम निश्चित किया गया। परन्तु यह वातचीत न हो सकी। उनका सहपाठी जीविकोपार्जन संवंधी वाते करने लगा और उसने अपना यह विचार व्यक्त किया कि मनुष्य को चाहिए कि वह ऐसा पेशा चुने जिसमें सव से अधिक आमदनी हो सकती हो। इल्यीच ने मुझसे कहा था कि "यह सुन कर मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि वह लड़का जीविकोपार्जक है न कि क्रान्तिकारी। इसलिए मैंने उससे आगे कोई वातचीत न की।"

उस काल में, जव घर में अलेक्सान्द्र ने यह आखिरी गर्मी विताई थी, वे इल्यीच से वातचीत करना वरावर वचाते रहे। इल्यीच भी जव अपने वड़े भाई को कीड़े-मकोड़ो के संवंध में अनुसंधान करते देखते तो

सोचा करते "यह कभी भी क्रान्तिकारी नहीं हो सकते" (अलेक्सान्द्र प्रातःकाल उठते, कुछ घंटों तक कीड़े-मकोड़ों का अध्ययन करते, उन्हें खुर्दबीन से देखते और उनके सम्बन्ध में परीक्षण किया करते थे)। इल्यीच को शीघ्र ही अपनी गलती मालूम हो गई और जब उन्हें अपने भाई के कार्यों तथा उनकी सज़ा के बारे में मालूम हुआ तो उनपर इसका गहरा प्रभाव पड़ा।

पिता और भाई के प्रभाव के अतिरिक्त इल्यीच पर माता का भी प्रभाव बहुत अधिक पड़ा था। उनकी नानी जर्मन थी और नाना का जन्म उक्रइन में हुआ था। उनके नाना एक विख्यात शल्यचिकित्सक थे, जिन्होंने अपनी २० वर्ष की प्रैक्टिस के अन्त में कज़ान से २५ मील दूर कोकूशकिनो गांव में एक मकान खरीद लिया था। यहां वे स्थानीय कृषकों का इलाज करते थे। यह शल्यचिकित्सक अपनी पुत्री को किसी संस्था में भेजने के कायल न थे। इसलिए उन्होंने उसे घर पर ही पढ़ाया। उनकी पुत्री आगे चल कर अच्छी संगीतज्ञ बनी। उसने अनेकानेक पुस्तकों का अध्ययन किया और जीवन के विषय में अच्छा ज्ञान प्राप्त किया था। उसके पिता ने उसे नियमित रूप से तथा परिश्रम से काम करना सिखाया था। फलतः वह एक अच्छी गृहणी बनी और अन्त में उसके यह गुण उसकी पुत्रियों में भी आ गये। विवाह करने और उसके बाद बच्चों के बीच रहने के कारण उसे बहुत कुछ करना पड़ता था। इल्या निकोलायेविच के वेतन से मुश्किल से खर्च चल पाता था। इसका परिणाम यह होता कि उसे अपने बच्चों और पति के लिए आराम के साधन जुटाने और गृहस्थी का काम-काज सुचारु रूप से चलाने के लिए बड़ी माथापच्ची करनी पड़ती। उनके ऐसा करने से ही उनके बच्चों का अध्ययन ठीक से चलता रहा, और वे सदाचारी बने।

अपने पति की भांति इल्यीच की माता ने भी बच्चों की पढ़ाई-लिखाई पर अधिक ध्यान दिया था। उन्होंने बच्चों को जर्मन भाषा

सिखाई। इस सम्वन्ध में इल्यीच ने हमें वताया था कि छोटी कक्षाओं में उनके जर्मन अध्यापक उनके जर्मन भाषा के ज्ञान के कारण उनकी प्रशसा करते थे। इसके पश्चात् भाषा सम्वन्धी अध्ययन की ओर, जिसमें लेटिन भाषा भी थी, इल्यीच विशेष रूप से आकृष्ट हुए। मैं समझती हूं कि उनके अन्दर सघटन की जो प्रतिभा थी वह उन्हे विरासत में माता से ही मिली थी।

माता जी स्वयं अपने उदाहरण से वड़े वच्चो को यह सिखाया करती थी कि छोटो की देख-भाल कैसे होनी चाहिए। माता जी ने वच्चो को कुछ गाने सिखा दिये थे जिन्हे वे सव मिल-जुल कर झूमते हुए गाया करते थे। मां उनके साथ खेलती थी। इल्यीच ने वचपन से ही अपने छोटे भाई-वहन पर देख-रेख रखना आरम्भ कर दी थी। इस सम्वन्ध में मारिया और दिमीत्री के उनके विषय में वड़े रोचक सस्मरण है। इल्यीच खेलों का प्रवन्ध करते और जहां छोटे वच्चों की वात होती वे खेलो के मामले में उदारता और सज्जनता का परिचय दिया करते थे।

वच्चों के साथ उनका यह निश्छल प्रेम आजीवन वना रहा। उन्हे वच्चों के साथ खेलना, उनसे हसी-मज़ाक करना वेहद पसन्द था। मुझे याद भी नही पड़ता कि कभी उन्होने वच्चो के साथ सख्ती की भी थी। जब कोई अन्य व्यक्ति वच्चो के साथ सख्ती करता तो उन्हे वुरा लगता था।

व्लादीमिर इल्यीच समझते थे कि ये वच्चे वड़े हो कर उसी काम को आगे वढ़ायेंगे जिसके लिए इल्यीच ने अपना जीवन लगाया है। वच्चो से वातचीत करते समय कभी कभी विना किसी जवाव की प्रतीक्षा किये हुए वे उनसे कहा करते थे: "जव तुम वड़े होगे तव साम्यवादी वनोग, है न?" प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि इल्यीच ने वच्चो के कल्याण, उनके भोजन तथा शिक्षा, उनके जीवन को प्रफुल्ल तथा सुखद वनाने,

उनमें विजय के लिए अपेक्षित ज्ञान का प्रसार करने तथा आधुनिक मशीन-युग में हाथ और मस्तिष्क द्वारा आवश्यक काम करने की योग्यता पैदा करने आदि से सम्बन्धित विषयो में कितनी रुचि दिखाई थी।

इल्यीच अपनी माता जी से अत्यधिक स्नेह करते थे और उनके दुर्दिनो में, तो उनकी विशेष देख-रेख रखते थे। १८८६ में उनके पिता की मृत्यु हो गई। इल्यीच ने मुझे बताया था कि माता जी ने अपने पति की, जिनका वे इतना आदर-सत्कार करती थी, १८८६ में हुई मृत्यु के शोक को बडे धैर्यपूर्वक सहन किया था। परन्तु जब अलेक्सान्द्र को फासी हुई और माता जी को इतना बडा आघात सहना पडा था उस समय इल्यीच ने माता जी के साथ जिस मृदुता और विनम्रता का व्यवहार किया वह निःसदेह सराहनीय था। अलेक्सान्द्र ने देखा था कि उनके चारो ओर किसानो की दशा कितनी दयनीय थी और जनता पर कितने अधिक अत्याचार हो रहे थे। अपने इन्ही अनुभवों के कारण वे इस निष्कर्ष पर पहुचे थे कि ज़ारो से मोर्चा लेना अनिवार्य था। वे इल्यीच से चार वर्ष बड़े थे और १ मार्च १८८१* को जो घटनाए हुई थी उनके सम्बन्ध में उनकी प्रतिक्रिया इल्यीच से बिल्कुल भिन्न थी।

पीटर्सबर्ग में अलेक्सान्द्र 'नरोद्नया वोल्या' पार्टी के सदस्य बने और उन्होंने अलेक्सान्द्र तृतीय की हत्या के षड्यन्त्र में सक्रिय भाग लिया। परन्तु यह प्रयत्न विफल हुआ और १ मार्च १८८७ को अपने कुछ साथियों के साथ वे गिरफ्तार कर लिये गये। अलेक्सान्द्र की गिरफ्तारी की खबर सिम्बीर्स्क में स्कूल की अध्यापिका कशकदामोवा को लगी थी। उनने यह समाचार इल्यीच को (जो उस समय १७ वर्ष के थे) सुनाया था क्योंकि वे उल्यानोव परिवार के सब से बडे पुत्र थे। आन्ना भी, जो

---

*१ मार्च १८८१ को नरोदोवोल्त्सी ने रुसी ज़ार अलेक्सान्द्र द्वितीय को मौत के घाट उतार दिया था।—स०

उस समय पीटर्सवर्ग में महिलाओ के उच्च पाठ्यक्रमों की छात्रा थी, गिरफ़्तार की गई। इल्यीच ने यह दुखद समाचार माता जी को सुनाया। उस समय इल्यीच ने देखा कि यह समाचार सुन कर माता जी का चेहरा विल्कुल फक पड़ गया था। वे उसी दिन पीटर्सवर्ग जाना चाहती थी। उस ज़माने में सिम्वीर्स्क तक रेल की लाइन नही आई थी। अतएव सिज़्रान तक के लिए कोच द्वारा यात्रा करनी पड़ती थी। परन्तु चूकि कोच की यात्रा महंगी पडती थी इसलिए यात्रा करने वाले लोग अन्य ऐसे सहयात्रियो को ढूढ लिया करते जो मिल-जुल कर कोच का किराया दे देते थे। इस प्रकार किसी एक सहयात्री पर पूरे किराये का वोझ न पडता। इल्यीच अपनी माता के लिए एक सहयात्री ढूढ़ने निकले परन्तु इस समय तक अलेक्सान्द्र की गिरफ्तारी की खवर सारे शहर में फैल चुकी थी। इसलिए कोई भी व्यक्ति माता जी के साथ यात्रा करने को तैयार न हुआ, यद्यपि उस समय तक नगर के सभी नागरिक स्कूलो के डाइरेक्टर की विधवा के रूप में माता जी की वड़ी प्रशंसा किया करते थे। इस घटना के वाद उल्यानोव परिवार के सभी भूतपूर्व मित्रो और सिम्वीर्स्क के 'समाज' के सभी उदार व्यक्तियो ने इस परिवार से अपना नाता तोड लिया। माता जी के कष्टो तथा समाज के वुद्धिजीवियो के भय ने उस १७ वर्षीय युवक पर एक गहरा प्रभाव डाला। माता जी चली गईं और इल्यीच पीटर्सवर्ग के समाचारो की व्यग्रतापूर्वक प्रतीक्षा करते हुए छोटे वच्चो की देख-रेख के निमित्त वही रह गये। अव उन्होने अध्ययन की ओर अपना चित्त लगाया और वे समस्याओ पर सोचने-विचारने लगे। इस समय उन्होने चेरनिशेव्स्की के ग्रन्थ देखे और उनके उद्देश्य को नये ढग से समझा। उन्होने अपने प्रश्नो का उत्तर पाने के लिए मार्क्स की ओर भी देखा। अलेक्सान्द्र की पुस्तको में 'पूजी' की भी एक प्रति थी। पिछले वर्षो में इसका अध्ययन इल्यीच के लिए एक टेढी

सौर था, परन्तु अब उन्होंने उसे दूने उत्साह से पढना शुरू कर दिया। अलेक्सान्द्र को ८ मई को फांसी दे दी गई। इस समाचार को सुन कर इल्यीच ने कहा था "नहीं, हम वह रास्ता नहीं पकडेंगे। हमें दूसरे रास्ते पर चलना आवश्यक है।" मारिया अलेक्सान्द्रोवृना ने अपने पुत्र और पुत्री के लिए अधिकारियों को दया-प्रदर्शन के निमित्त एक अनुनय-पत्र देने का विचार किया था। लेकिन इसके पूर्व अलेक्सान्द्र का विचार जानने के निमित्त उन्होंने उनसे मुलाकात की। इस भेंट से माता जी को बहुत परेशानी हुई। उन्होंने अपने अनुनय-पत्र के लिए अलेक्सान्द्र की सहमति प्राप्त करने का प्रयत्न किया था। परन्तु अलेक्सान्द्र ने उनसे यही कहा था: "माता जी मैं ऐसा नहीं कर सकता, ऐसा करना ईमानदारी नहीं होगी।" इसपर माता जी ने आगे ज़िद न की और पुत्र ने विदा लेते समय कहा "हिम्मत रखो।" जब उनके पुत्र ने न्यायालय में अपना वक्तव्य दिया उस समय भी वे वहीं पर थीं।

आन्ना को रिहा करके कज़ान के समीप कोकूशकिनो गांव में पुलिस की निगरानी में रहने के लिए भेज दिया गया था। माता जी में इन संकटों के कारण कुछ परिवर्तन हो गये थे। अब वे अपने बच्चों के क्रांतिकारी कार्यों के निकट आ गई थीं। बच्चे भी उन्हें पहले से अधिक प्रेम करने लगे थे।

१८९९ में माता जी पीटर्सबर्ग आईं। इस बार वहां जा कर उन्हें यह प्रयत्न करना था कि इल्यीच को येनिसी गुबेर्निया से विदेश जाने की अनुमति मिल जाय, और यदि सम्भव न हो तो उन्हें राजधानी के आसपास ही कहीं रहने दिया जाय। तत्कालीन पुलिस विभाग के अध्यक्ष ज़्वोलान्स्की ने माता जी से कहा था "आपको अपने बच्चों पर गर्व करना चाहिए, एक लटका दिया गया है और दूसरा भी उसी काबिल है।" यह सुन कर मारिया अलेक्सान्द्रोव्ना उठ खड़ी हुईं और उन्होंने

वड़े स्वाभिमान के साथ ये शब्द कहे थे: "जी हां मुझे अपने वच्चों पर गर्व है।" (इस वातचीत के समय म० व० स्मिर्नोव मौजूद थे। उन्होंने 'सोवेत्स्की यूग' नामक समाचारपत्र में इस घटना का उल्लेख किया है।) इल्यीच अपनी माता की असीम संकल्प-शक्ति की प्रायः सराहना किया करते थे। उनका कहना था: "अच्छा हुआ कि अलेक्सान्द्र की गिरफ्तारी के पूर्व ही मेरे पिता की मृत्यु हो गई। यदि वे जीवित होते तो पता नहीं क्या हो गया होता।" इसके पश्चात् मैं भी मारिया अलेक्सान्द्रोव्ना से मिली थी, उदाहरणार्थ १८९५ में, जव इल्यीच प्राथमिक निरोध कारागृह में वीमार पड़े थे और वे उनसे मिलने आई थीं। उस समय मुझे मालूम हुआ कि इल्यीच अपनी माता से क्यो इतना प्रेम करते थे। 'सम्वन्धियो को पत्र' शीर्षक पुस्तक में माता जी को लिखे गये पत्रों की प्रत्येक पंक्ति से माता जी के प्रति उनके प्रेम और उनकी विनम्रता का परिचय मिलता है। यह उल्लेखनीय है कि इस पुस्तक के पत्रो का चयन इल्यीच की वहन मारिया ने किया था और उसी ने उन्हे प्रकाशनार्थ सकलित भी किया था।

इल्यीच पर अपनी माता के सहनशील स्वभाव का वरावर प्रभाव पड़ता रहा। यद्यपि भाई की मृत्यु से उनके हृदय पर भी आघात हुआ था, फिर भी उन्होंने अपने आप पर नियंत्रण रखा और अपनी परीक्षाओं में सफलता प्राप्त की। पाठशाला की पढ़ाई समाप्त करने पर स्कूल की ओर से उन्हे एक स्वर्ण-पदक दिया गया था।

ग्रीष्म ऋतु में उल्यानोव परिवार कज़ान आ गया और इल्यीच ने उसी विश्वविद्यालय में नाम लिखाया जहा उनके पिता उनसे पहले अध्ययन कर चुके थे।

व्ला० इ० लेनिन की मृत्यु पर महिला श्रमिकों और किसान महिलाओं से अपील

('प्राव्दा,' ३० जनवरी १९२४)

साथी श्रमिको और किसानो, स्त्रियो तथा पुरुषो! मैं आपसे अनुरोध करूंगी कि आप मुझपर एक मेहरबानी करें। इल्यीच की मृत्यु से आपके दिलों को जो धक्का पहुंचा है वह कहीं उनके गुणानुवाद का रूप न ले ले। आप उनकी यादगार में स्मारक न बनायें, उनके नाम पर बड़े बड़े प्रासादों के नाम न रखें, उनकी याद ताज़ी रखने के लिए मीटिंगें न करें। उन्होंने इन सब की ज़िन्दगी भर परवाह न की। उन्होंने ये सारी चीज़ें कभी पसन्द न कीं। याद रखिये हमारा देश कितना ग़रीब है, उसके लिए हमें कितना कुछ करना है। अगर आप व्लादीमिर इल्यीच की इज़्ज़त करना चाहते हैं तो शिशु-गृह, किंडरगार्टन, मकान, स्कूल, पुस्तकालय, चिकित्सालय, अस्पताल, पगुगृह आदि बनाइये। हमें अपने हर काम में उनकी इच्छा की पूर्ति करनी चाहिए। यही मुख्य चीज़ है।

हमें इल्यीच से सीखना है

('श्रमिक और किसान संवाददाता' पत्रिका, अंक १, १९२८)

एक दिन, जब हम अपने एक निकट के साथी को दफना रहे थे, मैंने एक वाक्य देखा था: "नेता मरते हैं लेकिन उनके उद्देश्य अमर रहते हैं।" यह कितना सच है!

इल्यीच को मरे अब चार वर्ष हो चुके हैं। लेकिन वे उद्देश्य, जिनके लिए उन्होंने अपने शरीर और अपनी आत्मा का उत्सर्ग किया था, आज भी जीवित हैं और फल-फूल रहे हैं।

इन चार वर्षों में इल्यीच के विचार, उनके कहे गये शब्द और उनके कार्य हमारे सोवियत सघ के दूर से दूर के क्षेत्रो तक पहुच चुके है। फलत वे जनता के और भी निकट हो गये है, उनके दुलारे वन चुके है।

इल्यीच के लेखो और भापणो को पढ़ कर, और पुन॰ पढ कर, पार्टी का सदस्य उनमें उन प्रश्नो का उत्तर पा लेता है जो उसके दिमाग को मथा करते रहे है। इसके अलावा अपने संघर्ष में, अपने कार्यो में भी उसका पथ-प्रदर्शन होता है।

और इसी प्रकार श्रमिको और किसानो के संवाददाताओ का भी पथ-प्रदर्शन होगा।

सच पूछो तो स्वयं इल्यीच श्रमिको और किसानो के एक उत्कृष्ट कोटि के सवाददाता थे। उन्होने जीवन का अव्ययन वहुत निकट से किया था, उन वातो पर ध्यान दिया था जिनके संवध में दूसरे लोग उदासीनता वरतते थे, और श्रमिको के हितो की दृष्टि से हर छोटे छोटे व्योरे का मूल्याकन किया था। वाद में उन्होने अपने लेखो में वडे विस्तार के साथ उन सव वातो का भी विश्लेपण किया था जो उन्होने देखी-सुनी थीं। उन्होने इन छोटे छोटे व्योरो का उपयोग वड़ी वडी समस्याओ को सुलझाने में भी किया था।

१८९५ में लेनिन और उनके दूसरे साथियो ने पीटर्सवर्ग से एक अवैध अखवार निकालने का निश्चय किया। इस अखवार का नाम था 'रवोचेये देलो'। उस समय श्रमिक वर्ग का आन्दोलन अपनी शैशवावस्था में था। अधिकाश श्रमिक तो यह भी नही समझ पाते थे कि उनके निम्न कोटि के रहन-सहन का कारण क्या है, कि उन्हे पूजीवादियो के विरुद्ध संघर्प करना चाहिए और जारशाही से मोर्चा लेना चाहिए। 'रवोचेये देलो' का उद्देश्य श्रमिको को यह दिखाना था कि वे कैसे रह रहे है, यह समझाना था कि उनके इस हीन रहन-सहन का कारण क्या है और इसलिए

उनकी सहायता करना था कि वे अपने इर्द-गिर्द की बातें साफ साफ देख सकें। इल्यीच श्रमिकों के एक नियमित संवाददाता बने। वे श्रमिकों के पास जाते थे, उनसे भेंट करते थे। अपने संस्मरणों में एक श्रमिक ने लिखा है कि इल्यीच हमपर प्रश्नों की बौछार किया करते थे, छोटे छोटे और मामूली विषयों पर भी, और इन प्रश्नों का जवाब देते देते हमें पसीना आ जाता था।

श्रमिकों के संवाददाता बन जाने पर इल्यीच ने अपने दूसरे सभी साथियों को भी अपने संवाददाताओं की सूची में रख लिया था। ये लोग बैठे बैठे घंटों उन सूचनाओं पर बहसें किया करते जो उन्हें मिलती थीं। लेनिन हमेशा सच्चे तथ्यों पर ही जोर देते थे, ऐसे तथ्यों पर जिनकी अच्छी तरह जांच-पड़ताल हो चुकती थी। इस प्रकार दूसरों के सामने उन्होंने एक अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत किया था। इन लोगों को हमेशा ही अधिक और अधिक सूचनाएं संग्रहीत करनी पड़ती थीं। परिणामत यह समुदाय श्रमिक संवाददाताओं का एक नियमित समुदाय बन गया था। हम सब को ऐसा लगता था कि इल्यीच के निर्देशन में हम आंख खोल कर देखना सीख रहे हैं और विशेषज्ञ संवाददाता बन रहे हैं। इस बात पर कितनी ही बहसें होती थीं कि लिखने का सब से अच्छा ढंग क्या है। और हम सब इस बात से सहमत थे कि लेखों में तथ्य अधिक हों और तर्क-वितर्क कम।

पीटर्सबर्ग में इल्यीच एक श्रमिक संवाददाता थे। निर्वासन काल में वे किसानों के संवाददाता बने। किसान जानते थे कि वे एक न्यायविद् हैं और उनसे सलाह-मशविरा करते थे। इल्यीच उन्हें तत्काल अपनी राय देते और साथ ही उनसे उनके रहन-सहन और कामों वगैरह के बारे में भी पूछते। इस प्रकार उन्हें जो उत्तर मिला करते थे उनसे उन्होंने ढेरों जरूरी सूचनाएं संग्रहीत कर ली थीं।

विदेशो में इल्यीच ने जर्मन, फ्रासीसी और अंग्रेज श्रमिको की जीवन-चर्या का भी अध्ययन किया था।

अभी हाल ही में, यानी अक्तूबर क्रान्ति की दसवी वर्षगाठ से कुछ ही पहले, मैंने अप्रैल से लेकर नवम्बर १६१७ तक के इल्यीच के भाषणो और लेखो को फिर से पढा था। इन सब से पता लगता है कि उनकी पर्यवेक्षण बुद्धि कितनी सूक्ष्म थी। आप उनके उस भाषण को पढ़ें जो उन्होंने रूस लौटने के तीन सप्ताह बाद पार्टी सम्मेलन में दिया था। इससे आपको पता चलेगा कि उन्होंने सैनिको और श्रमिको तथा खानो में काम करने वाले लोगो के साथ अपनी बातचीत के दौरान में कितना कुछ सीखा था। और जो बातें दूसरो को न सूझती थी वे भी उन्होंने जानी समझी थी।

श्रमिको और किसानों के जो संवाददाता इल्यीच के लेखो और भाषणो का अध्ययन करते हैं यदि वे संवाददाता के रूप में किये गये उनके कार्यो पर गौर करे तो उन्हे पता चलेगा कि उनमें पर्यवेक्षण की कितनी अद्भुत योग्यता थी और नवजीवन की प्रस्फुटित होती हुई कोपलो को, देश की बढती हुई शक्तियो को और पुराने शासन की ताकत और दमन को देखने-समझने की कितनी सूक्ष्म बुद्धि। इन संवाददाताओ को पता चलेगा कि इल्यीच ने अपने उद्देश्यो में जो दिलचस्पी दिखाई थी, उन्होंने श्रमिक वर्ग आन्दोलन का जिस ढंग से अध्ययन किया था और उन्हें मार्क्सवाद का जितना गहरा ज्ञान था उसके परिणामस्वरूप उनमें अभूतपूर्व दूरदर्शिता का उदय हुआ था।

वे लोग इस बात को अच्छी तरह समझ सकेगें कि इल्यीच की इसी योग्यता ने उन्हे परिस्थिति पर (यहां ब्रेस्त शान्ति सधिपत्र* का

---

*ब्रेस्त शान्ति संधिपत्र एक ओर सोवियत रूस और दूसरी ओर जर्मनी, आस्ट्रोहंगरी, बल्गारिया तथा तुर्की के बीच ३ मार्च १६१८ को लिखा गया था। इसकी शर्तें बड़ी सख्त थी। लेकिन सोवियत राज्य

उल्लेख मात्र काफी होगा) गंभीरतापूर्वक सोच-विचार करना सिखाया था, उन्हे एक ऐसा आदमी बनाया था जिसे शब्दाडम्बर से कोई लगाव न था, जो यह जानता था कि संघर्ष के लिए शक्तिया कैसे जुटाई जाय और कैसे संघटित की जाय और साथ ही जिसे जनता में अपने विचारो को कार्यान्वित करने का तरीका भी मालूम था। इस दिशा में उनके अपने पर्यवेक्षणो और उन सब बातो ने उनकी बड़ी मदद की थी जो स्वय उन्होंने देखी या सुनी थी।

ध्यानपूर्वक निरीक्षण करने की योग्यता प्राप्त करना एक बहुत बडी बात है। यह गुण हमें इल्यीच से ग्रहण करना चाहिए और अगर हम एक बार भी उसमें दक्षता प्राप्त कर ले तो हम, वर्तमान परिस्थितियो में, उनके विचारो को कार्यरूप में परिणत कर सकेगे।

वैज्ञानिक काम करने की लेनिन प्रणाली

(लेनिन विषयक संस्मरणो के संग्रह से, अंक १, १९३०)

व्लादीमिर इल्यीच ने जो भी किया पूरी तरह से किया। उन्होंने अपने कार्यों में कठिन परिश्रम किया था। वे जिस काम को जितना ही ज्यादा महत्वपूर्ण समझते थे उतना ही अधिक वे उसके सूक्ष्म ब्योरो में प्रवेश भी करते थे।

उन्होंने यह अनुभव कर लिया था कि १८९०-१९०० के अन्त में रूस में कोई भी अवैध अखबार निकालना एक मुश्किल बात है। इतना होते हुए भी उन्होंने यह समझ लिया था कि संघटन और प्रचार की

को मजबूत बनाने और उसकी स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए यह गधि बहुत जरूरी थी।—स०

दृष्टि से एक राष्ट्रीय अखवार की अत्यधिक आवश्यकता है। इस अखवार से रूस में होने वाली घटनाओ और विकासो तथा तरुण श्रम आन्दोलन की वृद्धि आदि के संबंध में विश्लेषण किया जा सकेगा और इन सब के कारणो पर प्रकाश पड सकेगा। अतएव ब्लादीमिर इल्यीच ने अपने कुछ साथी चुने और विदेश जाकर अपने इस अखवार को प्रकाशित करने का निश्चय किया। ब्लादीमिर इल्यीच ही वे व्यक्ति थे जिन्होने 'ईस्क्रा' नामक अखवार की कल्पना तथा स्थापना की थी। इस अखवार के प्रत्येक अक का वडी सावधानी के साथ सपादन किया जाता था। हर शब्द का प्रयोग तौल तौल कर होता था और सब से अधिक खास वात यह थी कि ब्लादीमिर इल्यीच प्रूफो को स्वयं पडते थे इसलिए नही कि उनके पास प्रूफ-रीडर न थे (मैंने यह काम वहुत शीघ्र सीख लिया था) परन्तु इसलिए कि अखवार में कोई गलतिया न रह जाय। पहले वे खुद प्रूफ पढते फिर मुझसे पढ़ने के लिए कहते, फिर और एक बार खुद देखते।

और यही वात हर चीज़ के संबंध में लागू होती थी। ज़ेम्स्तवो आकडो के संबंध मे उन्होने वहुत कुछ काम किया था। उनकी कापिया तालिकाओं से भरी रहती जिनका प्रत्येक शब्द वड़े ध्यान से लिखा जाता था। जब वे किन्ही महत्वपूर्ण आंकडो के सबंध में काम करते तो कुल योगो को उस समय भी जाच लिया करते थे जब तालिकाएं छप चुकती थी। हर तथ्य और हर आंकड़े को ध्यानपूर्वक जाचना इल्यीच की विशेपता थी। उनके सारे निष्कर्प तथ्यो पर आधारित होते थे।

अपने निष्कर्पो को तथ्यो द्वारा समर्थित करने की कला का परिचय हमें उनकी आरम्भिक प्रचार-पुस्तिकाओ—'जुर्माने', 'हडताल' और 'फैक्ट्री का नया कानून'—तक में मिलता है। इन पुस्तिकाओ में उन्होने अपने विचारो को श्रमिको पर थोपा नही अपितु जो कुछ वे कहना चाहते थे उसे तथ्यो द्वारा सिद्ध किया। कुछ लोगो का ख्याल था कि ये पुस्तिकाएं

बड़ी लम्बी है। लेकिन उन्हे पढ कर श्रमिको को उनकी बातो पर यकीन जमता था। लेनिन का एक मुख्य ग्रन्थ 'रूस में पूजीवाद का विकास' जेल में लिखा गया था। इस ग्रन्थ में तथ्याधारित सामग्री की प्रचुरता है। लेनिन के जीवन में मार्क्स की 'पूजी' का एक विशेष हाथ था। उन्होंने इस बात को हमेशा अपने ध्यान में रखा था कि मार्क्स अपने निष्कर्षो पर पहुंचने के पूर्व ढेरो तथ्यो का उपयोग किया करते थे।

लेनिन की स्मृति अच्छी थी लेकिन फिर भी उन्हे उसपर भरोसा न था। उन्होने कभी भी स्मृति से तथ्यो का उल्लेख नही किया क्योंकि ये तथ्य निश्चित न हो कर 'अनुमानित' भी हो सकते थे। उनके तथ्य पूर्णत' ठीक निकलते थे। वे ढेरो सामग्री देखते (वे लिखते पढ़ते बहुत अधिक थे) और जिस चीज की उन्हे जरूरत होती उसे विशेष रूप से याद करने के लिए अपनी कापियो में टाक लेते। उनकी कापिया ऐसे ऐसे उद्धरणो से भरी पडी है। एक दिन 'स्वाध्याय का संघटन' शीर्षक मेरे पैम्फ्लेट को देख कर उन्होंने कहा था कि तुमने इस बात पर जोर दिया है कि सिर्फ उन्ही बातो को टाका जाय जो पूर्णत अनिवार्य है और यही चीज़ गलत है। उनकी एक दूसरी प्रणाली थी। वे जो कुछ लिख लेते थे उसे बार बार पढ़ते थे। यह बात आप उनकी कापियो में जगह जगह पर देख सकते है, जहा उन्होंने हाशियो में बहुत कुछ लिखा है और अपने लेखो को जगह जगह रेखाकित किया है।

अपनी ही किताबो में वे उन स्थलो को रेखाकित किया करते थे जिन्हे वे याद रखना चाहते थे। वे हाशियो पर भी टिप्पणिया लिखते थे और पुस्तक के आवरण पर उन पृष्ठो की संख्याए लिख लेते थे जिन्हे वे अधिक जरूरी समझते थे। इन पृष्ठ-संख्याओ के नीचे भी वे रेखाए बना लेते थे। जो पृष्ठ जितना ही जरूरी होता रेखाए उतनी ही अधिक होती। अपने ही लेखो को दुबारा पढ़ते समय उनपर वे कुछ टिप्पणिया

लिख लिया करते, और यदि उन्हें कभी कोई नयी बात सूझ जाती तो आवरण पर पृष्ठ-संख्या भी डाल देते। इस प्रकार इल्यीच ने अपनी स्मृति को तीक्ष्ण बनाया। उन्हे यह बात हमेशा याद रहती कि उन्होने कब, किससे, क्या कहा था। आप देखेंगे कि उनकी पुस्तको, भाषणो और लेखो में पुनरावृत्तिया बहुत कम हैं। यह सच है कि वर्षो बाद भी उन्होने जो लेख लिखे और जो भाषण दिये उनमें हमें एक ही मूल विचार दिखाई पड़ता हैं। और यही कारण है कि उनके वक्तव्यो में भी एकरूपता तथा दृढता की छाप बराबर मिलती है। साथ ही हम यह भी देखते हैं कि उनके वक्तव्य पुनरावृत्ति मात्र नही हैं। नई नई परिस्थितियो में प्रयोग करने अथवा भिन्न दृष्टिकोण से एक ही विषय का स्पष्टीकरण करने के लिए उनका मूल विचार हमेशा एक ही रहा। मुझे इल्यीच के साथ हुई अपनी एक बातचीत की याद है। वे बीमार थे। हम लोग उनके ग्रथो के नव-प्रकाशित संग्रहो के बारे में, जिस प्रकार उन्होने रूसी क्रान्ति के अनुभवो का दिग्दर्शन कराया था उसके बारे में और इस बात के महत्व पर बातचीत कर रहे थे कि हमारे विदेशी साथी भी इन अनुभवो से लाभ उठायें। हमने इस संबंध में भी बातचीत की थी कि इन ग्रंथो का उपयोग यह दिखाने के लिए भी कि किस तरह विशिष्ट ऐतिहासिक दशाओ ने मुख्य विचार के निर्वचन पर अपरिहार्य रूप से किस प्रकार अपना प्रभाव डाला था। इल्यीच ने मुझसे कहा था कि मैं एक ऐसा साथी ढूढूं जो यह काम कर सके।

किन्तु यह कार्य अभी तक पूरा नही हुआ।

लेनिन ने बहुत ध्यानपूर्वक उन अनुभवो का अध्ययन किया था जो क्रांतिकारी संघर्षो के दौरान में दुनिया के सर्वहारा को हुए थे। मार्क्स और एंगेल्स ने इन अनुभवो का विशेष रूप से चित्रण किया है। लेनिन ने उनके ग्रन्थो को बार बार पढ़ा और हमारी क्रांति के हर नये चरण में पढ़ा।

मार्क्स और एगेल्स का लेनिन पर कितना ज़बरदस्त प्रभाव पड़ा था इसे सभी जानते हैं। इन रचयिताओ के ग्रन्थो ने विद्यमान परिस्थितियो का मूल्याकन करने और हमारी क्राति के प्रत्येक चरण की सभावनाओ को समझने में लेनिन की किस प्रकार सहायता की थी इसकी जानकारी प्राप्त करना भी जरूरी है। अभी तक ऐसी कोई गवेषणा पुस्तक नही लिखी गई जिससे इस बात का पता चलता कि दुनिया के क्रान्तिकारी आन्दोलन के अनुभवो ने घटनाओ का पूर्वानुमान करने में लेनिन की कितनी मदद की थी। जिन लोगो की दिलचस्पी इस बात मे है कि लेनिन कैसे काम करते थे, मार्क्स और एगेल्स का कैसे अध्ययन करते थे, हमारे सघर्ष का मूल्याकन करने में उन्होंने इन लेखको की कौन कौनसी बाते ग्रहण की उनके लिए तो ऐसा ग्रन्थ निश्चय ही बडा उपयोगी सिद्ध होगा। इस ग्रन्थ से पता चलेगा कि औद्योगिक रूप से अधिक विकसित देशो में श्रमिक वर्ग के क्रान्तिकारी सघर्षो के अनुभवो ने हमारी क्रान्ति पर कितना जबरदस्त असर डाला था। इससे हमें इस बात का भी ज्ञान होगा कि रूसी क्रान्ति और हमारा सारा सघर्ष तथा निर्माण सबधी हमारा प्रयास दुनिया भर के सर्वहारा वर्ग द्वारा किये गये सघर्षो का ही एक अग है। इनसे पता चलेगा कि अन्ताराष्ट्रीय सर्वहारा सघर्ष से लेनिन ने क्या लिया और कैसे लिया। और उन्होने उनके अनुभवो का किस प्रकार उपयोग किया। और ठीक यही बात हमें लेनिन से सीखनी चाहिए।

लेनिन अन्ताराष्ट्रीय सर्वहारा के अनुभवो का अध्ययन विशेष मनोयोग से करते थे। किसी ऐसे व्यक्ति की कल्पना करना भी बडा कठिन है जो सग्रहालयो को लेनिन से ज्यादा नापसन्द करता हो। सग्रहालय में रखी हुई वस्तुओ के रग-बिरगे पत्र और उनकी दुर्व्यवस्था को देख कर व्लादीमिर इल्यीच इस हद तक परेशान हो उठते कि दस ही मिनट बाद वे थके थके-से दिखाई पडने लग जाते। मुझे विशेष रूप से १८४८ की उस क्रान्ति प्रदर्शनी की याद अभी भी बनी हुई है जो पेरिस में ...

के एक महल्ले के दो छोटे छोटे कमरो में हुई थी। यह महल्ला अपने क्रान्ति सबधी संघर्ष के लिए बड़ा प्रसिद्ध हो गया था। इस प्रदर्शनी में व्लादीमिर इल्यीच ने बडी दिलचस्पी दिखाई थी और हर छोटी छोटी चीज़ को देख कर उनमें जोश आ जाता था। उनके लिए तो यह प्रदर्शनी सघर्ष की एक जीती-जागती तस्वीर थी। जब मैंने क्रान्ति के हमारे सग्रहालय को देखा तो मुझे इल्यीच याद आये और यह याद भी आया कि उन्होने उस दिन पेरिस की नुमाइश की हर छोटी से छोटी चीज़ को कितने ध्यान से देखा था।

इल्यीच ने बार बार लिखा है कि अन्ताराष्ट्रीय सर्वहारा वर्ग द्वारा किये गये क्रान्तिकारी संघर्षो के अनुभवो का किस प्रकार उपयोग होना चाहिए। मुझे अच्छी तरह याद है उस अभ्युक्ति की, जो उन्होने १९०५ की रूसी क्रान्ति के सबव में लिखे गये कौत्स्की के 'रूसी क्रान्ति की प्रेरक शक्तिया और सम्भावनाएं' शीर्षक पैम्फलेट पर की थी। इल्यीच को यह पैम्फ़लेट बहुत अच्छा लगा था। उन्होने तुरन्त इसका अनुवाद कराया, अनुवाद के हर वाक्य का सपादन किया, उसपर एक जोशीली भूमिका लिखी और मुझसे कहा कि मैं इसे अविलम्ब प्रकाशित करूं और सारे प्रूफ खुद देखू। मुझे याद है कि किस प्रकार हमारे बड़े-से और वैध छापेखाने ने इस छोटे-से पैम्फ़लेट को कपोज़ करने में तीन दिन से अधिक लगा दिये थे और मुझे वहां तीनो दिन प्रूफ के लिए घंटो इन्तज़ार करना पडा था। दूसरो में जोश कैसे भरा जाय यह कला इल्यीच को खूब आती थी। जब उन्होने मुझे उन विचारो के बारे में बताया था जो कौत्स्की के पैम्फ़लेट को देख कर उनके हृदय में पैदा हुए थे, जब उन्होने भूमिका लिखी थी, तो मैंने भी साफ साफ समझ लिया था कि मुझे अपने सारे कामो को ताक पर रख कर उस समय तक छापेखाने में बैठना होगा जब तक कि पैम्फलेट तैयार नही हो जाता। और आज भी, जब उस बात को २० वर्ष से अधिक हो चुके है, मेरा

मस्तिष्क उस भूरे रंग के आवरण की, टाइप और छापेखाने की उन गलतियो की कल्पना करता है जो पैम्फ्लेट की छपाई के समय मुझे देखनी पडी थी। उस समय इल्यीच के जोरदार भाषणो से रूस में एक तहलका मचा हुआ था। मुझे इस पैम्फलेट की भूमिका के अन्तिम शब्द अभी तक याद है–

"अन्ततः मै 'अधिकारियो' के संबंध में दो-चार शब्द कहूगा। बुद्धिवादी-रेडिकलो का यह गोया क्रान्तिकारी, किन्तु अव्यावहारिक, दावा है कि 'हमारे लिए कोई अधिकारी नही'; लेकिन मार्क्सवादी इन दृष्टिकोण को नही अपना सकते।

"नही। सारी दुनिया में श्रमिक वर्ग एक दुष्कर एव कठोर मुक्ति-सघर्ष में लगा हुआ है। इन लोगो को ऐसे व्यक्तियो की जरूरत है जो अधिकारी हो, लेकिन बेशक इसी अर्थ में कि युवक श्रमिको को दमन और शोषण का मुकाबला करने के लिए जरूरत है पुराने लडाको के अनुभवो की, उन लडाको की जिन्होने बहुत-सी हडताले की है, क्रान्तियो में भाग लिया है, और जो क्रान्तिवादी परम्पराए और एक व्यापक राजनीतिक दृष्टिकोण अपनाने के कारण पहले से अधिक बुद्धिमान बन चुके है। हर देश के सर्वहाराओ को जरूरत है सर्वहारा वर्ग द्वारा आरम्भ किये गये विश्वव्यापी सघर्ष के अधिकार की। अपनी पार्टी के कार्यक्रम और कार्यनीति को स्पष्ट बनाने के निमित्त हमें जरूरत है विश्वव्यापी सामाजिक लोकतन्त्र के सिद्धान्तवादियो के अधिकार की। लेकिन बेशक, यह अधिकार बूर्ज्वा विज्ञान के औपचारिक अधिकार और पुलिस के हथकडो जैसा नही है। यह अधिकार विश्वव्यापी समाजवादी सेना के उन्ही रैंको के और भी व्यापक चतुर्दिक सघर्ष का अधिकार है।"*

---

*व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी संस्करण, खंड ११, पृष्ठ ३७४-७५।

'रूसी क्रान्ति की प्रेरक शक्तियां और सम्भावनाएं' नामक रचना की अपनी भूमिका में व्लादीमिर इल्यीच ने लिखा था कि कौत्स्की ने उस समय रूसी क्रान्ति की ठीक ठीक सराहना की थी जब उसने यह कहा था· "हमारे लिए यही अच्छा होगा अगर हम इस बात पर राज़ी हो जायं कि हमें उन पूर्णतः नयी नयी स्थितियो और समस्याओ का सामना करना पड़ रहा है जो पुराने कायदे-कानूनों का अनुसरण नही करती।"* इस भूमिका में इल्यीच ने नयी स्थितियो पर पुराने कायदे-कानून लादने की सख्त मुखालफत की थी। हम अच्छी तरह जानते हैं कि साम्राज्यवादी युद्ध और १९१७ की क्रान्ति का मूल्याकन करने में कौत्स्की नयी स्थिति और नयी समस्याओ को समझने में विफल रहा था और इसी लिए अपने सिद्धान्तो से डिग भी गया था।

संसार के सर्वहारा वर्ग ने अपने क्रान्तिकारी संघर्ष में जो अनुभव प्राप्त किया है उसके आधार पर नयी नयी स्थितियो और समस्याओ की योग्यता प्राप्त करना और फिर नयी विशिष्ट स्थितियो के विश्लेषण में मार्क्सवाद का उपयोग करना लेनिनवाद की विशेषता है। यद्यपि इसके बारे में बहुत कुछ लिखा जा चुका है फिर भी, दुर्भाग्यवश, ठोस तथ्यो द्वारा इस पहलू का यथेष्ट विवेचन नही किया गया है।

क्रान्तिकारी घटनाओ के निर्धारण में भी लेनिनवादी एक विशिष्ट ढंग है जिसका उल्लेख समाचारपत्र आदि में बहुत कम हुआ है। यह है ठोस यथार्थता को देखने और सघर्परत जनता की सामूहिक राय को स्पष्ट करने की योग्यता। लेनिन का कथन है (देखिये 'क्रान्ति की प्रेरक शक्तिया और सम्भावनाएं' की भूमिका) कि व्यावहारिक और ठोस राजनीतिक समस्याओ का हल करने के लिए इस योग्यता का होना एक निश्चयात्मक आधार है।

---

*वही, पृष्ठ ३७२।

लेनिन मार्क्स का अध्ययन कैसे करते थे

औद्योगिक दृष्टि से रूस एक पिछडा हुआ देश था और इसी लिए उसके श्रम आन्दोलन ने १८६०-१६०० में ही जोर पकडना आरम्भ कर दिया था। यह वह समय था जब १८४८ की क्रान्ति और १८७१ की पेरिस कम्यून के अनुभवो से फायदा उठा कर अनेक देशो के श्रमिक व्यापक रूप मे क्रान्तिकारी सघर्ष कर रहे थे। मार्क्स और एगेल्स क्रान्तिकारी सघर्ष के बीच ही पले थे और क्रान्ति रूपी अग्नि में तप कर स्वर्ण की भाति निकले थे। मार्क्सवाद ने सामाजिक विकास का पथ प्रशस्त किया था और यह सिद्ध कर दिया था कि पूजीवाद का विघटन और उसके स्थान पर साम्यवाद की स्थापना अपरिहार्य है। मार्क्सवाद ने ही वह रास्ता दिखाया था जिसके सहारे नये नये सामाजिक स्वरूपो का विकास हो सकता है। यह वर्ग सघर्ष का, समाजवादी क्रान्ति का रास्ता था। इस सघर्ष में सर्वहारा वर्ग का क्या स्थान है यह बात भी मार्क्सवाद में समझाई गई थी। मार्क्सवाद में स्पष्ट इगित कर दिया गया था कि सर्वहारा वर्ग की विजय अनिवार्य होगी।

मार्क्सवाद के झडे के नीचे हमारा श्रम आन्दोलन पनपता रहा—न गुमराह हुआ, न भटका और न अधो की ही तरह बटा। लक्ष्य स्पष्ट था, मार्ग स्पष्ट था।

रूसी सर्वहारा वर्ग को अपने सघर्ष में जिस रास्ते पर चलना था उसे मार्क्सवाद ने प्रकाशित करने की दिशा में लेनिन ने बडा काम किया। मार्क्स को मरे ५० वर्ष हो चुके है लेकिन मार्क्सवाद आज भी हमारी पार्टी के समस्त क्रिया-कलापो का निर्देशन कर रहा है। लेनिनवाद मार्क्सवाद का एक विस्तार-मात्र है।

लेनिन ने मार्क्स का अध्ययन कैसे किया इस विषय को स्पष्ट करना अनिवार्य प्रतीत होता है।

लेनिन को मार्क्स का अच्छा ज्ञान था। जब वे १८९३ में पीटर्सबर्ग आये थे उस समय हम लोग यह देख कर आश्चर्यचकित रह गये थे कि उन्हें मार्क्स और एंगेल्स के ग्रन्थों की कितनी अच्छी जानकारी है।

जब १८९०-१९०० में पहले मार्क्सवादी मंडलो का सघटन हुआ था उस समय उनके सदस्यो ने 'पूजी' का पहला खड ही पढा था। यह ग्रन्थ मिल तो जाता था किन्तु इसे प्राप्त करने में वडी कठिनाई होती थी। जहा तक मार्क्स के दूसरे ग्रन्थो का सवध है स्थिति स्पष्टत वडी खराव थी। हमारे मडल के अधिकाश सदस्यो ने 'कम्यूनिस्ट पार्टी का घोपणापत्र' तक न पढा था। मैंने खुद इसे १८९८ में (जर्मन भापा में) उस समय पढ़ा था जब मैं निप्कासन का दड भुगत रही थी।

मार्क्स और एंगेल्स पूर्णत निपिद्ध थे। लेनिन ने १८९७ में 'नोवोये स्लोवो'* के लिए 'आर्थिक रोमान्टिसिज़्म का स्वरूपदर्शन' शीर्षक एक लेख लिखा था जिसमें उन्होने 'मार्क्स' और 'मार्क्सवाद' शव्दो को वचाने के लिए लक्षणाओ का प्रयोग किया था। कुछ अन्यथा करने का मतलव था पत्रिका को मुसीवत में डालना।

व्लादीमिर इल्यीच मार्क्स और एगेल्स के सारे ग्रन्थो से परिचित थे। उन्होंने इन ग्रन्थो को जर्मन और फ़ासीसी भाषा में प्राप्त करने का प्रयास किया। अपनी यादगार के आधार पर आन्ना इल्यीनिचना** का कहना है कि व्लादीमिर इल्यीच और उनकी वहन ओल्गा ने 'दर्शनशास्त्र की निर्धनता' फ्रांसीसी भापा में पढी थी। किन्तु उन्हे मार्क्स और एंगेल्स के अधिकतर ग्रन्थ जर्मन भाषा में पढने पडे थे। उन्होने इनके सर्वप्रमुख

---

* एक पत्रिका जिसे 'कानूनी मार्क्सवादियो' ने अप्रैल १८९७ में अपने अधिकार में ले लिया था।—स०

** आ० इ० उल्यानोवा-येलिज़ारोवा—यह व्ला० इ० लेनिन की वहन थी।—स०

और सब से रोचक अवतरणों का अनुवाद अपने लिए रूसी भाषा में किया था। लेनिन की पहली बडी पुस्तक १८९४ में अवैध रूप से प्रकाशित हुई थीं। इस पुस्तक का नाम था "'जनता के मित्र' क्या हैं और वे सामाजिक-जनवादियो के विरुद्ध कैसे लडते है?' इसमें उन्होने 'कम्यूनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र', 'राजनीतिक अर्थशास्त्र की आलोचना में एक योग', 'दर्शनशास्त्र की निर्धनता', 'जर्मन आदर्शवाद', १८४३ में मार्क्स का रूजे को पत्र, एगेल्स के 'ऐन्टी-ड्यूरिंग' और 'परिवार, निजी सम्पत्ति तथा राजसत्ता की उत्पत्ति के उद्धरण दिये है।

उन दिनो अधिकाश मार्क्सवादी मार्क्स के ग्रन्थो के बारे में जानते भी न थे। 'जनता के मित्रो' ने अनेक प्रश्नो को एक नये ढंग से ही स्पष्ट किया और इस प्रकार वे बहुत अधिक लोकप्रिय सिद्ध हुए।

लेनिन के दूसरे ग्रन्थ—'नरोदनिक आन्दोलन का आर्थिक सार और मि० स्त्रुवे की पुस्तक में उसकी किस प्रकार आलोचना की गई है'—में हमें 'लुई बोनापार्ट के अठारहवे ब्रूमेर', 'फ्रान्स में गृह-युद्ध', 'गोथा कार्यक्रम की मीमासा' और 'पूजी' के दूसरे और तीसरे खडो के उद्धरण मिलते हैं।

अपने विदेश वास में लेनिन को मार्क्स और एगेल्स के समस्त ग्रन्थो को पढने और अध्ययन करने का मौका मिला था।

लेनिन ने ग्रनात विश्वकोश के लिए १९१४ में मार्क्स की जो जीवनी लिखी थी वह इस बात का प्रमाण है कि उन्हे मार्क्स की पुस्तको के विषय में कितना गहरा ज्ञान था। यही बात इस तथ्य से भी स्पष्ट है कि उन्होंने मार्क्स का अध्ययन करते समय ढेरो उद्धरण लिख लिये थे। लेनिन सस्थान के पास ऐसी अनेक कापिया है जिनमें लेनिन ने मार्क्स के उद्धरणो का सग्रह किया था।

ब्लादीमिर इल्यीच ने इन उद्धरणो का उपयोग अपनी पुस्तको में किया है। उन्होने इन्हे बार बार पढा भी था और उनपर अपनी टिप्पणिया

लिखी थी। वे मार्क्स मे न केवल परिचित ही थे अपितु उन्हे पूरी पूरी तरह समझते भी थे। १९२० मे तरुण कम्यूनिस्ट लीग की तीसरी अखिल रूसी कांग्रेस में भाषण देते हुए व्लादीमिर इल्यीच ने कहा था कि हमारे लिए यह आवश्यक है कि हम "मानव ज्ञान का अधिकाश अर्जन कर सकने की योग्यता प्राप्त करे और इस ढंग से कि साम्यवाद रट रट कर याद करने वाली चीज ही न रह जाय किन्तु एक ऐसी वस्तु प्रमाणित हो मानो उसे आपने अपने विचारो से प्राप्त किया है और आप इससे ऐसे निष्कर्ष निकालते हो जो आधुनिक शिक्षा की दृष्टि से अपरिहार्य समझे जाते हो।"*

लेनिन ने सिर्फ उन्ही विषयो का अध्ययन नही किया जिन्हे मार्क्स ने लिखा था अपितु उन समस्त बातो का भी अध्ययन किया जिन्हें बूर्जवा शिविर के मार्क्स विरोधियो ने मार्क्स और मार्क्सवाद के बारे में लिखा था और लेनिन ने उन लोगो के साथ बहस करके मार्क्सवाद के मूल सिद्धान्तो को स्पष्ट बना दिया था।

''जनता के मित्र' क्या हैं और वे सामाजिक-जनवादियो के विरुद्ध कैसे लडते है?' नामक अपने पहले बड़े ग्रन्थ में (यह ग्रन्थ 'रूसकोये बोगात्सत्वो'** में छपे मार्क्सवाद विरोधी लेखो के उत्तर में था) लेनिन ने मार्क्स का दृष्टिकोण नरोदनिको (मिखाइलोव्स्की, क्रिवेन्को और युझाकोव) के दृष्टिकोण के साथ रख कर तब उसपर विचार किया था।

'नरोदनिक आन्दोलन का आर्थिक सार और मि० स्त्रुवे की पुस्तक में उसकी किस प्रकार आलोचना की गई है' शीर्षक अपने लेख में

---

*व्ला० इ० लेनिन, चुने हुए ग्रन्थ, खड २, भाग २, पृष्ठ ४८०।

**यह एक मासिक पत्रिका थी जिसने १८९०-१९०० के आरम्भिक वर्षो में नरोदनिको का पक्ष लिया और मार्क्सवादियो के विरुद्ध उनके संघर्षो में उनका हथियार बनी।—स०

लेनिन ने इस बात पर प्रकाश डाला था कि स्त्रुवे का दृष्टिकोण मार्क्स से कितना भिन्न है।

लेनिन ने 'कृषिविषयक प्रश्न और मार्क्स के 'आलोचक'' (खड ५, पृष्ठ ८७-२०२ और खड १२, पृष्ठ १४९-१९३, चतुर्थ रूसी सस्करण) में कृषि की समस्याओ का विश्लेपण किया था। इस लेख में उन्होंने मार्क्स का दृष्टिकोण जर्मनी के सामाजिक-जनवादियो (डेविड, हर्ज) और रूस के आलोचको (चेरनोव, बुलगाकोव) के मतो के साथ रखा था।

"सत्य, मत-मतान्तरो का ही परिणाम है," एक फ्रान्सीसी कहावत है। इल्यीच को इसका प्रयोग करना बडा प्रिय था। श्रम आन्दोलन सबधी मुख्य प्रश्नो में उन्होंने सदैव सबधित विपयो पर वर्गवादी दृष्टिकोण और उनका तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करने का मार्ग अपनाया।

लेनिन ने यह कार्य एक विशिष्ट ढग से सम्पन्न किया।

उदाहरणार्थ, इस बात का पता 'लेनिन के सकलित ग्रथ—१९' से चलता है जिसमें उनके वे उद्धरण, अवतरण और सक्षेप मिलते है जो १९१७ के पहले की कृषि समस्याओ के सबंध में है।

वे बडे ध्यानपूर्वक 'आलोचको' के बयानो का सार लिखते, सब से अधिक विशिष्ट और स्पष्ट स्थलो को चुनते और अलग टाक लेते और फिर उनकी तुलना मार्क्स के मतो के साथ करते। विविध आलोचको के सबध में की गई अपनी सविस्तार आलोचना मे उन्होंने सब से महत्वपूर्ण और सब से जरूरी समस्याओ को रेखाकित करके उनकी वर्ग-भावना का परिचय देने का प्रयत्न किया था।

लेनिन प्राय किसी प्रश्न पर जान-बूझ कर विशेप जोर दिया करते थे। उनका कहना था कि अगर बोलने वाला ठीक ठीक बोल रहा है तो वह किसी भी लहजे में, तीखेपन या रूखाई के साथ बात कर सकता है। फ० आ० जोर्गे के पत्रो के संबध में लिखी गई अपनी भूमिका में, मेहरिंग का उल्लेख करते हुए वे कहते है कि "उस समय मेहरिंग का

कहना ठीक था जब उसने यह कहा था ('देर सोरगेश्चे ब्रीफवेचसेल') कि मार्क्स और एगेल्स को 'सदाचरण' का कोई पता नही था 'आघात करते समय न तो वे देर तक सोचते-विचारते ही और न आघात पडने पर तिलमिलाते ही।'"* तीखापन लेनिन की शैली का अंग था। यह आदत उन्होने मार्क्स से सीखी थी। उन्होने लिखा है कि "मार्क्स लिखता है कि उसने और एंगेल्स ने उस 'दयनीय' तरीके के खिलाफ बराबर मोर्चा लिया जिसके आधार पर 'सामाजिक-जनवादी'** का सचालन किया गया था। उन्होने प्राय अपने मतो का तीखेपन के साथ प्रतिपादन किया (wobei's oft scharf hergeht)।"*** इल्यीच को तीखेपन से कोई डर न लगता था। बस वे यही चाहते रहे कि जो प्रत्युत्तर दिये जाय वे विषयसगत हो।

लेनिन को एक शब्द बड़ा पसन्द था—'नुकताचीनी'। जब तर्क विषयसगत न होते, जब बोलने वाले अतिरेको का इस्तेमाल करने लगते और मामूली मामूली दोष निकालने में जुट पड़ते तो लेनिन कहा करते थे: "यह क्या। यह तो नुकताचीनी है, नुकताचीनी।"

वे उस वाद-विवाद के सख्त विरोधी थे जिसका उद्देश्य किसी प्रश्न पर पूरा पूरा प्रकाश डालने के बजाय किसी गुट के छोटे-मोटे झगडे को तय करना अधिक रहता था। यह उल्लेखनीय है कि मेन्शेवीक लोग इस पद्धति के पक्ष में थे। उन्होने एकमात्र अपने गुट के स्वार्थो के लिए, विशिष्ट परिस्थितियो में काम आने वाले मार्क्स और एंगेल्स के उद्धरणो

---

*व्ला० इ० लेनिन, मार्क्स-एगेल्स-मार्क्सवाद, मास्को, १९५३, पृष्ठ २४५।

**लासालियन अवसरवादी संघटन, 'सामान्य जर्मन श्रमिक संघ' का मुखपत्र जो बर्लिन में १८६४ से १८७१ तक प्रकाशित हुआ था।

***व्ला० इ० लेनिन, मार्क्स-एगेल्स-मार्क्सवाद, मास्को, १९५३, पृष्ठ २४१।

का दुरुपयोग किया था। जोर्गे के पत्रो की अपनी भूमिका में लेनिन ने लिखा था –

"मार्क्स और एगेल्स की वे सिफारिशें, जो उन्होंने ब्रिटिश और अमरीकी श्रमिको के आन्दोलन के लिए की थी, सीधे सीधे रूसी दशाओ में भी आसानी के साथ प्रयोग में लाई जा सकती है, ऐसा सोचने के माने यह हैं कि मार्क्सवाद का प्रयोग उसकी पद्धति को सुबोध बनाने के लिए नही, निश्चित देशो में श्रम आन्दोलन की निश्चित ऐतिहासिक विशेपताओ का अध्ययन करने के निमित्त नही अपितु गुटो के छोटे-मोटे झगडो, बुद्धिवादियो के चक्करो को सुलझाने के लिए है।"*

यहा हम इस प्रश्न पर विचार करेगे कि लेनिन से मार्क्स का कैसे अध्ययन किया। यह बात अंशतया उपर्युक्त उद्धरण से देखी जा सकती है। मार्क्स की पद्धति को समझना और फिर यह जानना जरूरी है कि कुछ विशिष्ट देशो में श्रम आन्दोलन की विशेपताओ का कैसे अध्ययन किया जाय। लेनिन ने इसे अच्छी तरह जाना-समझा था। उनके लिए मार्क्सवाद जड सिद्धान्त नही अपितु उनके कार्यो का निर्देशन करने की एक प्रणाली थी। एक बार उन्होंने कहा था "जो मार्क्स से परामर्श करना चाहता है " यह कितनी विशिष्ट अभिव्यक्ति है! उन्होने खुद सतत मार्क्स से 'परामर्श किया' और क्रान्ति के सब से कठिन और सकटपूर्ण क्षणो में उसे बार बार पढा। उदाहरणार्थ, मैं उनके दफ्तर में चली जाती थी। वहा हर शख्स घबडाया हुआ लगता था। लेकिन इल्यीच मार्क्स में खोये रहते थे। उन्हें पुस्तक से अलग करना एक टेढी खीर थी। वे मार्क्स इसलिए नही उठाते थे कि अपनी थकी हुई नाडियो को विश्राम दें, या श्रमिक वर्ग की शक्ति में अपना विश्वास जमायें, या फिर उनकी

---

*ब्ला० इ० लेनिन, मार्क्स-एगेल्स-मार्क्सवाद, मास्को, १९५३ पृष्ठ २४६।

पूरी विजय में आस्था रखें — इनमें उन्हे काफी विश्वास था। वे मार्क्स उठाते थे उससे 'परामर्श करने के लिए', श्रम आन्दोलन के समक्ष जो अनेकानेक जरूरी समस्याएं है उनका उत्तर पाने के लिए। 'दूसरी दूमा पर फ० मेहरिंग' विषयक अपने लेख में लेनिन ने लिखा था: "कुछ लोग अपने तर्कों के लिए गलत उद्धरण चुनते हैं। वे छोटे छोटे प्रतिक्रियावादी बूर्जवा के खिलाफ बडे बड़े बूर्जवा के समर्थन में सामान्य सिद्धान्तो को लेते हैं और फिर बिना किसी आलोचना के रूसी सांविधानिक-जनवादियो, रूसी क्रान्ति के संबंध में उनका इस्तेमाल करते है।

"मेहरिंग इन लोगों को अच्छा सबक देता है। जो लोग बूर्जवा क्रान्ति में सर्वहारा वर्ग के कार्यों के संबंध में मार्क्स की सलाह चाहते है उन्हे जर्मन बूर्जवा क्रान्ति के बारे में मार्क्स की राय जाननी चाहिए। हमारे मेन्शेवीक इस राय पर आंख मूंद लेते है। इसके कुछ माने है। हम देखते है कि इस मत में, पूर्णतया और स्पष्टतया, उस निर्दय संघर्ष की अभिव्यक्ति है जो रूसी बोल्शेवीक, रूसी बूर्जवा क्रान्ति में, अवसरवादी बूर्जवा के विरुद्ध छेड रहे हैं।"*

लेनिन का तरीका था कि वे मार्क्स के उस ग्रन्थ को उठाते जिसमें एक-सी स्थितियों की व्याख्या रहती, वे इन स्थितियो का बडे ध्यान से विश्लेषण करते, वर्तमान स्थिति से उनकी तुलना करते और समानताओ और विभेदो का पता चलाते। लेनिन यह सब कैसे करते थे इसका सर्वोत्तम उदाहरण है १९०५-०७ की क्रान्ति के दौरान में इस पद्धति का उपयोग।

'क्या करे?' (१९०२) शीर्षक अपने पैम्फ्लेट में लेनिन ने लिखा था: "इतिहास ने हमारे सामने एक ऐसा तत्कालिक कार्य ला उपस्थित

---

*व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी संस्करण, भाग १२, पृष्ठ ३४८।

किया है जो उन सारे तत्कालिक कार्यों में सब से अधिक क्रान्तिकारी है जो किसी देश के सर्वहारा वर्ग के समक्ष है। इस कार्य का सम्पन्न किया जाना, न सिर्फ यूरोपीय अपितु (अब तो यह भी कहा जा सकता है कि) एशियाई प्रतिक्रिया के भी सब से शक्तिशाली दुर्ग का विनाश—रूसी सर्वहारा वर्ग को अन्तारराष्ट्रीय क्रान्तिकारी सर्वहारा वर्ग का अगुआ बना देगा।"*

हम जानते है कि १९०५ के क्रान्तिकारी सघर्ष ने रूसी श्रमिक वर्ग का अन्तारराष्ट्रीय महत्व बढाया था और १९१७ में जारशाही का तख्ता पलटने से रूसी सर्वहारा वर्ग अन्तारराष्ट्रीय क्रान्तिकारी सर्वहारा वर्ग का अगुआ बन चुका था। लेकिन यह हुआ 'क्या करे?' लिखा जाने के १५ वर्षो बाद। ९ जनवरी १९०५ को पैलेस स्क्वेयर में श्रमिको की हत्या के बाद क्रान्ति की जो लहर उठी उसने तत्काल ही यह प्रश्न ला खडा किया कि पार्टी जनता को किधर ले जाय और एतदर्थ कौनसी प्रणाली अपनाय। और यहा फिर लेनिन ने मार्क्स से 'परामर्श किया'। उन्होने १८४८ के फ्रासीसी और जर्मन बूर्जवाई-जनवादी क्रान्तियो के सबध में मार्क्स के ग्रन्थो का पूरी तरह अध्ययन किया। ये ग्रन्थ थे 'फ्रास में वर्ग सघर्ष १८४८ से १८५० तक' और फ्र० मेहरिग द्वारा प्रकाशित मार्क्स और एगेल्स के 'साहित्यिक उत्तराधिकार' का तीसरा खड (जर्मन क्रान्ति के विषय में)।

जून और जुलाई १९०५ में इल्यीच ने 'जनवादी क्रान्ति मे सामाजिक-जनवाद की दो कार्यनीतिया' शीर्षक एक पैम्फ्लेट लिखा था जिसमे उन्होने बोल्शेवीको के कार्यों का उल्लेख किया था जिन्होंने श्रमिक जनता मे निरकुशता के विरुद्ध एक सबल और अटल सघर्ष छेडने और जरूरत हुई तो निरकुशता के विरुद्ध हथियार उठाने का अनुरोध किया

---

*व्ला० इ० लेनिन, चुने हुए ग्रन्थ, खड १ भाग २ पृष्ठ [illegible]।

था और मेन्शेवीको की पद्धति का उल्लेख किया था जो उदारवादी वूर्जवाओ के साथ अवसरवाद की नीति वरत रहे थे। लेनिन ने अपने पैम्फ्लेट में कहा था कि ज़ारशाही को समाप्त करना ज़रूरी है। उन्होने लिखा था कि "(नये 'ईस्क्रा' वादियों का*—न० क्रू०) सम्मेलन यह वात भूल गया कि जव तक सत्ता ज़ार के हाथो में होगी तव तक प्रतिनिधियो द्वारा किये गये समस्त निर्णय वेकार और अनर्गल प्रलाप समझे जायेंगे, वैसे ही जैसे कि १८४८ की जर्मन क्रान्ति के इतिहास में प्रसिद्ध फ्रैंकफर्ट ससद के 'निर्णय' होते थे। 'नोए रैनिशे त्सैतुग' में क्रान्तिकारी सर्वहारा वर्ग के प्रतिनिधि मार्क्स ने फ्रैंकफर्ट के उदारवादी 'ओस्वोवोज्देन्त्सी'** की वड़ी निर्दयता एवं व्यग के साथ आलोचना की थी क्योकि जव वे वोलते तव उनके मुह से अच्छे अच्छे शव्द निकलते, जव निश्चय करते तो यह सारे ही 'निश्चय' जनवादी होते, साथ ही वे हर तरह की आज़ादी का 'सघटन' करते, लेकिन वास्तविकता यह

---

*नये 'ईस्क्रा' वादी—मेन्शेवीक।

'ईस्क्रा'—लेनिन द्वारा सन् १९०० में स्थापित किया गया पहला रूसी मार्क्सवादी पत्र। सन् १९०३ में रूसी सामाजिक-जनवादी श्रमिक पार्टी की द्वितीय कांग्रेस के वाद, जव पार्टी दो भागो में—वोल्शेवीक (क्रान्तिवादी) और मेन्शेवीक (अवसरवादी)—वट गई, 'ईस्क्रा' पर मेन्शेवीकों का अधिकार हो गया। 'पुराने' लेनिनवादी 'ईस्क्रा' से भिन्नता प्रकट करने के लिए, उसे 'नया' 'ईस्क्रा' कहने लगे। इस प्रकार नये 'ईस्क्रा' वादियो का नाम पड़ा। —सं०

**ओस्वोवोज्देन्त्सी—'ओस्वोवोज्देनिये' वूर्जवाई उदारवादी दल के सदस्य। यह दल रूस में सन् १९०२-१९०५ में विद्यमान था। जर्मन राष्ट्रीय सभा के उदारवादी प्रतिनिधियों को लेनिन इसी नाम से पुकारते थे।— सं०

थी कि उन्होंने सारी ताकत सम्राट के हाथो में छोड़ रखी थी। उन्होंने सम्राट के अधीनस्थ सैनिक दलो के खिलाफ कोई सशस्त्र विद्रोह नही किया था। और जब फ्रैंकफर्ट 'ओस्वोबोज्देन्त्सी' अपने कामो में व्यस्त थे उस समय सम्राट को मौका मिल गया, उसने अपनी सेनाए सघटित की और वास्तविक शक्ति के आधार पर जो प्रतिक्रान्ति हुई उसने जनवादियो का, उनके अच्छे अच्छे 'निर्णयो' के होते हुए भी सफाया कर दिया।"*

और ब्लादीमिर इल्यीच ने यह प्रश्न सामने रखा क्या बूर्जवा वर्ग, ज़ारशाही के साथ मिल कर रूसी क्रान्ति को पददलित कर देगा, अथवा हम, मार्क्स के शब्दो में 'लौकिक तरीके से,' ज़ारशाही से खुद ही निपट लेगे?

"अगर क्रान्ति को पूरी पूरी विजय मिली, तो हम ज़ारशाही के साथ जैकोबी ढग से, अथवा, अगर आप चाहे तो, लौकिक ढग से, निपट लेगे। मार्क्स ने १८४८ में अपने प्रसिद्ध 'नोए रैनिशे त्सैतुग' में लिखा था. 'फ्रान्स में आतक बूर्जवा के दुश्मनो—निरकुशता, सामतवादी और टुटपुजियेपन—से निपटने के लौकिक तरीके के अलावा और कुछ न था।' (मार्क्स, 'नखलास', मेहरिग सस्करण, खड ३, पृष्ठ २११ देखिये।) क्या उन लोगो ने, जो जनवादी क्रान्ति के काल में, रूस के सामाजिक-जनवादी श्रमिको को 'जैकोबीवाद' का नाम ले ले कर डराने-धमकाने का प्रयास करते है, कभी मार्क्स के इन शब्दो के अर्थ पर विचार किया है?"**

मेन्शेवीको का कथन था कि उनका कार्य है "सर्वाधिक शान्तिवादी विरोधी दल की पार्टी के रूप में काम करना" और आंशिक एव आकस्मिक रूप से सत्ता ग्रहण करना। कतिपय नगरो में क्रान्तिकारी कम्यूनो की

---

*ब्ला० इ० लेनिन, चुने हुए ग्रन्थ, खड १, भाग २, पृष्ठ ३०।

**वही, पृष्ठ ५६।

स्थापना करना भी उनके कार्यो से वाहर न था। "'क्रान्तिकारी कम्यूनो' के क्या माने?" लेनिन ने प्रश्न किया और साथ ही उत्तर दिया "क्रान्तिकारी विचारो की गड़वड़ी से वे (नये 'ईस्क्रा' वादी—न० क्रू०) जैसा कि प्राय होता है क्रान्तिकारी लफ्फाजी में पड जाते है। हा 'क्रान्तिकारी कम्यून' शव्दो का जो प्रयोग सामाजिक-जनवाद के प्रतिनिधियो द्वारा पास किये गये एक प्रस्ताव में किया गया है, सिवाय क्रान्तिकारी लफ्फाज़ी के और कुछ नही है। जव जव अतीत के 'मोहक' शव्दो का उपयोग भविष्य के कामो पर परदा डालने के लिए किया गया तव तव मार्क्स ने इस लफ्फाज़ी की भर्त्सना की। ऐसी दशाओ में वह मोहक शव्द, जिसने इतिहास में अपना काम कर लिया है, निरर्थक, हानिकर, दिखावटी और वचकानी वकवास वन कर रह जाता है। हमें चाहिए कि हम श्रमिको और सारी जनता को यह वात साफ साफ समझा दें कि हम अस्थायी क्रान्तिकारी सरकार की स्थापना क्यों चाहते है, और यदि हम आम विद्रोह की, जिसका आरम्भ हो चुका है, विजय के तत्काल वाद सरकार पर निर्णयात्मक प्रभाव डाले तो सचमुच क्या क्या परिवर्तन देखने में आवेंगे—यह कुछ प्रश्न राजनैतिक नेताओ के सामने है।"*

और उन्होंने आगे यह भी कहा था—

"मार्क्सवाद को भ्रष्ट करने वाले इन लोगो ने इस वात पर कभी विचार नही किया कि मार्क्स ने शस्त्रो की आलोचना के स्थान पर आलोचना के शस्त्रो की ज़रूरत के संवध में क्या कहा था। वे लोग व्यर्थ में मार्क्स का नाम ले ले कर वस्तुत. उन कार्यो के संवंध में प्रस्ताव तैयार करते है जो पूर्णत उन फ्रैंकफर्ट वूर्जवाई वकवादियो की भावना से ओतप्रोत होते है जिन्होने निरंकुशता की पूरी पूरी आलोचना की थी और जनवादी चेतना को और अधिक गम्भीर वना दिया था। किन्तु वे लोग यह न समझ सके

---

*वही, पृष्ठ ८३।

थे कि क्रान्ति का काल क्रियाशीलता का काल है जो नीचे से भी होती है और ऊपर से भी।"*

"क्रान्तियां इतिहास के इंजन हैं," मार्क्स का कथन था। पनपती हुई क्रान्ति के महत्व का मूल्यांकन करते हुए लेनिन ने मार्क्स के यही विचार उद्धृत किये थे।

'नोए रैनिशे त्सैतुंग' में मार्क्स के कथन का विश्लेषण करते हुए लेनिन ने सर्वहारा वर्ग और कृषक वर्ग की क्रान्तिकारी-जनवादी अधिनायकत्व का अर्थ स्पष्ट किया था। किन्तु सादृश्यता का दिग्दर्शन कराने के लिए, उन्होंने हमारी बूर्जुवाई-जनवादी क्रान्ति और १८४८ की जर्मन बूर्जुवाई-जनवादी क्रान्ति के अन्तर पर अपने विचार रखे थे। उन्होंने लिखा था—

"क्रान्तिकारी समाचारपत्र के प्रकाशन के प्राय एक वर्ष बाद ('नोए रैनिशे त्सैतुंग' का प्रकाशन १ जून १८४८ को आरम्भ हुआ था), केवल अप्रैल १८४९ में मार्क्स और एंगेल्स ने श्रमिकों के एक विशिष्ट संघटन के पक्ष में घोषणा की थी। इस समय तक वे एक जनवादी पत्र निकाल रहे थे जिसका स्वतंत्र श्रमिक पार्टी से कोई संघटनात्मक संबंध नहीं था। हमारे आज के दृष्टिकोण से यह तथ्य बेतुका और असम्भावित प्रतीत होता है। इससे हमें यह पता जरूर लगता है कि उन दिनों की जर्मन सामाजिक-जनवादी पार्टी और आज की रूसी सामाजिक-जनवादी पार्टी के बीच कितना जबरदस्त फर्क है। इस तथ्य से पता चलता है कि जर्मन जनवादी क्रान्ति में आन्दोलन की सर्वहारावादी विशेषताएं, अर्थात् उसके भीतर बहने वाली सर्वहारावाद की धारा, कितनी शिथिल रही थी (उसका कारण यह था कि १८४८ में आर्थिक और राजनीतिक दोनों ही रूप में, जर्मनी एक पिछड़ा हुआ और राज्य के रूप में एक विघटित देश था)।"**

---

*वही, पृष्ठ १०[illegible]।

**वही, पृष्ठ १६८।

व्लादीमिर इल्यीच ने जो लेख १९०७ में लिखे थे वे विशेष रूप से दिलचस्प है। इन लेखो का विषय है—मार्क्स का पत्र-व्यवहार और उनके क्रिया-कलाप। ये लेख है 'कार्ल मार्क्स के ल० कुगेलमान को लिखे गये पत्रो के रूसी अनुवाद की भूमिका' (खड १२, पृ० ८३-९१), 'दूसरी दूमा पर फ्र० मेहरिंग का कथन (खड १२, पृष्ठ ३४३-४९) और ''ज० फ० वेकर, ज० देत्सघेन, फ्रे० एगेल्स, कार्ल मार्क्स तथा दूसरो द्वारा फ० अ० ज़ोर्गे वग़ैरह को लिखे गये पत्रो' के रूसी अनुवाद की भूमिका' (खंड १२, पृष्ठ ३१९-३८, चतुर्थ रूसी सस्करण)।

इन लेखो से इस वात का पता चलता है कि लेनिन मार्क्स का अध्ययन कैसे करते थे। अन्तिम लेख विशेष रूप से दिलचस्प है। यह उस समय लिखा गया था जव वोग्दानोव से मतभेद हो जाने के वाद लेनिन ने दर्शनशास्त्र का अध्ययन वड़ी गम्भीरता के साथ करना दुवारा आरम्भ कर दिया था। उस समय द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद संवंधी प्रश्नो की ओर उनका ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट हुआ था।

क्रान्ति की पराजय हो चुकने के वाद के रूस में जो प्रश्न उठे थे उनके सदृश प्रश्नो तथा द्वंद्वात्मक एवं ऐतिहासिक भौतिकवाद के प्रश्नो पर मार्क्स ने क्या कहा था इसका अध्ययन करते हुए लेनिन ने मार्क्स से द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद की प्रणाली को ऐतिहासिक विकास के अध्ययन पर प्रयुक्त करने की विधि सीखी थी। फ० अ० जोर्गे के पत्रो की अपनी भूमिका में उन्होने लिखा था: "अग्रेज़ी, अमेरिकी और जर्मन श्रम आन्दोलनो के वारे में मार्क्स और एगेल्स ने क्या क्या कहा था इसकी तुलना करना वड़ा उपयोगी है। यह तुलना उस समय और भी अधिक महत्वपूर्ण वन जाती है जव हम इस वात पर ध्यान देते है कि एक ओर तो जर्मनी और दूसरी ओर इंगलैंड तथा अमेरिका पूजीवादी विकास के भिन्न भिन्न स्तरो, और इन देशो के समस्त राजनीतिक जीवन पर एक वर्ग के रूप में वूर्जवाओ के दमन के भिन्न भिन्न स्वरूपो का प्रतिनिधित्व

करते हैं। जो बात हम यहा देखते हैं वह वैज्ञानिक दृष्टिकोण से भौतिकवादी द्वन्द्व और उस योग्यता का एक नमूना है जिसके अधीन मनुष्य प्रश्न के भिन्न भिन्न विषयो और भिन्न भिन्न पहलुओ को, भिन्न भिन्न राजनीतिक और आर्थिक दशाओ की खास खास विशेषताओं के संबंध में, उपयोग में लाने के लिए, निश्चित करता है और उनपर जोर देता है। श्रमिक पार्टी की व्यावहारिक नीति और क्रिया-कलापो की दृष्टि से यहा हम जो कुछ देखते हैं वह उस मार्ग का एक नमूना है जिसके मुताबिक 'कम्यूनिस्ट घोषणापत्र' के रचयिताओ ने भिन्न भिन्न देशो में राष्ट्रीय श्रम आन्दोलन के भिन्न भिन्न स्तरो के अनुसार लडाकू सर्वहारा वर्ग के कार्यों की व्याख्या की थी।"*

१९०५ की क्रान्ति ने कई जरूरी प्रश्न खडे कर दिये थे और उन्हे हल करने में लेनिन ने मार्क्स के ग्रन्थो का बडी गम्भीरता के साथ अध्ययन किया था। सच बात तो यह है कि मार्क्स का अध्ययन करने का लेनिनवादी (वस्तुत मार्क्सवादी) तरीका क्रान्ति की अग्नि में ही निखरा था।

मार्क्सवाद के अध्ययन के इस तरीके ने लेनिन को उस हथियार से लैस कर दिया था जिससे मार्क्सवाद को विकृत करने और उसकी क्रान्तिकारी भावना को निस्सार बनाने के प्रयासो के विरुद्ध लडा जा सकता था। हम जानते हैं कि 'राज्य और क्रान्ति' शीर्षक लेनिन की पुस्तक ने अक्तूबर क्रान्ति और समाजवादी सरकार की स्थापना में एक महत्वपूर्ण भाग लिया था। यह पुस्तक राज्य के सबध मे मार्क्स के विचारो के गहन अध्ययन का ही परिणाम है।

मैं यहा लेनिन की 'राज्य और क्रान्ति' के प्रथम पृष्ठ को उद्धृत करूगी।

---

*व्ला० इ० लेनिन, मार्क्स-एंगेल्स-मार्क्सवाद मास्को १९५३ पृष्ठ २३५।

"आज मार्क्स के उपदेशो के संबंध में जो कुछ हो रहा है वही, इतिहास काल में, मुक्ति के लिए लडने वाले दलित वर्गों के नेताओ और क्रान्तिकारी विचारको के उपदेशो के संबंध में वार वार हुआ है। उत्पीडक लोग वडे वडे क्रान्तिकारियो पर, उनके जीवन काल में, वरावर भूखे भेड़ियो की तरह टूटते रहे, उनके उपदेशो से उग्र विद्वेष और अत्यधिक घृणा करते रहे और उन उपदेशो को असत्य ठहराने और अपमानित करने का वरावर प्रयास करते रहे। इन क्रान्तिकारियो की मृत्यु के वाद उन्हे एक प्रकार से देवता स्वरूप या ऋपितुल्य सिद्ध करने के प्रयत्न किये जा रहे है। और उत्पीड़ितो की 'सात्वना' के लिए, वल्कि उन्हे धोखा देने के लिए, उपर्युक्त क्रान्तिकारियो के नामो के चारो ओर एक प्रभा-मण्डल निर्माण करने के प्रयत्न किये जाते है। साथ ही साथ क्रान्तिकारी उपदेशो का सार खत्म कर दिया जाता है, क्रान्तिकारी तीक्ष्णता को कुठित किया जाता है और इन उपदेशो को वुरा-भला कहा जाता है। सम्प्रति श्रमिक वर्ग आन्दोलन के अवसरवादी और वूर्जवा मार्क्सवाद की इस 'डाक्टरी' से सहमत है। ये लोग इस उपदेश के क्रान्ति-पक्ष को, इसकी क्रान्तिकारी आत्मा को छोड देते है, या दवा देते है या विकृत कर देते है। वूर्जवाओ को जो स्वीकार्य है या स्वीकार्य-सा दिखाई देता है, उसे वे लोग आगे लाते है और उसकी प्रशसा करते है। अव सारे सामाजिक-अन्धराष्ट्रवादी 'मार्क्सवादी' है (आप हसे नही!)। और जर्मनी के वूर्जवाई पंडित जो कल तक मार्क्सवाद का उन्मूलन करने की दिशा में विशेषज्ञ समझे जाते थे अव वार वार 'राष्ट्रीय जर्मन' मार्क्स की वातें करते है। उनका निश्चयपूर्वक कहना है कि मार्क्स ने श्रमिको के सघो को शिक्षित किया था और ये सघ एक नृशंस युद्ध चलाने के लिए कितनी शान से सघटित हुए है!

"इन परिस्थितियो में, यह देखते हुए कि मार्क्सवाद को कितने वडे पैमाने पर और कितने अभूतपूर्व ढग से विकृत किया गया है हमारा कर्तव्य

है कि मार्क्स ने हमें राज्य के विषय में सचमुच जो कुछ सिखाया है उसकी पुन.स्थापना करे।"*

'लेनिनवाद के मूल सिद्धात' में साथी स्तालिन ने लिखा था–

"सिर्फ अगले ज़माने में, सर्वहारा वर्ग द्वारा की गई सीधी कार्यवाही के ज़माने में, सर्वहारा क्रान्ति के ज़माने में जब बूर्जवा को सत्ताविहीन करने का प्रश्न तात्कालिक कार्यवाही का प्रश्न बन चुका था, जब सर्वहारा वर्ग के रिज़र्वों का मूल नीति सबधी प्रश्न एक ज्वलत प्रश्न बन गया था; जब संघर्ष और सघटन–ससदीय और गैर-ससदीय (कार्यनीति)–के समस्त स्वरूप पूर्णत स्पष्ट हो चुके थे, उस ज़माने में सर्वहारा के सघर्ष की सम्यक् मूल नीति और कार्यनीति को निश्चित किया जा सकता था। इसी अवधि में लेनिन मूल नीति और कार्यनीति संबधी मार्क्स और एगेल्स के सुविचारो को प्रकाश में लाये। ये वे विचार थे जिन्हे द्वितीय अताराष्ट्रीय सघ के अवसरवादी दबाना चाहते थे। परन्तु लेनिन ने अपने को मार्क्स और एगेल्स की कार्यनीति सबधी कुछ मान्यताओ की पुन स्थापना तक ही सीमित न रखा। उन्होंने इन मान्यताओ का और अधिक विस्तार किया तथा उन्हे नये नये विचारो और अन्य मान्यताओ से परिपुष्ट भी किया। इन सब ने मिल कर सर्वहारा के वर्ग सघर्ष के नेतृत्व के लिए नियमो और निर्देशन-सिद्धान्तो की एक प्रणाली का रूप ले लिया।"

मार्क्स और एगेल्स ने लिखा था कि उनके "कथन जड सिद्धान्त नही अपितु कार्य के लिए निर्देशन स्वरूप है।" लेनिन ने बार बार इसी बात की पुष्टि की। मार्क्स और एगेल्स के ग्रंथो के अध्ययन की उनकी पद्धति क्रान्तिकारी व्यवहार और सर्वहारा क्रान्तियो के युग के समस्त

---

*व्ला॰ इ॰ लेनिन, चुने हुए ग्रन्थ, खंड २, भाग १, पृष्ठ [illegible]।

वातावरण से लेनिन को मार्क्स के क्रान्तिकारी सिद्धान्त को कार्यो के वास्तविक निर्देशन का स्वरूप देने में सहायता मिली।

मै एक वहुत महत्वपूर्ण प्रश्न पर कुछ चर्चा करूगी।

अभी हाल ही में हमने सोवियत शासन की १५ वी वर्षगांठ मनाई थी और इस सिलसिले में इस वात पर पुन. विचार किया था कि अक्तूवर १९१७ में सत्तार्जन के प्रयासो को किस प्रकार केन्द्रित किया गया था। वह अपने आप नही हुआ। लेनिन ने इसकी एक पूरी पूरी योजना वनाई थी और उन्हे अपने कार्यो में विद्रोहो के संघटन संवधी मार्क्स के निर्देशों से पथ-प्रदर्शन मिला था।

अक्तूवर क्रान्ति ने अधिनायकत्व को सर्वहारा वर्ग के हाथ में दे दिया था और संघर्ष की दशाओ में क्रान्तिकारी परिवर्तन उपस्थित कर दिये थे। परन्तु इन सव का एक-मात्र कारण यह है कि लेनिन का पथ-प्रदर्शन मार्क्स और एगेल्स के प्रवन्धो के शव्दो से नही अपितु उन शव्दो में निहित क्रान्तिकारी भावना से हुआ था। और लेनिन सर्वहारा अधिनायकत्व के युग में मार्क्सवाद का उपयोग समाजवादी निर्माण के लिए करने में सक्षम थे।

मै इस सवव में कुछ वातें स्पष्ट देने का प्रयत्न करूंगी। इस संवंध में एक व्यापक अनुसधान कार्य की जरूरत है जो इस वात पर प्रकाश डाल सके कि क्रान्तिकारी आन्दोलन से सवद्ध कार्यो को सम्पन्न करने के निमित्त लेनिन ने मार्क्स से क्या लिया, कैसे लिया और जो कुछ लिया वह कव लिया। मैंने राष्ट्रीय प्रश्न, साम्राज्यवाद इत्यादि सर्वाधिक महत्वपूर्ण विषयो पर कोई प्रकाश नही डाला है। यह कार्य लेनिन के ग्रंथों के पूरे संग्रह, लेनिन के सकलित ग्रंथो के प्रकाशन से सुगम हो गया है। क्रान्तिकारी संघर्ष के समस्त चरणो पर, आद्योपान्त, मार्क्स के सिद्धातो के अध्ययन का लेनिन का जो तरीका रहा है उससे हमें न सिर्फ मार्क्स समझने में अपितु खुद लेनिन को, मार्क्स का अध्ययन

करने के उनके तरीके को और मार्क्स के वचारो को व्यावहारिक रूप देने की उनकी विधि को समझने में भी सहायता मिलेगी।

मार्क्स के अध्ययन के संबंध में एक दूसरा पहलू भी उल्लेखनीय है। यह पहलू निश्चय ही बडे महत्व का है। लेनिन ने न सिर्फ वही बाते पढी जो मार्क्स और एंगेल्स ने और मार्क्स के 'आलोचको' ने लिखी थी, अपितु उन सभी साधनो का भी अध्ययन किया जिनके कारण मार्क्स को अपन दृष्टिकोण तक पहुचने में मदद मिली थी। उन्होने उन ग्रंथो को भी पढा जिनके कारण मार्क्स के विचार पुष्ट हो कर एक विशेष दिशा के गामी बने थे। हम कह सकते है कि लेनिन ने मार्क्सवादी दुनियावी दृष्टिकोण के स्रोतो का और उन सारी बातो का अध्ययन किया जिन्हे मार्क्स ने दूसरे लेखको से लिया था। मार्क्स ने यह सारी चीजें कैसे ली इस सबध में भी लेनिन ने अच्छा-खासा अध्ययन किया था।

लेनिन ने द्वद्वात्मक भौतिकवाद की प्रणाली का गहन अध्ययन किया था। 'सैनिक भौतिकवाद का महत्व' (१९२२) शीर्षक अपने लेख में लेनिन ने लिखा था कि 'पोद ज्नामेनेम मार्क्सीज्मा'* के लेखको के लिए भौतिकवादी दृष्टिकोण मे हेगेलियन द्वन्द्ववाद के क्रमबद्ध अध्ययन की व्यवस्था करना आवश्यक है। उनका विचार था कि बिना ठोस दार्शनिक आधार के बूर्जवा विचारो के प्रहारो और बूर्जवाई सासारिक दृष्टिकोण के पुनस्सस्थापन के विरुद्ध खडा हो सकना भी असम्भव है। उन्होने स्वय अपने अनुभवो से लिखा था कि हेगेलियन द्वन्द्ववाद के अध्ययन की व्यवस्था कैसे होनी चाहिए। सबधित अवतरण इस प्रकार है–

"यह समझ रखना चाहिए कि बिना ठोस दार्शनिक आधार स्थापित हुए बूर्जवा विचारो के प्रहारो और बूर्जवाई सासारिक दृष्टिकोण के

---

*१९२२ से लेकर १९४४ तक मास्को में प्रकाशित एक दार्शनिक पत्रिका।

पुनस्संस्थापन के विरुद्ध कोई भी प्राकृतिक विज्ञान या भौतिकवाद खड़ा नही हो सकता। इस संघर्ष में पैर जमाने के लिए और उसका अन्त सफल वनाने के लिए प्राकृतिक वैज्ञानिक को चाहिए कि वह एक आधुनिक भौतिकवादी वने और उस भौतिकवाद का जागरूक अनुगामी सिद्ध हो जिसका प्रतिनिधित्व मार्क्स ने किया है। दूसरे शब्दों में उसे द्वद्वात्मक भौतिकवादी वनना चाहिए। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए 'पोद ज्नामेनेम मार्क्सीज्मा' के लेखकों को चाहिए कि वे भौतिकवादी दृष्टिकोण से हेगेलियन द्वन्द्ववाद के यानी उस द्वन्द्ववाद के जिसका मार्क्स ने व्यावहारिक रूप से अपनी 'पूजी' तथा अपने ऐतिहासिक और राजनैतिक ग्रंथो में उपयोग किया था, क्रमवद्ध अध्ययन की व्यवस्था करे . हेगेलियन द्वन्द्ववाद का भौतिक दृष्टि से प्रयोग करने की मार्क्स की प्रणाली को आधार मान कर हम सभी दृष्टिकोणो से इस द्वन्द्ववाद को व्यापक वना सकते है और हमें वनाना भी चाहिए, पत्रिका में हेगेल के प्रधान ग्रंथो के उद्धरण छापने चाहिए, भौतिक ढंग से उनकी व्याख्या करनी चाहिए और जिस ढग से मार्क्स ने द्वन्द्ववाद का प्रयोग किया था उसकी तथा राजनैतिक और आर्थिक संवंधो के क्षेत्र में प्रयुक्त द्वन्द्ववाद की सहायता से उनपर टीका-टिप्पणी करनी चाहिए। अभी हाल ही के इतिहास, विशेष रूप से आधुनिक साम्राज्यवादी युद्ध और क्रान्ति में द्वंद्ववाद के इस प्रकार के वहुत से उदाहरण देखने को मिलते है। मेरी समझ में 'पोद ज्नामेनेम मार्क्सीज्मा' के संपादको और लेखको को 'हेगेलियन द्वन्द्ववाद के भौतिकवादी दोस्तो का समाज' जैसी कोई संस्था होनी चाहिए। आधुनिक प्राकृतिक वैज्ञानिको को (यदि वे ढूढना जानते है और अगर हम उनकी सहायता करना सीख ले तो) हेगेलियन द्वन्द्ववाद में, जिसकी व्याख्या भौतिक ढंग से की गई है, दार्शनिक समस्याओ के ढेरों उत्तर मिल जायेंगे। ये समस्याएं प्राकृतिक विज्ञान के क्षेत्र में होने वाली क्रान्ति के परिणामस्वरूप उपस्थित

होती हैं और इनके फलस्वरूप बूर्जवा ढंग के बौद्धिक प्रशसक प्रतिक्रियाओं में 'लडखडा' जाते हैं।"*

'लेनिन के सकलित ग्रथ' खड ६ और १२ अब प्रकाशित हो चुके हैं जिनसे पता चलता है कि जब लेनिन ने हेगेल के मूल ग्रन्थों का विश्लेपण किया था उस समय उनके मस्तिष्क में क्या क्या प्रतिक्रिया हो रही थी, कि उन्होंने हेगेल का अध्ययन करने में द्वद्वात्मक भौतिकवाद की पद्धति का कैसे उपयोग किया था, उन्होंने इस अध्ययन को मार्क्स के अध्ययन के साथ कैसे सबद्ध किया था और भिन्न भिन्न परिस्थितियों में भी मार्क्सवाद को क्रिया-कलापों का पथ-प्रदर्शक बनाने की योग्यता का कैसे परिचय दिया था।

किन्तु लेनिन ने सिर्फ हेगेल का ही अध्ययन नहीं किया। उदाहरणार्थ उन्होंने मार्क्स का वह पत्र पढा था जो उन्होंने एगेल्स को, १ फरवरी १८५८ को लिखा था। इस पत्र में उन्होंने लासाल की 'फिलासफी आफ हेराक्लीटस दी आब्स्क्योर आफ एफेसस' (खड दो) शीर्षक पुस्तक की आलोचना करते हुए उसे एक 'मामूली-सी' पुस्तक बताया था। आरम्भ में लेनिन सक्षेप में मार्क्स के मत पर विचार करते हैं "लासाल महज हेगेल की बात दुहराता है, उसकी नक़ल करता है, हेराक्लीटस के कुछ स्थलों को लाखों बार निगलता है और अपनी पुस्तक को अति चतुराई और विद्वत्ता रूपी मेहराब के पत्थरों से इतनी बोझिल बना देता है कि उसपर से पाठक का सारा विश्वास उठ सा जाता है।"** फिर भी लेनिन ने लासाल की पुस्तक पढी, उसका सक्षेप तैयार किया, उसमें उद्धरण नोट किये, अपनी टिप्पणी लिखी और फिर वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे

---

* व्ला० इ० लेनिन, मार्क्स-एगेल्स-मार्क्सवाद, मास्को, १९५३, पृष्ठ ६१२-१३।

** 'लेनिन के सकलित ग्रथ' खड ३८, पृष्ठ [illegible]

"कुल मिला कर अगर देखा जाय तो मार्क्स की राय ठीक जान पडती है। लासाल की पुस्तक पढने योग्य नही है।" इस पुस्तक के परीक्षण का यह लाभ ज़रूर हुआ कि लेनिन ने मार्क्स को और भी अच्छी तरह समझ लिया और साथ ही यह भी समझ लिया कि मार्क्स ने उस पुस्तक को क्यो पसन्द नही किया था।

अन्त में, मैं मार्क्स के ग्रन्थ के सवंध में लेनिन के एक और कार्य की ओर पाठकों का ध्यान आकृष्ट करूंगी—यह है मार्क्सवाद को लोकप्रिय बनाने में उनका योग। किसी पुस्तक को लोकप्रिय रूप देने वाले व्यक्ति को उस समय खुद वहुत कुछ सीखना पड़ता है जव वह पुस्तक को 'वड़ी गम्भीरता' से उठाता है और सव से सरल एवं सव से अधिक वोधगम्य रूप में किसी सिद्धान्त का सार प्रस्तुत करने में जुट जाता है।

लेनिन ने ऐसे कामो को वड़ी गम्भीरता से उठाया। निर्वासन काल में उन्होंने प्लेखानोव और अक्सेलरोद को एक पत्र में लिखा था कि वे इतना ही चाहते हैं कि श्रमिको के लिए लिखना सीख जायं।

लेनिन की उत्कट अभिलाषा थी कि मार्क्सवाद को सारी श्रमिक जनता समझ ले। १८९०-१९०० में, मार्क्सवादी मंडलो में काम करते हुए, उन्होंने सभी को 'पूजी' का प्रथम खंड समझाने का प्रयत्न किया और अपने श्रोताओ के जीवन से उदाहरण देने शुरू किये। १९११ में लांगजुमो (पेरिस के निकट) पार्टी के स्कूल में उत्तरोत्तर वढते हुए क्रान्तिकारी आन्दोलन के नेताओ को प्रशिक्षण देते समय लेनिन ने श्रमिको के समक्ष राजनीतिक अर्थशास्त्र पर भाषण पढे थे और आसान से आसान तरीके से उन्हे मार्क्सवाद के मूल सिद्धान्त समझाये थे। 'प्राव्दा' के अपने लेखो में इल्यीच ने मार्क्सवाद के भिन्न भिन्न पहलुओ को लोकप्रिय वनाने का प्रयास किया था। १९२१ में ट्रेड-यूनियनो पर विचार-वार्ताओ

के दौरान में लेनिन ने किसी घटना और विषय को द्वन्द्वात्मक दृष्टिकोण से समझने का तरीका बताया था। उनका कहना था कि "अगर आप कुछ जानना चाहते है तो आपको उसका अध्ययन सभी दृष्टिकोणो मे करना चाहिए, उसके सारे पहलुओ पर मनन करना चाहिए और उसके सारे सबधो और उसकी मध्यवर्ती कडियो को देखना चाहिए। हम उनके बारे में पूर्णतया सब कुछ जान तो जरूर न सकेंगे, मगर हा अपने व्यापक अध्ययन के परिणामस्वरूप भ्रष्ट गल्तियो और त्रुटियो मे अवश्य बच सकेगे। यह पहली बात है। दूसरी बात यह है कि जो चीज भी उठाई जाय वह उसके विकास-चरण में, 'स्व-गति' (जैसा कि प्राय हेगेल कहा करता था) में, उसके परिवर्तन काल में उठाई जाय। यही तो द्वद्वात्मक तर्क की माग है। तीसरी बात यह है कि सत्य के मानदण्ड तथा मनुष्य की आवश्यकताओ के द्योतक रूपों में उस विषय की पूर्ण 'व्याख्या' प्रस्तुत करने के लिए मानव-अनुभवो का उपयोग होना चाहिए। चौथी बात यह कि द्वद्वात्मक तर्क हमे यह सिखाता है कि 'निस्सार सत्य कोई नही होता। सत्य हमेशा सारवान होता है' जैसा कि स्वर्गीय प्लेखानोव, हेगेल का उद्धरण देते हुए, कहा करता था।"*

उपर्युक्त कुछ पक्तियो से स्पष्ट हो जायेगा कि लेनिन ने, सदैव ही द्वद्वात्मक भौतिकवाद की पद्धति का उपयोग करके, मार्क्स ने 'परामर्श लेकर' और दार्शनिक विषयो पर बरसो काम करके क्या क्या प्राप्त किया था। इन पक्तियो से संक्षेप में यह साफ पता चल जायेगा कि विज्ञानों का अध्ययन करने के लिए किन किन बातो का होना अनिवार्य है।

जिस तरह लेनिन ने मार्क्स का अध्ययन किया था उसने हमें पता

---

*व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी संस्करण खण्ड ३२ पृष्ठ ७२-७३।

चलता है कि हमें लेनिन का अध्ययन कैसे करना चाहिए। उनके उपदेश मार्क्स के उपदेशो से अविच्छिन्न रूप से संवद्ध है—ये है व्यवहार में मार्क्सवाद, साम्राज्यवाद और सर्वहारा क्रान्तियो के युग में मार्क्सवाद।

लेनिन अध्ययन के लिए पुस्तकालयों का कैसे प्रयोग करते थे

लेनिन ने अपना काफी समय पुस्तकालयो में ही व्यतीत किया। जव वे समारा में रहते थे उस समय वहुत पुस्तके पुस्तकालय से मगाया करते थे। वाद में, पीटर्सवर्ग में दिनो भर वे सार्वजनिक पुस्तकालय में पढते रहे और फ्री इकानोमिक समिति के पुस्तकालय तथा अन्य पुस्तकालयो से पुस्तके मंगाते रहे। जेल में भी उनकी वहन उनके लिए पुस्तकालयो की पुस्तके लाया करती। इन पुस्तको में से वे अपनी टिप्पणियां तैयार कर लिया करते। लेनिन ग्रथावली के दूसरे मंस्करण के तीसरे खड में इस वात का उल्लेख है कि 'रूस में पूजीवाद का विकास' शीर्षक अपनी पुस्तक लिखने में उन्हे ५८३ ग्रंथो का अवलोकन करना पडा था। उनकी उक्त पुस्तक में इन सभी ग्रन्थो के निर्देश दिये है। क्या लेनिन के लिए इतनी पुस्तके ख़रीदना कभी सभव हो सकता था? वहुत-सी पुस्तके तो विक्री के लिए प्रकाशित ही नही हुई थी, उदाहरणार्थ ज़ेम्स्तवो की आंकडा सामग्री। यह सामग्री उनके लिए विशेप रूप से मूल्यवान थी। इसके अलावा उस समय वे विद्यार्थी की भाति रह रहे थे और उन्हे एक एक पैसे के लिए जोड-तोड करना पडता था। यदि वे पुस्तकें उन्हे खरीदनी पड़ती तो उनके हज़ारो रूवल खर्च हो गये होते। और इतना धन व्यय करना उनकी सामर्थ्य के वाहर था। इसके अतिरिक्त पुस्तको की दूकान में पुस्तके ढूढने के लिए भी उनके पास समय न था। पुस्तकालयो के कारण उनका वहुमूल्य समय नष्ट होने से वच गया और इस समय को उन्होने

अध्ययन में लगाया। वास्तविकता यह थी कि यदि उनके पास पुस्तकालयो की पुस्तक-सूची न होती तो अनेकानेक पुस्तको का नाम भी उन्हे न मालूम हुआ होता। इन सब बातो के अलावा, उनका कमरा इतना छोटा था कि अपना पुस्तकालय रखने की वहा कोई जगह ही न थी। उनके अध्ययन ने उन्हे 'रूस में पूजीवाद का विकास' शीर्षक उनकी प्रसिद्ध पुस्तक की तैयारी में तो सहायता दी थी, साथ ही इससे उन्हे औद्योगिक श्रमिको तथा कृषको की जीवन-चर्या और उनकी श्रम-व्यवस्था आदि की भी अच्छी जानकारी प्राप्त हुई। अगर ऐसा न होता तो शायद हमारे सामने लेनिन का वह महान व्यक्तित्व न आ पाता जिसे हम सबो ने अपने इन्ही चर्मचक्षुओ से देखा था। 'रूस में पूजीवाद का विकास' पुस्तक १८९९ में प्रकाशित हुई।

विदेशो में तो इल्यीच ने पुस्तकालयो का और भी अधिक उपयोग किया। वे विदेशी भाषाए जानते थे। अतएव उन्होने इन भाषाओं की पुस्तको का अध्ययन किया। विदेशो में तो इन पुस्तको को खरीदने की वे कल्पना भी न कर सकते थे क्योकि वहा उनके लिए एक एक पाई का मूल्य था और उन्हे ट्राम तथा भोजन पर होने वाले व्यय के लिए पैसा पैसा जोडना पडता था। परन्तु पढना उनके लिए अनिवार्य था। पुस्तको तथा विदेशी पत्र-पत्रिकाओ के अभाव में उनका कार्य प्राय असभव हो गया होता और साथ ही उन्हे उतना ज्ञान भी न प्राप्त हो सकता जितना हुआ था।

'सबधियो को पत्र' के अवलोकन से पता चलेगा कि वे पुस्तकालयो को कितना महत्व देते थे।

१८९५ में वे पहली बार विदेश गये और कुछ सप्ताह तक बर्लिन में रह कर वहा के अनुभव प्राप्त करते रहे। वे श्रमिको के जीवन का अध्ययन करने तथा इम्पीरियल पुस्तकालय में पुस्तके पढने में अपना अधिक समय व्यय करते थे। इसके पश्चात्, उसी वर्ष उन्होने जेल में तीन सालो

में ही पुस्तकालय से पुस्तके मंगवाने की व्यवस्था कर ली। जेल पुस्तकालय का प्रयोग करने के अलावा उन्होन वाहर से भी पुस्तके मंगाने का प्रवन्ध किया था। अपनी गिरफ्तारी के तीन सप्ताह वाद उन्होने जेल की अपनी कोठरी से यह पत्र लिखा था—

" . कैदियो को पढ़ने की अनुमति है। यद्यपि मुझे यह वात पहले से ही मालूम थी, फिर भी मैंने जान-वूझ कर यह वात अभियोक्ता से पूछी (जिन लोगों को दंडाज्ञा मिल चुकी है उन्हे भी पढने की सुविधाए दी जाती है)। अभियोक्ता ने इस वात की पुष्टि की कि कैदियो को किसी भी संख्या में पुस्तके भेजी जा सकती है। इन पुस्तको को पढ कर वापस भी किया जा सकता है। फलत. पुस्तके पुस्तकालयो से भी ली जा सकती है। यह व्यवस्था निञ्चय ही अच्छी है।

"लेकिन पुस्तके प्राप्त करना काफी दुष्कर है। वहुत-सी पुस्तको की आवश्यकता पडती है। मै उन पुस्तको की सूची दे रहा हू जिनकी मुझे आवश्यकता है, परन्तु इन्हे प्राप्त करने में काफी श्रम लगेगा। मुझे यह भी विश्वास नही है कि सारी पुस्तके मिल जायेंगी। आप फ्री इकानोमिक समिति के पुस्तकालय पर निर्भर रह सकते है (मैंने वहा से पुस्तके ली है और मेरे १६ रूवल वहा अभी भी जमा है)। इस पुस्तकालय से शुल्क देने पर दो महीने तक के लिए पुस्तके ली जा सकती हैं। परन्तु वहा का संग्रह अच्छा नही है। यदि आप (किसी लेखक या प्रोफेसर की सहायता से) विश्वविद्यालय के पुस्तकालय से तथा वित्त मंत्रालय की विज्ञान समिति के पुस्तकालय से पुस्तके प्राप्त करने की व्यवस्था कर ले तो पुस्तको की कठिनाई दूर की जा सकती है।

"अन्तिम और सवसे कठिन काम है इन पुस्तको को मुझतक पहुंचाना। यह दो एक छोटी छोटी पुस्तके लाने की वात नही है। इसके लिए समय समय पर, और काफी लम्वी अवधि तक के लिए, पुस्तकालयो में जाने, वहां से पुस्तके प्राप्त करने और फिर उन्हे यहा

तक लाने की जरूरत होगी (मैं समझता हू कि यदि आप प्रति बार उतनी पुस्तके यहा ले आयें जितनी ला सकती है, तो पुस्तको की व्यवस्था करने में महीने में एक बार या पन्द्रह दिन में एक बार ही तकलीफ होगी)। तत्पश्चात् पढी जा चुकी पुस्तको को मुझसे वापस भी ले जाना होगा। अच्छा हो यदि आप किसी दरवान, किसी सदेशवाहक अथवा किसी लडके को रख ले जिसे मै कुछ दे दिया करूगा और वह यह काम कर दिया करेगा। यह आवश्यक है कि व्यावहारिक दशाओं में, और पुस्तकालयो में पुस्तके देने के लिए निश्चित नियमो के अनुरूप ही, वहा से पुस्तके प्राप्त करने अथवा लौटाने की अच्छी व्यवस्था की जाय।

"'कहना आसान है—करना कठिन' मै समझता हू कि यह कार्य बहुत कठिन है और मुझे शका है कि कहीं मेरी 'योजना' कल्पना मात्र ही न रह जाय"*

आन्ना ने पुस्तकालय से पुस्तक लेने और जेल में उन्हें भाई तक पहुचाने की ज़िम्मेदारी अपने ऊपर ली।

निष्कासन के लिए निर्दिष्ट गन्तव्य स्थान तक जाते समय इल्यीच को ४ मार्च से लेकर ३० अप्रैल १८९७ तक क्रासनोयार्स्क में रहना पडा था। इस काल में यहा उन्होंने एक पुस्तकालय का उपयोग किया था जिसके मालिक का नाम यूदिन था। १० मार्च को उन्होंने क्रासनोयार्स्क से अपनी बहन मारिया को लिखा था—

" कल मै प्रसिद्ध यूदिन पुस्तकालय गया। पुस्तकालय के स्वामी ने मेरा हार्दिक स्वागत किया और मुझे अपना सग्रह दिखाया। उसने मुझे अपने पुस्तकालय का उपयोग करने की अनुमति दी। मै समझता हू कि मै पुस्तकालय का उपयोग अवश्य करूगा (मेरे मार्ग में दो कठिनाइया है—पहली यह कि पुस्तकालय लगभग डेढ मील दूर नगर से दूर था और

*व्ला० इ० लेनिन, 'सवधियो को पत्र', १९३४, पृष्ठ १८-१९।

लेकिन, वहां तक टहलते टहलते पहुंचा जा सकता है; और दूसरी यह कि वह ठीक तरह से व्यवस्थित नही है। मुझे भय है कि अपनी रुचि की पुस्तके निकलवाने में मुझे पुस्तकालय के स्वामी को काफी कष्ट देना होगा)। व्यवहार में यह कैसे सम्भव होगा, इसका अनुभव हमें आगे चल कर होगा। मै समझता हूं कि दूसरी कठिनाई भी दूर की जा सकती है। मैंने अभी तक पूरा पुस्तकालय नही देखा है। परन्तु जो कुछ भी देख सका हूं उसके आधार पर कह सकता हूं कि यहा का संग्रह वहुत सुन्दर है। यहा १८ वी शताब्दी के अन्त से लेकर अद्यावधि (प्रमुख) पत्र-पत्रिकाओ की पूरी पूरी फाइले हैं। मुझे आशा है कि मै उनमें से अपने कार्यों के लिए उपयोगी सामग्री प्राप्त कर सकूंगा..."*

पाच दिन वाद १५ मार्च को उन्होंने माता जी को लिखा था "...मै प्रतिदिन पुस्तकालय जाता हूं और चूकि यह पुस्तकालय नगर के वाहर लगभग डेढ़ मील पर है अतएव मुझे लौटा फेरी में तीन मील का चक्कर लगाना पड़ता है जिसमें लगभग एक घंटा लग जाता है। मुझे घूमना पसन्द है और यद्यपि कभी कभी ऊंघ जाता हूं फिर भी मुझे टहलने में एक विशेष आनन्द की अनुभूति होती है। पुस्तकालय के आकार-प्रकार को देखते हुए मैंने जो अनुमान लगाया था उसके अनुरूप वहा उस विषय पर, जिसपर मैं काम करना चाहता हूं, उतनी पुस्तके नही हैं जितनी मुझे जरूरत होगी। फिर भी यहा ऐसी चीज़ें है जिन्हे मै उपयोगी समझता हू। मुझे प्रसन्नता है कि यहां मेरा समय नष्ट नही हो रहा है। मैं नगरपालिका पुस्तकालय भी जाया करता हू जहा मुझे ११ दिन वाद के समाचारपत्र और पत्रिकाएं पढने को मिल जाती है। इन पुरानी 'खवरो' का आदी वनना मुझे कुछ कठिन प्रतीत हो रहा है।"**

---

*वही, पृष्ठ २६।

**वही, पृष्ठ २७-२८।

अपने निष्कासन स्थल—शूशेन्स्कोये ग्राम—में पहुच कर जहा पत्र तथा समाचारपत्र आदि केवल १३ वे दिन पहुंचा करते थे, लेनिन ने साइबेरिया के इस दूरस्थ कोने में भी मास्को के पुस्तकालयो से पुस्तके मगाने की व्यवस्था की थी।

२५ मई १८९७ के अपने एक पत्र में इल्यीच ने मास्को में अपनी बहन आन्ना को लिखा था—

"   मैं मास्को के पुस्तकालयो का उपयोग करने की बात सोच रहा हू। क्या आप इस सम्बन्ध में कुछ व्यवस्था कर सकी हैं, अर्थात् क्या आप किसी सार्वजनिक पुस्तकालय में गई हैं? मतलब यह कि क्या दो महीनो के लिए पुस्तके लेना सम्भव है? (जैसी कि सेन्ट-पीटर्सबर्ग में फ्री इकानोमिक समिति के पुस्तकालय में व्यवस्था थी।) पार्सल का खर्च भी ज्यादा नही है (प्रति पाउंड १६ कोपेक तथा रजिस्ट्री के लिए ७ कोपेक अर्थात् अधिक से अधिक ४ पाउड की पुस्तके आप ६४ कोपेक में भेज सकती हैं)। सम्भवत मेरे लिए डाक पर पैसा खर्च करना और अधिक पुस्तके मंगा कर पढना थोडी-सी पुस्तको की खरीद पर ढेरो रुपया खर्च करने से कही सस्ता पडता है। मैं समझता हू कि मेरे लिए यही व्यवस्था अधिक अच्छी रहेगी। प्रश्न केवल यही है कि क्या किसी अच्छे पुस्तकालय से हमें (शुल्क जमा करके) दो महीने के लिए पुस्तकें मिल भी सकती हैं या नही। यूनिवर्सिटी पुस्तकालय (मैं समझता हू कि मिलता या तो कानून के किसी विद्यार्थी की मार्फत अथवा राजनीति अर्थशास्त्र के किसी प्रोफेसर के पास सीधे जा कर, और यह कह कर कि वह इस विषय का अध्ययन करना चाहता है, प्रधान पुस्तकालय से पुस्तकें ले सकता है। परन्तु इसके लिए शरद ऋतु तक प्रतीक्षा करनी होगी) अथवा मास्को कानून समिति के पुस्तकालय (वहा भी पूछताछ कर लेना और उनसे पुस्तक-सूची मागना तथा सदस्यता की शर्तों आदि का पता

लगाना) अथवा किसी अन्य पुस्तकालय से पुस्तके प्राप्त की जा सकती हैं। सम्भवत. मास्को में कुछ अन्य अच्छे पुस्तकालय भी है। हो सके तो निजी पुस्तकालयो का भी पता लगाना। यदि आप लोगो में से कोई इस समय मास्को में हो तो इसका पता चला ले।

"यदि आप विदेश जाय तो मुझे बता दें। मैं वहां से पुस्तके प्राप्त करने के लिए सविस्तार लिखूगा। मुझे पुस्तको की दुकानो तथा पुस्तकालयो आदि की समस्त सूचिया भी भेज दें।

भवदीय व्ला० उ० " *

१९ जुलाई १८९७ के एक पत्र में जो माता जी तथा मारिया दोनो ही के नाम था, इल्यीच ने उसके लिए अवतरण भेजने के मारिया के प्रस्ताव के सम्बन्ध में लिखा था: "अवतरणो के सम्बन्ध में मुझे यह विश्वास नही है कि उनसे कोई भी मदद मिलेगी। मुझे आशा है कि शरद काल तक मास्को या सेन्ट-पीटर्सवर्ग के पुस्तकालयो से कोई न कोई प्रबन्ध अवश्य हो जायगा।" **

१८९७ के जाडे के मौसम में उन्होने अपने सबंधियो को एक पत्र लिखा था जिससे पता चलता है कि इन लोगो ने उनके निर्देशानुसार कार्य किया था। परन्तु वे कुछ अन्य सुविधाएं प्राप्त करना चाहते थे।

"प्रिय मारिया, मुझे २.१२ तारीख का तुम्हारा पोस्टकार्ड मिला और सेम्योनोव की दो पुस्तके भी प्राप्त हुईं। धन्यवाद। मै अधिक से अधिक एक सप्ताह के भीतर उन्हें वापस कर दूगा। (मै समझता हूं कि बुधवार २४ तारीख को डाकिया बिल्कुल न जायेगा)।

"मैंने पहले दो खडो को देखा है और उनमें मेरी रुचि

---

*वही, पृष्ठ ४८।

**वही, पृष्ठ ५७।

की कोई बात नही है। मै समझता हू कि हमें जिन पुस्तको के बारे मे कोई जानकारी नही होती, उन्हें मगाने में इस प्रकार की चीज अपरिहार्य ही है। मैंने पहले ही इसकी कल्पना कर ली थी।

"मुझे आशा है मुझे जुर्माना नही देना होगा। वे पुस्तको की वापसी अगले महीने तक के लिए स्थगित कर देंगे।

"मै तुम्हारा यह वाक्य नही समझा --'लॉ सोसायटी पुस्तकालय का उपयोग करने के उद्देश्य से --मैंने इसके बारे में कवलूकोव से पूछा था--वकील होना जरूरी है और सोसायटी के दो सदस्यों की सिफारिशें भी आवश्यक है'। केवल यही? क्या सोसायटी का सदस्य होना आवश्यक नही है? मै सेन्ट-पीटर्सबर्ग से सिफारिश प्राप्त करने का प्रयत्न करूगा।

"मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नही कि कोई ऐसा व्यक्ति भी सोसायटी का सदस्य हो सकता है जो वकील न हो।

"तुम्हारा स्नेह-भाजन व्ला० उ०"*

परन्तु डाक सम्बन्धी कठिनाइयो के कारण शूशेन्स्कोये में पुस्तकालयो का किसी भी प्रकार का सतोषजनक उपयोग सम्भव न रह गया था।

सितम्बर १८९८ में इल्यीच को दान्त का इलाज कराने के लिए क्रासनोयार्स्क जाने की अनुमति मिल गई। उन्हें इससे बहुत प्रसन्नता हुई और उन्होंने स्थानीय पुस्तकालय का उपयोग करने की एक योजना बनाई।

निष्कासन से लौटने पर वे प्स्कोव में बस गये। उन्होंने १५ मार्च १९०० को एक पत्र में माता जी को लिखा था कि 'मैं प्राय पुस्तकालय जाता हू और टहलता भी हू।"**

जब वे विदेश में थे उस समय अपना अधिकाश समय वे पुस्तकालयों

*वही, पृष्ठ ७७।

**वही, पृष्ठ २३८।

में ही व्यतीत करते, परन्तु उन्होंने अपने परिवारवालो को जो पत्र लिखे थें उनमें उस वात का उल्लेख वहुत ही कम हुआ था।

१९०२-०३ में लन्दन में हमारे अस्थायी निवास के दौरान में इल्यीच का आधा समय ब्रिटिश संग्रहालय में ही व्यतीत हुआ था। इस सग्रहालय में संसार भर में सवसे अधिक पुस्तके है और यहा की सेवाए भी वहुत सक्षम है। वे प्राय: वाचनालयो में भी गये थे जैसा कि उनके उस पत्र से प्रकट है, जो उन्होने २७ अक्तूवर १९०२ को माता जी को लिखा था।*

लंदन में वहुत से वाचनालय हैं जिनके कमरो में सीधे सड़को पर से प्रवेश किया जा सकता है। यहां कुर्सिया नही है परन्तु खडे हो कर पढने की सुविधाएं है। लोग खूटियो से लटकते हुए अखवार पढ लेते हैं। कमरे में घुसते ही आप खूटियो से अखवार उतार सकते है और पढने के वाद फिर उसे यथास्थान रख सकते है। य वाचनालय वहुत सुविधाजनक है। दिन भर में यहा वहुत से व्यक्ति पढ़ने आते है।

अपने दूसरे विदेश प्रवास के दौरान में जव लोगो में दार्शनिक विपयो पर विचार-विमर्श चल रहा था, इल्यीच 'मैटीरियलिज्म ऐंड एम्पीरिओक्रिटिसिज्म' शीर्षक अपनी पुस्तक लिखने में व्यस्त थे। उस समय वे मई १९०८ में ब्रिटिश संग्रहालय में विशेष अध्ययन करने के निमित्त जेनेवा से लदन गये थे।

जेनेवा में, जहां हम १९०३ में पहुंचे थे, इल्यीच 'पढ़ने वालो का समाज' (Société de lecture) पुस्तकालय में दिन के दिन विता देते। यह एक वहुत वड़ा पुस्तकालय था जहा पढने के लिए आदर्श सुविधाएं उपलव्ध थी। इस पुस्तकालय में अनेकानेक फ्रेंच, जर्मन और अंग्रेजी समाचारपत्र तथा पुस्तके मंगाई जाती थी। समाज के सदस्य प्राय वृद्ध प्रोफेसर होते थे, जो यदा-कदा ही पुस्तकालय जाया करते। इल्यीच वहा

---

*वही, पृष्ठ २८६।

एक कमरे में बैठ कर पढते लिखते या चहलकदमी कर लेते। इस प्रकार वे अपने लेखो पर भी मनन कर सकते थे। वे अल्मारी से ऐसी कोई भी पुस्तक उठा कर पढ सकते थे जिसकी उन्हे आवश्यकता होती थी।

यहा वे एक समृद्ध रूसी पुस्तकालय में पढने जाया करते। इस पुस्तकालय का नाम कुकलिन के नाम पर था और साथी कारपिस्की इसका अध्यक्ष था। अन्य नगरो में अपने निवास के समय वे इसी पुस्तकालय से पुस्तके लिया करते थे।

जब वे पेरिस में रह रहे थे उस समय मुख्यतया 'राष्ट्रीय पुस्तकालय' (Bibliotheque nationale) नामक पुस्तकालय में पढने जाया करते थे।

इस पुस्तकालय में उनके कार्य के संबध में मैंने दिसम्बर १९०९ को उनकी माता जी को लिखा था —

"पिछले एक सप्ताह से भी कुछ अधिक से वे पुस्तकालय जाने के लिए प्रातःकाल आठ बजे उठते हैं और वहा से अपराह्न २ बजे वापस आते हैं। पहले तो उन्हे इतने सवेरे उठने में कष्ट होता था परन्तु अब इसमें कोई भी असुविधा नही होती। वे जल्दी सो भी जाते हैं।"*

इल्यीच ने पेरिस के कुछ अन्य पुस्तकालयो का भी उपयोग किया। परन्तु उन्हे वे पसन्द न आये। 'राष्ट्रीय पुस्तकालय' में नवीनतम पुस्तक-सूचिया नही थी और पुस्तके लेने में लाल-फीता व्यवस्था का आधिक्य था। सच पूछा जाय तो फ्रेंच पुस्तकालयो की विशेषता ही लाल-फीता थी। नगरपालिका पुस्तकालयो में अधिकतर कहानी उपन्यास की पुस्तके रहती थी परन्तु पुस्तक मिलने के पूर्व मालिक मकान से इस आशय का एक प्रमाण-पत्र ले लिया जाता था कि वह समय से पुस्तक लौटाने के लिए जिम्मेदार है। हमारी आर्थिक स्थिति सुदृढ न थी। अतएव हमारे मालिक मकान ने हमें उक्त प्रमाण-पत्र देने में विलम्ब कर दिया था। इल्यीच

---

* वही, पृष्ठ ३५३।

किसी देश के सास्कृतिक स्तर का अनुमान लगाने के लिए यह देखा करते थे कि वहा के पुस्तकालयो का सचालन किस प्रकार किया जाता है।

उन्होने ६ अप्रैल १६१४ को क्रैको से अपनी माता जी को लिखा था—

" . पेरिस काम करने के लिए सुविधाजनक स्थान नही है। 'राष्ट्रीय पुस्तकालय' का संचालन ठीक प्रकार से नही हो रहा है। मुझे प्राय जेनेवा की याद आ जाती है जहा काम आसानी से हो जाता था। वहा मुझे एक पुस्तकालय में बड़ी सुविधाए प्राप्त थी और मैं शात वातावरण में काम कर सकता था। जिन जिन स्थानो पर मुझे जाना पडा उनमें मुझे लंदन या जेनेवा विशेप रूप से पसन्द है यदि वे इतनी दूर न होते। सामान्य सस्कृति तथा आराम की दृष्टि से जेनेवा वडी सुन्दर जगह है। परन्तु यहां सस्कृति का तो प्रश्न ही नही उठता। यह वहुत कुछ रूस के समान है। यहां का पुस्तकालय खराव तथा अत्यधिक असुविधापूर्ण है, परन्तु समयाभाव के कारण मैं वहा वहुत कम जाता हूं "*

जव हम क्रैको से वर्न लौटे उस समय इल्यीच ने ६ दिसम्वर १६१४ के एक पत्र में अपनी वहन मारिया को लिखा था—

".. यहा अच्छे पुस्तकालय है और जहा तक पुस्तको का सवध है मुझे कोई परेशानी नही होती। दिन भर समाचारपत्र में अथक परिश्रम करने के पश्चात् जव पढने का अवकाश मिल जाता है, उस समय कितना आनन्द आता है। नदेज्दा भी शिक्षणशास्त्र विपयक एक पुस्तकालय का उपयोग कर रही है और वह शिक्षा विपयक एक पुस्तक लिख रही है .. "**

७ फ़र्वरी १६१६ को मारिया को लिखे गये अपने एक पत्र में

*वही, पृष्ठ ४०२-४०३।

**वही, पृष्ठ ४०५।

इल्यीच ने लिखा था "नदेज्दा तथा मैं जूरिच में बडे प्रसन्न है। यहा अच्छे अच्छे पुस्तकालय है।" तीन सप्ताह पश्चात् उन्होंने माता जी को लिखा था " हम जूरिच में रह रहे है जहा हम स्थानीय पुस्तकालयो मे आते जाते है। हमें झील पसन्द है। यहा के पुस्तकालय वर्न की अपेक्षा अधिक अच्छे हैं। अतएव हम पूर्व निश्चय की अपेक्षा अब यहा कुछ अधिक काल तक ठहरेगे।"*

९ अक्तूबर के एक पत्र में इल्यीच ने मारिया को लिखा था "जूरिच में पुस्तकालय अपेक्षाकृत अच्छे है और काम करने की सुविधाए भी उत्तम है।"**

स्विस पुस्तकालयो का सचालन वहुत योग्यता के साथ किया जाता है। यहा की उल्लेखनीय विशेपता यह है कि यहा पुस्तकालय आपस मे अपनी पुस्तको का अपेक्षानुसार पारस्परिक विनिमय करते है। जर्मन स्विटजरलैंड के वैज्ञानिक पुस्तकालयो का सवध जर्मनी के वैज्ञानिक पुस्तकालयो से रहता है। युद्ध काल के दौरान मे भी उन्हें आवश्यकता जर्मनी से कितावें मिल जाती थीं।

दूसरी विशेपता यह है कि वे पाठको के वास्तविक सहायक है — यहा की सुन्दर शुद्ध पुस्तक-सूचिया, खुली अलमारिया, कर्मचारियो का पाठकों में रुचि लेना और लाल-फीते का अभाव ऐसी वाते है जिन्हे देख कर पाठक मुग्ध हो जाता है।

१९१५ के गर्मी के मौसम में हम रोथर्न पहाडियो की तलहटी पर वसे हुए एक दूरस्थ गाव मे रहते थे। यहा हमें वराबर पुस्तकालयों से पुस्तकें मिलती रहती। पुस्तकें डाक द्वारा भेजी जाती। हमें डाक-टिकट तक के पैसे न देने पडते। ये पुस्तकें कागज के पैकेटो मे आती थीं। इन

---

*वही, पृष्ठ ४१५-४१६।

**वही, पृष्ठ ४१८।

पैकटो के साथ एक लेबिल रहता था जिसके एक ओर पुस्तक पाने वाले का तथा दूसरी ओर प्रेषक पुस्तकालय का पता रहता था। पुस्तक वापस करते समय केवल लेबिल को उलट दिया जाता और पुस्तके डाकखाने में भेज दी जाती।

डल्यीच सदैव स्विस संस्कृति की सराहना किया करते थे। वे एक ऐसी पुस्तकालय-पद्धति की कल्पना कर रहे थे जिसकी क्रान्ति के पश्चात् रूस मे व्यवस्था की जा सके।

प्रचारक और आन्दोलनकर्ता लेनिन

('र० क० क० आ० प्रचारक और आन्दोलनकर्ता' पत्रिका, अंक १, १९३९)

प्रचारक लेनिन

रूस में औद्योगिक विकास दूसरे पूजीवादी देशो—ब्रिटेन, फ्रास, जर्मनी—के बाद शुरू हुआ और इसी लिए हमारा श्रम आन्दोलन बाद के दिनो में ही बढ़ना आरम्भ हुआ जिसने १८९०-१९०० तक एक सामूहिक रूप ग्रहण कर लिया। उस समय तक अन्ताराष्ट्रीय सर्वहारा वर्ग ने बहुत अधिक अनुभव प्राप्त कर लिया था और वह कई क्रान्तियो से होकर गुज़र चुका था। क्रान्तिकारी आन्दोलन ने दुनिया को मार्क्स और एंगेल्स जैसे बडे बडे विचारक दिये जिनके विचारो ने सर्वहारा वर्ग के लिए अपेक्षित पथ प्रशस्त किया। उन्होने यह सिद्ध कर दिया था कि बूर्जवा पद्धति धराशायी होगी, सर्वहारा वर्ग की निश्चय ही विजय होगी, उसके हाथो मे सत्ता आयेगी और वह जीवन का पुनर्निर्माण और एक नये, साम्यवादी समाज की स्थापना करेगा।

लेनिन ने जीवन के आरम्भकाल से ही मार्क्स का अध्ययन आरम्भ

कर दिया था। मार्क्स के गम्भीर अध्ययन से वे इस निश्चय पर पहुचे थे कि मार्क्स के विचार रूसी श्रमिक वर्ग के कार्यो के लिए पथ-प्रदर्शक है, वे रूसी श्रमिको का, जो उन दिनो निरीह, पददलित और अत्यधिक शोषित गुलाम हो रहे थे, समाजवाद के लिए संघर्ष करने वाले, चेतनाशील और सघटित व्यक्तियो के रूप में निर्माण करने और रूस के श्रमिक वर्ग को एक सशक्त दल का रूप देने में सहायक होंगे और श्रमिक वर्ग की इस माने में सहायता करेंगे कि वह श्रम करने वाले समस्त लोगो का नेतृत्व करे, सभी प्रकार के शोषण को समाप्त करे।

मार्क्स के विचारो ने सामाजिक विकास की गति समझने में लेनिन की वडी सहायता की। इल्यीच को पूरा विश्वास था कि मार्क्स और एंगेल्स के विचार ठीक हैं। उनका ख्याल था कि जनता को मार्क्सवाद का यथासम्भव अधिक से अधिक ज्ञान कराना वहुत जरूरी है और इसी लिए उन्होंने इसका प्रचार करने में अपनी सारी शक्ति लगा दी थी।

श्रमिक जनता के मध्य मार्क्सवाद का जो प्रचार किया गया था वह वहुत अधिक सफल रहा। लेनिन का कथन था कि "हमारा प्रचार इतना सफल रहा इसका कारण यह नहीं था कि हम लोग हुनरमन्द प्रचारक थे, वल्कि यह था कि हम सच्ची वात कहते थे।

प्रचारक लेनिन का एक विशेष गुण था—गहन विश्वास।

लेनिन ने मार्क्स का गहन अध्ययन किया था और हर ग्रन्थ को कई कई वार पढा था। उन्होंने ग्रनात विश्वकोश के लिए १९१४ में एक लेख लिखा था जिसमें उन्होंने काफी विवरणात्मक सामग्री दी थी। यह इस वात का प्रमाण था कि लेनिन को मार्क्सवाद का कितना गहरा ज्ञान था। लेनिन के दूसरे ग्रन्थो से भी इस वात का पर्याप्त प्रमाण मिलता है।

प्रचारक लेनिन का दूसरा विशेष गुण था—विषय के सबध में उनकी गहरी जानकारी।

लेनिन सिर्फ मार्क्सवादी सिद्धान्त ही नही जानते थे, यह भी जानते थे कि व्यवहार में उसका प्रयोग कैसे किया जाय।

१८९४ मे, श्रम आन्दोलन के आरम्भिक चरणो में उन्होंने ''जनता के मित्र' क्या है और वे सामाजिक-जनवादियो के विरुद्ध कैसे लडते है?' शीर्षक अपनी पुस्तक में यह दिखाया था कि श्रम आन्दोलन के आरम्भ से लेकर हमारी सारी दशाओ में, मार्क्सवाद का प्रयोग कैसे करना चाहिए। यह पुस्तक उस काल में लिखी गई थी जब अधिकाश क्रान्तिवादियो का विचार था कि रूसी दशाओ में श्रमिक वर्ग कोई महत्वपूर्ण कार्य नही कर सकता।

१८९९ में, लेनिन की 'रूस में पूजीवाद का विकास' शीर्षक पुस्तक प्रकाशित हुई, जिसमे उन्होने यह सिद्ध करने के लिए बहुत-सी तथ्याधारित सामग्री का उपयोग किया था कि रूस में भी पिछडापन होने के बावजूद पूजीवाद पनप रहा है।

'क्या करे?' (१९०२) शीर्षक अपनी पुस्तक में लेनिन ने यह दिखाया था कि हमारी दशाओ में श्रमिको का ठीक ठीक दिशा में नेतृत्व करने वाली श्रमिक वर्ग की पार्टी कैसी होनी चाहिए।

१९०५ मे उन्होंने 'जनवादी क्रान्ति में सामाजिक-जनवाद की दो कार्यनीतियां' शीर्षक एक पुस्तिका लिखी थी।

१९०७ में, जब १९०५ की क्रान्ति की पराजय स्पष्ट दिखने लगी थी (इस विफलता का एक कारण था श्रमिक और कृषक आन्दोलनो के बीच अपर्याप्त एकता), लेनिन ने 'प्रथम रूसी क्रान्ति में सामाजिक-जनवाद का कृषि कार्यक्रम' नामक अपनी पुस्तक में इस बात पर जोर देते हुए कहा था कि क्रान्ति के अनुभवो की माग है कि श्रमिक वर्ग और किसानो इन दोनो में जबरदस्त संघटन हो।

और बाद में भी, श्रम आन्दोलन के मुख्य प्रश्नो का विश्लेषण करने में, लेनिन ने ऐसे हर प्रश्न को मार्क्सवाद से संबद्ध कर दिया था।

विश्व युद्ध की चरम सीमा के काल में साम्राज्यवाद के सबंध में लिखी गई उनकी पुस्तक और 'राज्य और क्रान्ति' नामक पुस्तक, जो अक्तूबर क्रान्ति से कुछ ही पूर्व लिखी गई थी, विशेष रूप से प्रसिद्ध है। लेनिन के ग्रन्थो की विशेषता यह है कि वे सिद्धान्त को व्यवहार के साथ सबद्ध करना जानते थे, उन्होंने किसी भी व्यावहारिक विषय को सिद्धान्त से अलग नही किया, वे जानते थे कि हर सैद्धान्तिक प्रश्न को जीवन के साथ, वास्तविकता के साथ, कैसे सबद्ध करना चाहिए और वे यह भी जानते थे कि सिद्धान्त को पाठक के पास तक कैसे पहुचाया जाय कि वह उसे समझ ले। वे अपने वैज्ञानिक ग्रन्थो तथा मौखिक और लिखित, दोनो ही तरह के, प्रचार में सिद्धान्त को व्यवहार के साथ सबद्ध करने की कला जानते थे।*

---

*इ० व० बाबुश्किन नामक पीटर्सबर्ग के एक श्रमिक ने उस विधि का उल्लेख किया है जिसका लेनिन अपने भाषणो में प्रयोग किया करते थे। "टोली में व्याख्याता को मिला कर कुल सात व्यक्ति थे। हमने मार्क्स के राजनीतिक अर्थशास्त्र के अध्ययन से अपना कार्य आरम्भ किया। व्याख्याता ने हमें बिना नोटो की सहायता के, मौखिक रूप से, यह विषय समझाया। कभी कभी वे आपत्तिया पूछने अथवा बहस शुरू करने के लिए थोड़ा रुक जाते और फिर हमारे सामने जो प्रश्न होता उसके सबध में अपने अपने दृष्टिकोण का औचित्य सिद्ध करने के लिए हमे प्रोत्साहित करते। अतएव हमारी चर्चाए बडी सजीव और रोचक होती। इस प्रकार हमें जनता के सामने बोलने का अभ्यास हुआ। अध्ययन का यह तरीका विद्यार्थियो को समझाने के लिए सर्वोत्तम सिद्ध हुआ। हम सब व्याख्यानो से बड़े प्रसन्न होते थे और अपने व्याख्याता की योग्यता देख कर हमें आश्चर्य होता था। हम आपस में मजाक मजाक में कहा करते थे कि हमारे व्याख्याता का सिर इतना बड़ा है कि उसमें ज्यादा सब कुछ निगल जाने की...

"इन व्याख्यानो से हमें स्वतन्त्र रूप से काम करना सिखा दिया...

प्रचारक लेनिन की एक अन्य विशेषता यह थी कि वे सिद्धान्त को जीवित वास्तविकता के साथ संबद्ध कर सकते थे और इस प्रकार सिद्धान्त सुबोध और वातावरण चेतन हो जाता था।

लेनिन ने सिद्धान्त और वातावरण का इसी लिए अध्ययन नही किया था कि वे दिलचस्प चीज़ें थी। मार्क्सवादी सिद्धान्त के प्रकाश में वास्तविकता को समझाते हुए उन्होंने हमेशा ऐसे आवश्यक निष्कर्षों पर पहुचने का प्रयत्न किया जो क्रियाशीलता के लिए पथ-प्रदर्शक का काम कर सके। लेनिन का प्रचार हमेशा सामयिक समस्याओं के साथ संबद्ध रहा। फर्वरी १९१७ की क्रान्ति के बाद उन्होंने पेरिस कम्यून के संबंध में स्वीट्ज़रलैंड में जो रिपोर्ट दी थी उसमें उन्होंने यही नही बताया था कि फ्रासीसी श्रमिको ने सत्ता अपने हाथ में कैसे ली अथवा मार्क्स ने पेरिस कम्यून की कैसे सराहना की थी, अपितु यह भी कहा था कि सत्ता प्राप्त कर चुकने के बाद रूसी श्रमिको को क्या करना होगा। लेनिन सिद्धान्त को हमेशा ही क्रियाशीलता के पथ-प्रदर्शक का रूप दे सकते थे।

सामग्री खुद संकलित करना सिखाया था। व्याख्याता हमें पहले से तैयार किये गये प्रश्नो की सूची दे देते। इन प्रश्नो का उत्तर देने के लिए फैक्ट्री तथा मिल के जीवन के निकट अध्ययन और निरीक्षण की ज़रूरत थी। काम के घंटो में हमें या तो व्यक्तिगत निरीक्षणो से, अथवा, जहा सम्भव होता था, श्रमिको के साथ बातचीत करके, सामग्री संकलित करने के लिए दूसरे विभागों में जाने का बहाना मिल जाता।

"मेरा औज़ार का बक्स हर तरह की टिप्पणियो से भरा रहता। खाने के घंटो में मैं अपनी कर्मशाला में मज़दूरियो और घंटो के संबंध में सामग्री जुटाता रहता।" ('इवान वसील्येविच बाबुश्किन के संस्मरण', मास्को, १९५७)।

अतएव प्रचारक लेनिन की विशेषता यह थी कि वे सिद्धान्त को क्रियाशीलता के पथ-प्रदर्शक का रूप दे सकते थे।

यद्यपि लेनिन को बहुत अधिक ज्ञान और प्रचारक के रूप में व्यापक अनुभव था (उन्होंने बहुत-सी रिपोर्टें तैयार की थी और प्रचार-नोट्स लिखे थे) फिर भी वे प्रत्येक भाषण, प्रत्येक रिपोर्ट और प्रत्येक व्याख्यान को बड़ी होशियारी के साथ तैयार करते थे। हमारे पास उनके प्रचार-भाषणों और रिपोर्टों के बहुत-से संक्षेप हैं जिनसे पता चलता है कि वे हर एक के संबंध में कितनी निपुणता के साथ काम करते थे। ये भाषण कितने अर्थपूर्ण होते थे, लेनिन सब से जरूरी बातों को कितनी योग्यता के साथ स्पष्ट करते थे और हर विचार को कितनी खूबसूरती के साथ मिसालें दे दे कर समझाते थे, इन सब का पता हमें उनकी टिप्पणियों से चलता है।

प्रचार-भाषणों के लिए पूरी पूरी तैयारी करना प्रचारक लेनिन की विशेषता थी।

अपने प्रचार-भाषणों में इल्यीच ने दुरूह विषयों को टालने की कभी कोशिश नहीं की। इसके विपरीत, उन्होंने ऐसे विषयों को साफ साफ समझाया। वे तीखे शब्दों से डरते न थे और विषयों पर जान-बूझ कर बल देते थे। वे ऐसे प्रचार-भाषणों का विरोध करते थे जिनमें जान न होती थी, जो सरिता की तरह कलकल करते हुए आगे बढ़ते थे। उनके भाषण नीरस प्राय रूक्ष भी होते थे, परन्तु उनमें प्रभावोत्पादकता थी, वे सबको उत्तेजित करते थे और दिलचस्प होते थे।

प्रचारक लेनिन अपने विषय को साफ साफ रखते और श्रोताओं को अपने भावोद्रेकों से प्रभावित कर देते थे।

व्लादीमिर इल्यीच ने जनता का अच्छी तरह अध्ययन किया। जनसाधारण कैसे काम करता है, कैसे रहता है, कौन-कौनसी चीजें उसे उद्वेलित करती हैं आदि बातें वे अच्छी तरह जानते थे। जनसाधारण को सम्बोधित करते समय वे हमेशा श्रोताओं का स्तर ध्यान में रखते और

जब कभी भाषण करते, या अपनी रिपोर्टें पढते, या वातचीत करते, तो इस वात पर वरावर ध्यान रखते कि सम्प्रति उनके श्रोताश्रो को सव से अधिक कौनसी चीज़ व्यथित कर रही है, क्या क्या वे नही समझ पा रहे हैं और किसे वे सव से महत्वपूर्ण समझते हैं। जिस ध्यान से श्रोता उनकी वाते सुनते, जो प्रश्न वे पूछते और जो भाषण वे करते, वे इल्यीच के समक्ष उनकी मानसिक स्थिति का प्रदर्शन करने के लिए पर्याप्त होते थे। और इल्यीच श्रोताश्रो में दिलचस्पी पैदा करने की कला जानते थे, उनके श्रोता जो वाते नही समझ पाते थे उन्हे समझाना जानते थे और अपनी वाते उनके दिमाग में विठाना भी जानते थे।

प्रचारक लेनिन अपने श्रोताश्रो को अपनी श्रोर आकृष्ट करना और पारस्परिक सद्भावना स्थापित करना जानते थे।

अन्त में यह वताना ज़रूरी है कि जनता के प्रति लेनिन का जो रुख़ था उससे लेनिन के प्रचार को कितना लाभ हुआ था। उन्होने श्रमिको, गरीव और मध्यम वर्गीय किसानो और लाल सेना के सैनिको को कभी भी हीन दृष्टि से नही देखा। उन्होने इन लोगो के साथ साथियो जैसा, वरावर वालो जैसा, व्यवहार किया। उनके लिए ये लोग 'प्रचार के साधन' न थे परन्तु ऐसे ज़िन्दा लोग थे जिन्होने दुनिया देखी थी, न जाने कितनी वातो पर विचार-विमर्श किया था और जो अव इस वात की माग कर रहे थे कि उनकी जरूरतो पर ध्यान दिया जाय। श्रमिको को उनकी सादगी और साथियो जैसा व्यवहार वडा पसन्द था। वे कहा करते थे कि "वे हमारे साथ गम्भीरतापूर्वक वातचीत करते है"। उनके श्रोता वरावर यह देखते रहते थे कि जिन समस्याश्रो को इल्यीच उन्हे समझाते थे उनमें वे खुद भी दिलचस्पी लेते थे और यह देख कर श्रोताश्रो में और भी विश्वास जमता था।

अपने विचारों को सादगी के साथ स्पष्ट कर सकने की उनकी क्षमता और श्रोताओं के प्रति उनके साथियों जैसे व्यवहार ने इल्यीच के प्रचार को सवल, लाभप्रद और प्रभावकर वना दिया था।

प्रचार, आन्दोलन और सघटन के बीच पत्थर की दीवारे नही। जो प्रचारक अपने श्रोताओ मे उत्साह का सचार करना जानता है वह आन्दोलनकर्ता भी है। जो प्रचारक सिद्धान्त को क्रियाशीलता का पथ-प्रदर्शक बना सकता है निश्चय ही वह एक सघटनकर्ता के काम को सुविधाजनक बनाता है।

लेनिन के प्रचार में आन्दोलन और सघटन के मूल तत्वो की प्रचुरता थी, परन्तु ये तत्व प्रचार की शक्ति और महत्व में बाधक नही सिद्ध हुए।

हमें प्रचारक लेनिन से बहुत कुछ सीखना चाहिए।

आन्दोलनकर्ता लेनिन

मार्क्स और एगेल्स कहा करते थे कि "हमारे कथन जड सिद्धान्त नही अपितु क्रियाशीलता के पथ-प्रदर्शक है।" लेनिन प्राय इन्ही शब्दो को दुहराते थे। उनके सारे प्रयास अधिक से अधिक श्रमिको के कार्यो में मार्क्सवाद को सच्चा पथ-प्रदर्शक बनाने की दिशा में केन्द्रित रहते थे।

१८९३ में, पीटर्सबर्ग आने के तुरन्त पश्चात, लेनिन ने श्रमिक मडलो में जाना शुरु किया और श्रमिको को समझाया कि मार्क्स ने विद्यमान वस्तुस्थिति का मूल्याकन कैसे किया था, सामाजिक विकासो के बारे में उन्होने क्या समझा था, श्रमिक वर्ग तथा पूजीवादी वर्ग के विरुद्ध श्रमिको के सघर्ष को कितना महत्व दिया था और श्रमिक वर्ग की विजय को अपरिहार्य क्यो समझा था। लेनिन ने अपने भाषणो मे यथासम्भव अधिक से अधिक सीधी-सादी भाषा का प्रयोग किया और रूसी श्रमिको के जीवन मे मिसाले दी। उन्होने देखा कि श्रमिक उनकी बाते बडे ध्यान से सुनते मार्क्सवाद के मूल सिद्धान्तो को समझने की कोशिश करते परन्तु उन्हे कुछ ऐसा लगा कि महज यही कहना काफी नही है कि "हमे पूरे जोरो के साथ वर्ग सघर्ष छेड देना चाहिए' बल्कि यह दिखाना भी जरूरी है कि यह सघर्ष कैसे छेडना चाहिए और किन समस्याओ को लेकर। एतदर्थ

उन वातो की चर्चा भी आवश्यक थी जो श्रमिक जनता को विशेष रूप से व्यथित कर रही थी, और फिर उन्हे यह भी साफ साफ समझाना उतना ही आवश्यक था कि उन वातो का उन्मूलन करने अथवा उन्हे वदलने के लिए क्या क्या करना ज़रूरी है। आरम्भ में, १८९०-१९०० में, श्रमिको के आगे मुख्य समस्याए थी काम के अधिक घंटे, जुर्माने, पारिश्रमिको में से की जाने वाली कटौतिया और निर्दय व्यवहार। लेनिन के मंडल ने यह व्यवस्था की थी—एक साथी किसी फैक्ट्री को जाता था और मालिको के सामने रखने के लिए निश्चित मागें तैयार करने में श्रमिको की मदद करता था। ये मागें खास खास पत्रको में समझाई और छापी जाती थी। ये पत्रक श्रमिको के सघटन में अपना योग देते और फिर श्रमिक मिल-जुल कर अपनी मागें मनवाने के लिए प्रयत्न करते।

आन्दोलन श्रमिकों में जोश भरता था।

"प्रचार से अविच्छिन्न रूप से संवद्ध एक चीज़ है—आन्दोलन, जो स्वभावतया रूस की वर्तमान राजनीतिक दशाओ में और श्रमिक जनता के विकास-स्तर की पृष्ठभूमि में सामने आता है," लेनिन ने १८९७ में 'रूसी सामाजिक-जनवादियो के कार्य' में लिखा था। "श्रमिको में जो आन्दोलन देखने में आता है उसमें श्रमिक वर्ग के समस्त संघर्षो और काम के दिन, मज़दूरी, श्रम-दशाओ आदि के सवध में श्रमिको और पूजीपतियो के वीच चलने वाले सघर्षो मे सामाजिक-जनवादी भाग लेते है। हमारा कर्तव्य है कि हम अपने क्रिया-कलापो को श्रमिक वर्ग के जीवन से संवधित रोज़मर्रा के व्यावहारिक मवालो के साथ संवद्ध करे, इन सवालो को समझने में श्रमिको की मदद करे, श्रमिको का व्यान मुख्य दुरुपयोगो की ओर आकृष्ट करे, मालिको के सामने रखने के लिए अधिक संक्षेप में और व्यावहारिक तरीके से मागें तैयार करने में श्रमिको की मदद करे, श्रमिको में उनकी एकता के लिए जागरूकत पैदा करे और साथ ही यह जागरूकता भी पैदा

करे कि एक ऐसे सघटित श्रमिक वर्ग के रूप मे, जो सर्वहारा वर्ग की अन्ताराष्ट्रीय सेना का एक भाग है, रूसी श्रमिको के हित एक-से है, उद्देश्य एक-से है।"*

१९०६ में इस वात का उल्लेख करते हुए कि सामाजिक-जनवादियो के प्रतिनिधियो को किसानो के मध्य अपना आन्दोलन कैसे चलाना चाहिए, लेनिन ने लिखा था "यह सावित करने के लिए कि सर्वहारा वर्ग अद्ययुगीन क्रान्ति में अग्रणी है 'वर्ग' शव्द का प्रयोग करना ही काफी नही है। यह भी काफी नही है कि हम यह सावित करने के लिए कि सर्वहारा वर्ग अग्रणी रहा है अपने समाजवादी उपदेश और मार्क्सवाद के सामान्य सिद्धान्त का निरूपण करे। इसके लिए यह जानना ज़रूरी है कि अद्ययुगीन क्रान्ति के वडे वडे सवालो का विश्लेपण करते समय, इस वात को व्यवहार में किस प्रकार दिखाया जाय कि श्रमिक दल के सदस्य इस क्रान्ति के हितो की, और दूसरो की अपेक्षा अधिक क्रमवद्धता, अधिक शुद्धता, अधिक दृढता और अधिक कुशलता के साथ उसकी सम्पूर्ण विजय के हितो की, रक्षा करते है।**

लेनिन का कहना है कि आन्दोलन सिद्धान्त और व्यवहार का संवंध स्थापित करता है। इसी में उसकी शक्ति निहित है।

श्रमिको के आर्थिक सघर्प में आन्दोलन का वडा हाथ था। इसने श्रमिको को यह सिखाया था कि हडतालो को पूजीवादियो के विरुद्ध सघर्प छेडने की प्रणाली के रूप में काम में लाया जाय। इसकी वजह से श्रमिको को जो सफलताए मिली उनसे श्रमिक वर्ग की दशा में वडा सुधार हुआ।

किन्तु, मार्क्सवादी सिद्धान्त का ठीक ठीक मूल्याकन न कर सकने

---

*व्ला० इ० लेनिन, चुने हुए ग्रन्थ, खड १, भाग १, पृष्ठ १७९।

**व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी सस्करण, खड ११, पृष्ठ २६१-६२।

के कारण, योजनाहीनता के पुजारी होने के कारण, अधिक अच्छी आर्थिक दशाओ के लिए सघर्ष करने तक ही सर्वहारा वर्ग के कामो को सीमित कर देने और परिणामत, श्रमिक समुदाय में राजनीतिक आन्दोलन को न्यूनतम कर देने की इच्छा के कारण आर्थिक सघर्ष की सफलता ने सामाजिक-जनवाद के क्षेत्र में 'अर्थवादी' प्रवृत्तियो को जन्म दिया।

"बिना क्रान्तिकारी सिद्धान्त के क्रान्तिकारी आन्दोलन जन्म नहीं ले सकता," लेनिन ने अपनी पुस्तक 'क्या करे?' में १९०२ में अर्थवादियो को उत्तर दिया था। "जब अवसरवादिता के फैशनेबिल उपदेश व्यावहारिक क्रियाशीलता के सकीर्णतम स्वरूपो का मोह लेकर आगे बढते हैं उस समय इस विचार पर बहुत अधिक जोर नही दिया जा सकता।"*

जनता में उत्साह फूकने के लिए मार्क्सवादी ही आन्दोलन का आश्रय नही लेते, बल्कि बूर्जवाओ को भी उसका अच्छा-खासा तजुर्बा है। लेकिन आन्दोलन आन्दोलन में फर्क होता है। लेनिन ने पार्टी की द्वितीय काग्रेस में भाषण देते हुए कहा था कि "आन्दोलन में स्थायी सफलता सही सैद्धान्तिक हल पर ही **निर्भर** है" **।

सिद्धान्त को हीन समझने और उसके महत्व को कम करने का मतलब **"श्रमिको पर बूर्जवा विचारधारा के असर को मजबूत करना है, भले ही सिद्धान्त को हीन समझने वाला व्यक्ति इसे चाहे या न चाहे।"***** इस प्रकार लेनिन के कथनानुसार आन्दोलन की सब से महत्वपूर्ण चीज है उसका सार।

---

*व्ला० इ० लेनिन, चुने हुए ग्रन्थ, खड १, भाग १, पृष्ठ २२७। (मोटे टाइप में छपा अश क्रूप्स्काया का है।—स०)

**व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी सस्करण, खड ६, पृष्ठ ४४९।

***व्ला० इ० लेनिन, चुने हुए ग्रन्थ, खंड १, भाग १, पृष्ठ २४२।

उन्होंने आन्दोलन को नारो तक सीमित रखने के प्रयासो का विरोध किया और इस बात पर जोर दिया कि उसे व्याख्यात्मक कार्यों के साथ संबद्ध किया जाय।

लेनिन ने अनुभव किया था कि आन्दोलन की शक्ति ऐसे सुनघटित कार्यों में निहित है जिनका स्वरूप स्पष्ट और सरल हो। यह जरूरी है कि "जो कुछ कहा जाय वह साफ साफ कहा जाय, सीधी-सादी भाषा में हो और एतदर्थ उन गूढ पारिभाषिक और विदेशी शब्दो, नारो, परिभाषाओं तथा निष्कर्षों की लफ्फाजी को निश्चयपूर्वक टाला जाय, जिनमे सिद्धहस्तता भले ही प्राप्त कर ली गई हो परन्तु जो जनसाधारण के लिए दुर्बोध हो," लेनिन ने यह बात १९०६ में 'सामाजिक-जनवाद और चुनाव समझौते'* शीर्षक अपने लेख में लिखी थी।

बेशक, इसके माने यह नही कि लेनिन ने नारो की उपयोगिता से इनकार किया था। "प्राय यह एक उपयोगी और कभी कभी जरूरी चीज़ होगी कि सामाजिक-जनवादियो के मच पर सक्षिप्त सामान्य नारे लगाये जाय, निर्वाचन के सिद्धान्त बताये जाय, जिनके सहारे तात्कालिक नीति के सर्वाधिक मूलभूत प्रश्नो का उल्लेख किया जाय और समाजवादी सिद्धान्तो के विवेचन के लिए सब से सुविधाजनक और सर्वोत्तम कारण तथा सामग्री सामने रखी जाय," ब्लादीमिर इल्यीच ने १९११ में लिखा था।** वे बकवादी-नेताओं, जनसाधारण में दुर्भावना फैलाने वालो और जनता के अज्ञान और निरक्षरता का लाभ उठाने वालो के विरुद्ध थे। वे कहा करते थे कि "मैं बार बार यह बात दुहराऊगा कि बकवादी-नेता श्रमिक

---

*ब्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी संस्करण, खड ११, पृष्ठ १९२।

**ब्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी संस्करण, खड १७, पृष्ठ २४८।

वर्ग के सब से भयकर दुश्मन है।"* जनता को बहकाने की कला और झूठे वादे हमेशा उनके क्रोध के लक्ष्य बनते। समाजवादी-क्रान्तिकारियो ने किसानो को कौन-कौनसे सब्ज बाग नही दिखाये थे!

लेनिन ने किसानो से ऐसा कोई वादा नहीं किया जिसमें उन्हे खुद विश्वास न रहा हो। वे हमारे समाजवादी लक्ष्यो और हमारी विशिष्ट वर्ग-स्थिति को गुप्त रखने के विरुद्ध थे भले ही ऐसा करना सफलता के लिए जरूरी रहा हो। और जनता ने ऐसा अनुभव किया और देखा कि लेनिन 'गम्भीरतापूर्वक' बातचीत कर रहे हैं (यह शब्द उस श्रमिक के मुह से सुना गया था, जिसने १९१७ में लेनिन के जोशीले भाषणो को सुना था)।

इल्यीच ने उन अर्थवादियो से सख्त मोर्चा लिया जो आन्दोलन के महत्व को कम करने पर तुले हुए थे।

'रूसी सामाजिक-जनवादियो के कार्य' (१८९७) में उन्होने लिखा था. "जिस प्रकार श्रमिको के आर्थिक जीवन पर प्रभाव डालने वाला ऐसा एक भी प्रश्न नही, जिसका आर्थिक आन्दोलन के प्रयोजनो के लिए उपयोग न किया जा सकता हो, उसी प्रकार ऐसा एक भी राजनीतिक प्रश्न नही जो राजनीतिक आन्दोलन का विषय न बन सकता हो। ये दो प्रकार के आन्दोलन, सिक्के की दो तरफो की भाति, सामाजिक-जनवादियो के कार्यो के साथ घुले-मिले रहते है। सर्वहारा की वर्ग-चेतना के विकास के लिए आर्थिक और राजनीतिक आन्दोलन की समरूपेण आवश्यकता है और रूसी श्रमिको के वर्ग सघर्ष का पथ-प्रदर्शन करने के लिए आर्थिक और राजनीतिक दोनो ही आन्दोलन समान रूप से जरूरी है, क्योकि प्रत्येक वर्ग संघर्ष एक राजनीतिक सघर्ष है।"**

---

*व्ला० इ० लेनिन, चुने हुए ग्रन्थ, खंड १, भाग १, पृष्ठ ३३४।

**वही, पृष्ठ १८३।

और—

"... चतुर्दिक राजनीतिक आन्दोलन वह केन्द्र-विन्दु है जहा सर्वहारा वर्ग की राजनीतिक शिक्षा के महत्वपूर्ण हित समस्त सामाजिक विकास और, समस्त लोकतंत्रात्मक तत्वो के अर्थों में, सारे ही लोगो के महत्वपूर्ण हितो के साथ, केन्द्रित होते है। हमारा तात्कालिक कर्तव्य यह है कि हम हर उदारवादी विषय में हस्तक्षेप करे, इसके प्रति अपना सामाजिक-जनवादी दृष्टिकोण स्पष्ट बनायें और ऐसी कार्रवाई करे कि सर्वहारा वर्ग इस विषय का समाधान प्रस्तुत करने में सक्रिय योग दे और अपनी इच्छानुसार हल प्रस्तुत करे।"*

"क्या इसे निरकुशता के विरुद्ध श्रमिक वर्ग के विरोध के प्रचार तक सीमित रखा जा सकता है? विल्कुल नही। श्रमिको को यही समझाना काफी नही है कि उनका राजनीतिक दमन हो रहा है (उन्हे यह समझाना भी काफी नही है कि श्रमिको के हित मालिको के हितो के प्रतिकूल हैं) वल्कि इस दमन की प्रत्येक ठोस घटना को लेकर आन्दोलन आरम्भ होना चाहिए (ठीक वैसे ही जैसे हमने आर्थिक दमन की प्रत्येक ठोस घटना को लेकर आन्दोलन आरम्भ किया है)। और जहा तक यह दमन समाज के भिन्न भिन्न वर्गों को, जीवन और क्रियाशीलता के व्यावसायिक, नागरिक, वैयक्तिक, पारिवारिक, धार्मिक, वैज्ञानिक, आदि, आदि विभिन्न क्षेत्रो को प्रभावित करता है, उससे यह स्पष्ट है कि यदि हम निरंकुशता के सभी पहलुओ की राजनीतिक कलई न खोलें तो हम श्रमिको की राजनीतिक जागरूकता का विकास करने के अपने कर्तव्य का पालन न करेगे। दमन की ठोस घटनाओ को लेकर आन्दोलन छेडने के लिए यह आवश्यक है कि इन घटनाओ का पर्दाफाश हो (वैसे

---

*व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी सस्करण, खड ५, पृष्ठ ३१४।

ही जैसे आर्थिक आन्दोलन छेड़ने के लिए फैक्ट्री में होने वाले दुरुपयोगों का भंडाफोड करना आवश्यक हो गया था)।"*

उन दिनो राजनीतिक भंडाफोड़ का साधन था अवैध अखबार 'ईस्क्रा', जो विदेश में छपता था। इल्यीच चाहते थे कि यह अखबार एक सामूहिक प्रचारक, सामूहिक आन्दोलनकर्ता, सामूहिक संघटनकर्ता और श्रमिक जनता के कार्यो को एक विशेष दिशा में मोडने में सहायक बने और सब से महत्वपूर्ण विषयो पर अपने विचार व्यक्त करे। लेनिन ने १९०२ में 'क्या करे?' में लिखा था कि "राजनीतिक जीवन है क्या! एक अनन्त शृंखला, जिसमें असंख्यों कड़ियां है। राजनीतिज्ञ की सारी कारीगरी है—उस कड़ी को खोजना और उसे यथाशक्ति अधिक से अधिक मज़बूती के साथ पकड़े रहना (इस प्रकार कि वह हाथो से न छूट सके) जो सम्प्रति सर्वाधिक महत्व की हो, जो कम से कम यह विश्वास तो अवश्य दिलाये कि उसके पास सारी ज़ंजीर की एक मुख्य कडी तो है ही।"**

लेनिन के पथ-प्रदर्शन में 'ईस्क्रा' को इस बात की अच्छी जानकारी रहती थी कि ऐसे सर्वाधिक महत्व के विषय कैसे ढूढे जाय जिनके इर्द-गिर्द उन दिनो व्यापक आन्दोलन किया जा सकता था और किया जाता था।

समुचित राजनीतिक संघटन, जिसके अन्तर्गत श्रमिकों के बडे बड़े समुदाय आ जाते थे, आन्दोलनकर्ता के कामो को व्यापक स्वरूप देता था।

इल्यीच कहते थे कि आन्दोलनकर्ता वह लोकप्रिय नेता है जो जनता

---

*व्ला० इ० लेनिन, चुने हुए ग्रन्थ, खंड १, भाग १, पृष्ठ २६३।

**वही, पृष्ठ ३७९।

को सम्बोधित करना जानता है, जो उसके उत्साह में रवानी पैदा कर सकता है, जो प्रत्यक्ष एव सुस्पष्ट तथ्यों का इस्तेमाल कर सकता है। ऐसे ही लोकप्रिय नेता का भाषण जनता में उत्तेजना पैदा करता है, क्रान्तिकारी वर्ग उसे समझता है और फिर पूरी शक्ति के साथ उसका समर्थन करता है। सच पूछो तो लेनिन एक ऐसे ही आन्दोलनकर्ता, एक ऐसे ही लोकप्रिय नेता थे।

१९०५ की ग्रीष्म ऋतु में 'जनवादी क्रान्ति में सामाजिक-जनवाद की दो कार्यनीतिया' शीर्षक अपने पैम्फलेट में लेनिन ने लिखा था: "रूसी सामाजिक-जनवादी श्रमिक दल के सारे के सारे कार्य ने पहले से ही ऐसे सुदृढ एव अविकल स्वरूप ग्रहण कर लिये है जो इस बात की पूरी पूरी गारटी देते है कि हमारा मुख्य ध्यान प्रचार और आन्दोलन पर, छुटपुट तथा विशाल जन सभाओ पर, पत्रको तथा पैम्फलेटो के वितरण पर, आर्थिक सघर्ष में सहायता देने और उस सघर्ष के नारो को फैलाने पर ही केन्द्रित होगा।"*

परन्तु इस तथ्य का, कि आन्दोलन हमारे कार्यों का एक अग बन गया था और उसने कुछ निश्चित रूप ले लिये थे, यह मतलब नहीं कि लेनिन ने उसकी नक़ल को भी सहन कर लिया था।

उन्होने इस बात पर बल दिया था कि जनता के भिन्न भिन्न श्रेणियो के सामने प्रश्नो को भिन्न भिन्न ढग से रखना चाहिए। लेनिन ने १९११ में लिखा था "हर सामाजिक-जनवादी को, वह राजनीतिक भाषण किसी भी समय क्यो न कर रहा हो, हमेशा जनतत्र की बात करनी चाहिए। परन्तु जनतत्र के बारे मे कैसे कहा जाय इस बात का उसे ज्ञान जरूर होना चाहिए। वह उसके बारे में किसी फैक्ट्री की मीटिंग में, कज्जाक गाव मे, विद्यार्थी समाज मे, किसान के घर में,

---

*व्ला० इ० लेनिन, चुने हुए ग्रन्थ, खड १, भाग २, पृष्ठ ११०।

तीसरी दूमा के मंच से और विदेशों में छपने वाले पार्टी के किसी अखबार में एक ही स्वर से, एक ही तरह से नही कह सकता। हर प्रचारक और आन्दोलनकर्ता की कारीगरी इसी में है कि वह उन श्रोताओ को, जिनके समक्ष वह भाषण कर रहा है, किस प्रकार, सर्वोत्तम ढंग से, प्रभावित करे और किस प्रकार सच्चाई को यथासम्भव अधिक विश्वासोत्पादक ढग से, प्रभावकर तरीके से और बोधगम्य विधि से, श्रोताओ के गले तले उतारे।"* मगर इसका यह अर्थ नही कि हम किसी से कुछ कहे, किसी से कुछ। प्रश्न सिर्फ इस बात का है कि विषय को किस ढंग से प्रस्तुत किया जाय।

मुझे याद है उस समय हम पेरिस में रहते थे और प्राय. चुनाव की बैठको में जाया करते थे। व्लादीमिर इल्यीच विशेष रूप से यह देखा करते थे कि समाजवादी भिन्न भिन्न सभाओ में कैसे बोलते है। मुझे याद है कि एक दिन हमने श्रमिको की एक सभा में एक समाजवादी को बोलते हुए सुना था और उसी को फिर बुद्धिजीवियो, जिनमें से अधिकतर अध्यापक थे, की एक सभा में। इस दूसरी सभा में उसने जो कुछ कहा था वह पहली सभा में कही गई बातो से बिल्कुल भिन्न था। वह चुनावो में ज्यादा वोट प्राप्त करना चाहता था। मुझे याद है कि जब व्लादीमिर इल्यीच ने यह देखा था कि भाषणकर्ता श्रमिको के आगे तो रैडिकल बनता है और बुद्धिजीवियो के सामने अवसरवादी तो उन्हे बडा क्रोध आया था।

लेनिन इस बात की जानकारी पर विशेष महत्व देते थे कि स्थानीय सामग्री के आधार पर सामान्य नारो को कैसे बोधगम्य बनाया जाय। "केन्द्रीय मुखपत्र को स्थानीय आन्दोलन के लिए इस्तेमाल करने के निमित्त

---

*व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी संस्करण, खंड १७, पृष्ठ ३०४।

हमें सभी कुछ करना चाहिए न सिर्फ पुनर्मुद्रण द्वारा ही अपितु पत्रको में विचारो और नारो का विवरण देकर अथवा स्थानीय दशाओ के अनुकूल उनका विकास करके अथवा उनमें रद्दोवदल करके, आदि आदि,"* लेनिन ने यह बात १९०५ में 'रवोची'** अखवार को 'प्रोलेतारी' *** के सम्पादक मडल की ओर से लिखी थी।

लेनिन ने वार वार इस वात पर ज़ोर दिया था कि जनता के सवाल समुचित ढग से समझने के लिए खुद जनता का अध्ययन करना ज़रूरी है। उन्होने स्वय ऐसा ही किया था। वे जानते थे कि जनता की वाते कैसे सुनना चाहिए, जो कुछ जनता कहती है उसे कैसे समझना चाहिए, जो कुछ श्रमिक या किसान कहने की कोशिश कर रहा है उसके तत्व को कैसे ग्रहण करना चाहिए।

सर्वहारा वर्ग की अधिनायकत्व के वारे में, और हर जगह के कम्यूनिस्टो को उसकी तैयारी कैसे करनी चाहिए इस सबध में, लेनिन ने 'कम्यूनिस्ट अन्ताराष्ट्रीय सघ की द्वितीय काग्रेस के मूलभूत कार्य विपयक प्रवन्ध' (१९२०) में लिखा था "सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व समस्त श्रमिक जनता और उन शोपितो के नेतृत्व की पूर्णतम उपलब्धि है जो

---

*व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी सस्करण, खड ९, पृष्ठ २९३।

**'रवोची' — मास्को में, अगस्त से अक्तूवर १९०५ तक, रूसी सामाजिक-जनवादी मजदूर पार्टी की केन्द्रीय समिति द्वारा प्रकाशित अवैध सामाजिक-जनवादी अखवार। — सं०

***'प्रोलेतारी' — वोल्शेवीको का अवैध अखवार जो रूसी सामाजिक-जनवादी मजदूर पार्टी का मुखपत्र था। यह पत्र १४ मई १९०५ से लेकर १२ नवम्बर १९०५ तक जेनेवा में छपा था। व्ला० इ० लेनिन इसके सम्पादक थे। — सं०

दलित है, पीड़ित है, कुचले हुए है, त्रस्त हैं, वंटे हुए है और जिन्हे पूजीवादी वर्ग ने धोखा दिया है। और पूंजीवाद के सारे के सारे इतिहास ने इस नेतृत्व के लिए केवल सर्वहारा वर्ग को ही तैयार किया है। अतएव सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व की तैयारियां फौरन और हर जगह निम्नलिखित तरीके का प्रयोग करके की जानी चाहिए।" कम्यूनिस्टो की गोष्ठियो के महत्व पर जोर देते हुए लेनिन ने कहा था: "इन गोष्ठियो का एक दूसरे के साथ और पार्टी-केन्द्र के साथ निकट का संवंध होना चाहिए और अपने अनुभवो का आदान-प्रदान करके, आन्दोलन, प्रचार तथा सघटन सवधी कार्यो को सम्पन्न करके, अपने को सामाजिक जीवन के सभी पहलुओ, श्रमिक जनता के सभी विभिन्न पेशो और शाखाओ के साथ पूर्णतया अनुकूलित करके उन्हे चाहिए कि वे अपने आपको, पार्टी को, वर्ग और समुदाय को, इस वहु-पक्षीय क्रियाशीलता के विपय में, एक क्रमवद्ध तरीके से शिक्षित करें।" और. "जनता की हर श्रेणी, पेशे आदि के मनोविज्ञान की विशेषताओ, उनकी अपनी खासियत को समझने के लिए, मनुष्य को चाहिए कि वह विशेप संयम और ध्यानपूर्वक उनके साथ पेश आना सीखे।"*

इल्यीच का कथन था कि जन-सम्पर्क का मतलव सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व के लिए पार्टी को तैयार करना है। और यही वात, सारे जीवन पूरी लगन के साथ काम करते रहने के वाद, उन्होने खुद भी सीखी थी।

इसी प्रकार, लेनिन नारो के चुनाव की नक़लवाज़ी के विरुद्ध थे जो आन्दोलन के विपय वन रहे थे। उनका विचार था कि नारो का चुनाव एक वडी महत्वपूर्ण चीज है। नवम्वर १९१८ में पार्टी के

---

*व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी संस्करण, खड ३१, पृष्ठ १६७, १६८।

कार्यकर्ताओ की वैठक में टुटपुजियो की पार्टियो के संवध में रिपोर्ट देते समय व्लादीमिर इल्यीच ने कहा था कि चूकि ठीक नारा वदली हुई स्थिति को ध्यान में नही रखता अतएव हो सकता है कि समय वीतने के साथ ही साथ वह गलत हो जाय। उन्होने अर्थ-संकोच अथवा अर्थ-वृद्धि पर या तथ्यो की शृंखला से—आन्दोलन के हर चरण में—उस कडी को चुनने पर विशेष वल दिया था, जो सारी जंजीर को खीच लेने के लिए, समस्त विकासो को स्पष्ट करने के लिए, आवश्यक है।

जव मैं १८९०-१९०० के आरम्भ में एक विद्यार्थी मंडल में शरीक हुई थी, जव मैं मार्क्सवादी नही थी, उस समय मेरे साथियो ने मुझे पढने के लिए मीरतोव (लावरोव)* के 'ऐतिहासिक पत्र' दिये थे। इनका मुझपर गहरा असर पडा था। कुछ वर्ष वाद जव हम शूशेन्स्कोये गाव में अपने निर्वासन के दिन काट रहे थे उस समय इस विषय पर मैंने इल्यीच से वातचीत की थी। मैंने इन पत्रो की सराहना की थी जव कि इल्यीच ने मार्क्सवादी दृष्टिकोण से उनकी आलोचना की थी। मेरा आखिरी तर्क था "जव लावरोव कहता है कि 'जो झडा कभी क्रान्तिवादी हो सकता है वही दूसरे क्षण प्रतिक्रियावादी भी हो सकता है' तो क्या उसका कहना ठीक नही?" इल्यीच इससे सहमत थे परन्तु उन्होंने कहा कि इस एक वात से लावरोव की सारी पुस्तक तो ठीक नहीं हो सकती।

पार्टी की स्थापना हो चुकने के समय से ही उसे (पार्टी को) अपने मूल सिद्धान्तो के प्रति निष्ठावान रहते हुए भी, अपने नारो में वरावर परिवर्तन करना पड़ा ताकि वे वदलती हुई दशाओ के अनुकूल वने रहें। और जिन दशाओ में पार्टी को काम करना पडता था वे वरावर वदलती गईं।

---

*प० ल० लावरोव (मीरतोव)—विख्यात नरोदनिक सैद्धान्तिक (१८२३-१९००)।

१६०५ की गर्मी की ऋतु में इल्यीच ने रूस में इस आशय का एक पत्र लिखा था कि श्रमिको को यह बताना जरूरी है कि पार्टी का मुखपत्र कही विदेश में प्रकाशित हो रहा है, इसकी २,००० प्रतियां वितरित की जाती हैं और यह चोरी चोरी रूस में भेजा और अवैध रूप से लोगो में बांटा जाता है। किन्तु श्रमिको के पास थोड़ी-सी ही प्रतिया पहुचती थी। यह स्थिति थोड़े ही महीनो में बिल्कुल बदल गई। "अब सर्वहारा वर्ग को प्रभावित करने का सब से बडा साधन है पीटर्सबर्ग से प्रकाशित दैनिक (हम इसकी ग्राहक सख्या बढ़ा कर एक लाख तक और मूल्य घटा कर एक कोपेक प्रति अक तक कर सकते है)", लेनिन ने यह पत्र अक्तूबर १६०५ के अन्त में प्लेखानोव को लिखा था।*

दिसम्बर १६११ में इल्यीच ने 'आन्दोलनकारी मच के रूप में राज्य की दूमा'** के अत्यधिक महत्व पर बहुत कुछ लिखा था। इसका महत्व उन उदारवादियो और सावैधानिक-जनवादियो ने भी स्वीकार किया था जिन्होने हमेशा ही दूसरी राज्य दूमा में इस बात पर बल दिया था कि बोल्शेवीक इसे आन्दोलन का मंच मानना छोड़ दें।

मैं फिर कहती हू कि परिवर्तित होती रहने वाली दशाओ के अनुकूल नारो में रद्दोबदल किये गये थे।

'रूसी सामाजिक-जनवादियो के कार्य' (१८६७) शीर्षक अपने पैम्फ्लेट में लेनिन ने यह चेतावनी दी थी कि पार्टी की शक्ति का अपव्यय न किया जाय। साथ ही इस बात पर भी ज़ोर दिया था कि नगरो के सर्वहारा वर्ग के मध्य काम करने की बडी ज़रूरत है। उस समय

---

*व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी संस्करण, खंड ३४, पृष्ठ ३१६।

**व्ला०इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी संस्करण, खंड १७, पृष्ठ ३२४।

देहातो में आन्दोलन चलाने के माने होते पार्टी की शक्तियो को फिजूल खर्च करना। १९०७ में इल्यीच ने लिखा था. "हमें अपने आन्दोलनात्मक और सघटनात्मक कार्यों को वढा कर दस गुना कर देना चाहिए और ये कार्य उन किसानो के वीच करने चाहिए, जो गावो में भूखो मर रहे है और उन किसानो के वीच भी, जिनके वेटो ने क्रान्ति के महान वर्ष को देखा है और जो पिछली शरद ऋतु में सेना में भर्ती हुए है।"*

पार्टी ठीक ठीक नारो को चुन सकी और जजीर की समुचित कडी उसके हाथो में आई। इसका कारण था—मार्क्सवादी ढग से उचित अवसर का निश्चय करना, समस्त घटनाओ के सारे पहलुओ का, उनके विकास का विश्लेषण करना, यह निर्णय करना कि सम्प्रति विजय प्राप्त करने के लिए श्रमिक वर्ग को किस किस चीज की जरुरत है, सक्षेप में द्वद्वात्मक मार्क्सवादी ढग से अपने सवाल हल करना। हर चरण में पार्टी के कामो का विश्लेषण करने की दिशा में लेनिन ने काफी काम किया था। नारो का ठीक ठीक चुनाव वह था जो सिद्धान्त को व्यवहार के साथ सवद्ध करता था, जो आन्दोलन को विशेष रूप से सफल बनाता था। अक्तूबर क्रान्ति के कुछ ही पूर्व वोल्शेवीको ने शान्ति तथा जमीन सवधी जो नारे लगाये थे वे ऐसे नारे थे जिनके कारण श्रमिक वर्ग की विजय निश्चित हुई थी, जिन्होने किसानो और सैनिको पर वडा असर डाला था।

लेनिन का मत था कि नारे भले ही कितने स्पष्ट क्यो न हो परन्तु यदि उनमें वास्तविकता पर कोई ध्यान न दिया गया तो वे सिवा क्रान्तिवादी लफ्फाजी के और कुछ भी नही हो सकते।

१९१८ में जव जर्मनी की शान्ति सवधी अपमानजनक शर्तो का स्वीकार करना आवश्यक हो गया और कुछ लोगो ने शान्ति-सधि के विरुद्ध और क्रान्तिवादी युद्ध के पक्ष में अपने विचार व्यक्त किये तो लेनिन

---

*व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी सस्करण, खड १२, पृष्ठ ९६।

ने उन्हे 'क्रान्तिवादी लफ्फाज़ी' शीर्षक अपने एक लेख में करारा जवाव दिया था:

"क्रान्तिवादी लफ्फाज़ी क्रान्तिवादी नारो की पुनरावृत्ति मात्र है। इस पुनरावृत्ति में विकास के सवंधित चरण में, या किसी वातावरण विशेष में पाई जाने वाली स्थूल परिस्थितियो पर, ध्यान नही दिया जाता। क्रान्तिवादी लफ्फाज़ी के माने है वे नारे जो शानदार हो, आकर्षक हो, मदोन्मत्त करने वाले हो परन्तु साथ ही निराधार हो।" और "जो व्यक्ति शब्दो, भाषणो या घोषणाओ से वहकना नही चाहता, वह निश्चय ही यह देखेगा कि फर्वरी १९१८ में क्रान्तिवादी युद्ध का जो 'नारा' लगाया गया वह खाली शब्दो का जाल है और उसका न कोई वास्तविक अर्थ है न स्थूल। सम्प्रति इस नारे में मुख्य अन्तर्भूत बातें है–अनुभूति, आकांक्षा, क्रोध, रोष। और इन सव से पुष्ट नारा ही क्रान्तिवादी लफ्फाज़ी है।"*

१९०८ मे प्रतिक्रिया की चरम अवस्था में लेनिन ने लिखा था.

"**राजनीतिक आन्दोलन व्यर्थ नहीं संचालित किया जाता।** इसकी सफलता इसी एक तथ्य से नही आकी जाती कि हम वहुमत को अपने पक्ष में करने में तत्काल सफल हुए है या नही, और न ही समन्वित राजनीतिक कार्यवाही के सवंध में लोगो की सहमति से। शायद हम तत्काल इस सहमति को प्राप्त भी न कर सकेगे। लेकिन, फिर चूकि हम सर्वहारा वर्ग के एक संघटित दल है इसलिए हम अस्थायी विफलताओ की चिन्ता नही करते, अपितु निरन्तर कर्मठता और दृढता के साथ अपना काम करते है भले ही दवाए कितनी ही कठिन क्यो न हो।"**

---

*व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी संस्करण, खंड २७, पृष्ठ १, २-३।

**व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी संस्करण, खंड १५, पृष्ठ १९५ (आरम्भ का मोटे टाइप में छपा अंश क्रूप्स्काया का है। –सं०)

जीवन इस बात का साक्षी है कि इल्यीच का कथन सत्य था। १६१२ में क्रान्ति की एक लहर उठी, १६०५ की परम्पराएं पुनःस्थापित हुईं और उन्होंने लेना नदी की घटनाओं के जवाब में सामूहिक हड़ताल का आयोजन करने में श्रमिकों की सहायता की। श्रमिकों ने इन परम्पराओं के अनुकूल कार्य किया और उनमें जीवन फूंका।

लेनिन का कथन था कि सामूहिक क्रान्तिकारी हड़ताल आन्दोलन का एक सर्वहारा ढंग है।

जून १६१२ में उन्होंने लिखा था "पहले पहल रूसी क्रान्ति ने ही जनता को आन्दोलित, उत्साहित और संघटित करने तथा उसे संघर्ष में घसीटने के इस सर्वहारा ढंग का बहुत अधिक विकास किया था। और अब सर्वहारा वर्ग फिर इसी ढंग का उपयोग कर रहा है और अधिक दृढ़ता के साथ। इस ढंग का इस्तेमाल करके सर्वहारा लोगों के क्रान्तिवादी अग्रणी जो कुछ कर सके हैं उसे दुनिया की कोई ताकत नहीं कर सकती। आज सारा देश उबल रहा है—वह देश जिसकी जनसंख्या १५ करोड़ है, जो विशाल और बटा हुआ है, दलित है, अधिकार से वंचित है, अज्ञानता के पाश में बंधा हुआ है और अधिकारियों, पुलिस वालों और जासूसों की सेना के कारण 'दूषित प्रभाव' से दूर है। श्रमिकों और किसानों के सब से पिछड़े हुए वर्ग भी हड़तालियों के प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष सम्पर्क में आ रहे हैं। एक ही समय में लाखों क्रान्तिवादी आन्दोलनकर्ता दिखाई पड़ने लगे हैं और उनका प्रभाव इसलिए और भी बढ़ रहा है कि वे निचले वर्गों की जनता के साथ अविच्छिन्न रूप से बंधे हैं, उन्हीं की श्रेणी में रह रहे हैं, हर श्रमिक परिवार की सब से जरूरी आवश्यकताओं के लिए लड़ते हैं और महत्वपूर्ण आर्थिक मांगों के लिए चलने वाले सीधे संघर्ष को राजनीतिक विरोधों और राजतंत्र के विरुद्ध चलने वाले संघर्षों के साथ संबद्ध करते हैं, क्योंकि प्रतिक्रान्ति ने लाखों,

करोडो व्यक्तियो में राजतंत्र के विरुद्ध गहरी घृणा भर दी, उन्हें इस बात का कुछ कुछ ज्ञान कराया कि राजतंत्र क्या क्या अनिष्ट कर सकता है। और अब राजधानी के प्रगतिशील श्रमिको का नारा—'जनवादी जनतन्त्र अमर हो!'—हर हडताल के दौरान में हजारो तरह से पिछड़े हुए लोगो तक, दूरस्थ प्रान्तो में, 'जनता' तक और 'रूस के भीतरी भागो में' पहुंच रहा है।"*

जनता को तथ्यो से ही यकीन दिलाया जा सकता है। वह शब्दो पर नही, कामो पर विश्वास करती है। सोवियतो की तीसरी कांग्रेस में दिये गये अपने भाषण में लेनिन ने कहा था "हम जानते है कि जनता में एक दूसरी आवाज उठ रही है। वे अपने आप से कह रहे है—बन्दूक वाले आदमी से डरने की कोई जरूरत नही क्योकि वह श्रमिक जनता की रक्षा कर रहा है और शोषको के प्रभुत्व के विरुद्ध सख्ती से लड़ेगा। लोग ऐसा ही समझते है और यही कारण है कि सीधे-सादे निरक्षर लोगो द्वारा चलाया जाने वाला आन्दोलन—जब ये लोग कहते है कि लाल सेना के लोग शोषको के विरुद्ध अपनी शक्ति लगाये दे रहे है—अजेय है।"**

गृह-युद्ध के जमाने में आन्दोलन एक अभूतपूर्व पैमाने पर चलाया गया था। अखिल रूसी केन्द्रीय कार्यपालिका समिति की ओर से आन्दोलन-ट्रेने और जहाज चलाये गये थे। व्लादीमिर इल्यीच इनके कामो की बड़े निकट से देखभाल करते और आन्दोलनकर्ताओं के चुनाव,

---

*व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी संस्करण, खंड १८, पृष्ठ ८८।

**व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी संस्करण, खंड २६, पृष्ठ ४२०-२१।

आन्दोलन के रुख और किये गये काम के पंजीयन के सबध में निर्देश जारी करते।

सोवियत सरकार द्वारा जो आज्ञप्तिया जारी की गई थी वे प्रचार और आन्दोलन इन दोनो ही दृष्टियो से बडे महत्व की थी। लेनिन ने लिखा था

"अगर हम आज्ञप्तियो में यह न बताते कि हमें कौनसा रास्ता अख्त्यार करना चाहिए तो हम समाजवादद्रोही समझे जाते। यद्यपि ये आज्ञप्तिया व्यवहार में पूर्णतया और तात्कालिक रूप से क्रियान्वित न की जा सकी, फिर भी प्रचार की दृष्टि से उनका विशेष महत्व था। पहले हम अपना प्रचार कार्य सामान्य सत्य-कथन द्वारा करते थे परन्तु अब अपने कार्यों द्वारा कर रहे है। यह भी एक तरह का शिक्षण ही है परन्तु है कार्यों के माध्यम से – कुछ उच्छृखल व्यक्तियो द्वारा यत्र-तत्र किये जाने वाले वैसे काय नही जिनका हम सब अराजकता और पुराने ढग के समाजवाद के युग में मजाक़ उड़ाया करते थे। हमारी आज्ञप्ति एक पुकार है परन्तु पुरानी पुकार नही कि 'श्रमिको उठो और बूर्जवाओ को सत्ताविहीन कर दो!' नही, यह पुकार जनता के लिए है, वह उन्हे व्यावहारिक रूप से काम करने के लिए उनका आह्वान कर रही है। आज्ञप्तियां वे निर्देश है जो बडे पैमाने पर व्यावहारिक काम करने के लिए लोगों का आह्वान करते है। और यही एक महत्वपूर्ण चीज है।"*

इल्यीच ने आन्दोलन को न सिर्फ प्रचार के साथ ही अपितु संघटन के साथ भी संबद्ध किया। लेनिन ने आरम्भ से ही यह कहा था कि आन्दोलन सघटित होने में लोगो की मदद करता है, उन्हे एकत्र करता है और ठोस काम करने मे उनकी सहायता करता है। क्रान्ति के ज़माने

---

*व्ला० इ० लेनिन, चुने हुए ग्रन्थ, खड २, भाग २, पृष्ठ १८३।

में आन्दोलन का एक संघटनात्मक महत्व था। समाजवादी निर्माण के लिए भी इसका महत्व कम नही है। आन्दोलन के स्वरूप वदलते रहते हैं परन्तु संघटन की दृष्टि से आन्दोलन का महत्व वना ही रहता है। दूसरे शब्दो में हम कह सकते हैं कि आन्दोलन का आधार है कृति, कार्य और आदर्श।

व्लादीमिर इल्यीच आदर्श का आधार लेकर किये गये आन्दोलन पर विशेष ध्यान देते थे। 'सोवियत सरकार के तात्कालिक कार्य' शीर्षक अपने लेख में, जो मार्च-अप्रैल १९१८ में लिखा गया था, इल्यीच ने सोवियत दशाओं में आदर्श के आन्दोलनकारी महत्व पर ज़ोर दिया था। उन्होंने कहा था कि "उत्पादन के पूजीवादी ढंग के अधीन वैयक्तिक आदर्श का, मसलन किसी सहकारी कारखाने के आदर्श का, महत्व अत्यधिक परिमित था और सिर्फ वे लोग ही सदाचार-रत संस्थाओ के आदर्शों के प्रभाव द्वारा पूजीवाद को 'राहे रास्त' पर लाने का स्वप्न देख सकते थे जिनमें छोटे छोटे बूर्जवाओ जैसी भ्रान्तिया घर कर रही थीं। राजनीतिक शक्ति के सर्वहारा वर्ग के हाथ में चले जाने के वाद, स्वामित्वहरण करने वालो का स्वामित्वहरण हो जाने के वाद परिस्थिति में महान परिवर्तन होता है और, जैसे कि प्रमुख समाजवादियो ने वारवार कहा है, पहली वार आदर्श की शक्ति जनता पर अपना असर दिखाती है। आदर्श कम्यूनो को शिक्षको, अध्यापको के रूप में कार्य करना चाहिए और वे इस रूप में कार्य करेगी भी और इस प्रकार पिछडी हुई कम्यूनो का विकास करने में मदद देंगी। समाचारपत्रो को आदर्श कम्यूनो द्वारा प्राप्त सफलताओ और उनके सम्पूर्ण विवरणो का प्रचार करके, इन सफलताओ के कारणो का, इन कम्यूनो द्वारा किये जाने वाले प्रवन्ध के तरीक़ो का अध्ययन करके तथा साथ ही अराजकता, सुस्ती, अव्यवस्था और मुनाफाखोरी जैसी 'पूजीवाद की परम्पराओ' को कलेजे से चिपकाये रहने वाली कम्यूनो को 'ब्लैकलिस्ट' में रख

कर समाजवादी पुनर्निर्माण के साधन के रूप में कार्य करना चाहिए।"*

आदर्शों द्वारा आन्दोलन पर विशेप बल देकर इल्यीच ने समाजवादी स्पर्द्धा को अत्यधिक आन्दोलनात्मक महत्व दिया था।

जिस समय गृह-युद्ध समाप्त हो रहा था उस समय इल्यीच ने इस बात पर बल दिया था कि प्रचार और आन्दोलन को नया स्वरूप देने की और उन्हें समाजवादी निर्माण, और खासकर आर्थिक निर्माण तथा नियोजित अर्थव्यवस्था के कार्यो के साथ यथासभव अधिक से अधिक सबद्ध कर देने की जरूरत है।

लेनिन ने कहा था. "पुराने ढग का प्रचार साम्यवाद का वर्णन करता है और उसे अच्छी तरह समझाता है। परन्तु पुराना प्रचार बिल्कुल बेकार है क्योंकि व्यावहारिक रूप से यह दिखाना जरूरी है कि समाजवाद का निर्माण हो कैसे सकता है। सारा प्रचार आर्थिक निर्माण के दौरान में प्राप्त राजनीतिक अनुभवो पर आधारित होना चाहिए. . अब हमारी मुख्य नीति राज्य का आर्थिक निर्माण होनी चाहिए और यही सारे आन्दोलन और सारे प्रचार कार्य का आधार होना चाहिए.

"हर आन्दोलनकर्ता को राज्य का और आर्थिक निर्माण में लगे हुए समस्त किसानो और श्रमिको का नेतृत्व करना चाहिए।"**

उन्होंने इस बात पर जोर दिया था कि अखिल रूसी केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति की आन्दोलन-ट्रेनो और जहाजो को अपने राजनीतिक विभागो के कर्मचारियो में कृषिविदो और टेक्नीशियनो को शामिल करके,

---

*व्ला० इ० लेनिन, चुने हुए ग्रन्थ, खड २, भाग १, पृष्ठ ४७२-७३।

**व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी सस्करण, खड ३१, पृष्ठ ३४६, ३४७।

आवश्यक विषयों पर टेक्निकल साहित्य और फिल्में चुन कर, अपने कार्यों के आर्थिक और व्यावहारिक क्षेत्रो में सुधार करना चाहिए। उनका कहना था कि कृपि तथा उद्योग विषयो पर अपने देश में भी फिल्में वने और विदेशो से भी मंगाई जायं।

लेनिन ने इस वात पर जोर दिया था कि राजनीतिक शिक्षा संस्थाए एक वड़े पैमाने पर औद्योगिक प्रचार कार्यों का संघटन करे। उन्होने इस विपय की रूपरेखाएं भी तैयार की थी और यह माग की थी कि विदेशो में, खासकर अमेरिका में, सभी प्रकार के औद्योगिक प्रचार और आन्दोलन का, और इन विधियो का हमारे देश में उपयोग करने के संवंध में प्राप्त अनुभवो का, अध्ययन किया जाय। गोएलरो* रिपोर्ट के वाद उन्होने श्रमिको के समूहो को विद्युतकरण के कामो में लगाने और एक संयुक्त विद्युत प्रणाली-योजना के लिए होने वाले आन्दोलन को राजनीतिक रूप देने पर जोर दिया और यह मांग की कि श्रमिको का पोलीटेक्निकल दृष्टिकोण प्रसृत किया जाय क्योकि विना इसके सुनियोजित अर्थव्यवस्था का सार तक समझना असम्भव है।

लेनिन ने सोवियत देश को उदाहरण और आदर्श द्वारा कार्य करने वाले एक मूल आन्दोलन केन्द्र का, और दुनिया भर के सर्वहारा वर्ग का पथ आलोकित करने वाली एक दीपशिखा का, रूप देने का स्वप्न देखा था।

---

*गोएलरो—रूस के विद्युतकरण के लिए राज्य कमीशन। लेनिन के निर्देशो पर इस कमीशन ने १९२० में, देश के विद्युतकरण के लिए एक दीर्घकालिक योजना तैयार की थी।—सं०

बाल संघटनों के कार्य

अन्तर्राष्ट्रीय बाल सप्ताह

('प्राव्दा', १९२३)

तरुण कम्यूनिस्ट अन्तर्राष्ट्रीय संघ की कार्यकारिणी समिति ने २४ से ३० जुलाई तक के लिए तृतीय अन्तर्राष्ट्रीय बाल सप्ताह का आयोजन किया है। रूस में बाल आन्दोलन अभी शैशवावस्था में ही है इसलिए बाल सप्ताह द्वारा इस आन्दोलन का प्रचार किया जायेगा।

कुछ साथी प्रश्न कर सकते हैं कि "बाल आन्दोलन अथवा बाल संघटन की जरूरत ही क्या?" वे यह भी कह सकते हैं कि "बच्चों को बड़ा हो लेने दो, परिपक्व हो लेने दो तब वे खुद तरुण कम्यूनिस्ट लीग में शामिल हो जायेंगे। अभी वे क्या समझें? खेले-कूदें और स्कूल जायं।"

बाल कम्यूनिस्ट संघटन अपने को 'तरुण पायोनियर संस्था' कहता है। ११ वर्ष और उसके ऊपर के सभी लड़के-लड़कियां इसके सदस्य हो सकते हैं।

तरुण पायोनियर संघटन अपने सदस्यों में सामूहिक भावनाओं का सृजन करता है, उन्हें दूसरों के सुख-दुःख में शरीक होना सिखाता है, और इस बात की शिक्षा देता है कि वे सामूहिक हितों को अपने निजी हित समझें और अपने को एक समूह के सदस्य मानें। यह संघटन उनमें सामूहिक आदतें डालता है, अर्थात् अपनी इच्छा को सामूहिक इच्छा के अधीन रखते हुए संघटित और सामूहिक रूप से काम करने की योग्यता पैदा करता है और समूह के माध्यम से स्वयं अपनी प्रेरणाओं का

प्रस्फुटन करना तथा सामूहिक मत का समादर करना सिखाता है। अन्ततः वह वच्चो में यह भावना भरता है कि वे उस श्रमिक वर्ग के सदस्य हैं जो मानव सुख के लिए संघर्षरत है, कि वे अन्ताराष्ट्रीय सर्वहारा की सेना के सेनानी हैं, और इस प्रकार वह वच्चों में साम्यवाद की चेतना पैदा करता है।

ये सारे कार्य इस वात को सिद्ध करते है कि जितनी ही जल्दी वच्चे इस संघटन में भाग लेना शुरू करे उतना ही अच्छा होगा। श्रमिको के वच्चे प्राय. कहते है: "हम पिता को तो कभी देखते ही नही। वे दिन में काम करते है और शामो को वैठको में चले जाते है।" मा भी या तो काम करती है या घर-गृहस्थी अथवा वच्चो के कारण उसे फुरसत ही नही मिल पाती। और इसलिए श्रमिको के वच्चे अकेले पड़ जाते हैं। वे या तो विना किसी काम से घर पड़े रहते हैं या शैतानिया करते हैं या फिर सड़को पर घूमने वाले गुंडे-वदमाशो के फेर में पड़ जाते है। वाल संघटन के कारण वे खुश रह सकेंगे, उनकी क्रियाशीलता का क्षेत्र व्यापक वनेगा और उन्हे सोचने-विचारने का मसाला मिलेगा।

स्वाभाविक है कि तरुण पायोनियर संघटन का संचालन प्रौढ संघटन की भाति नही होना चाहिए। अगर दोनो एक ही ढंग से चलाये गये तो वड़ा खराव होगा। मगर वाल संघटनो में साम्यवाद की भावना अवश्य भरी जानी चाहिए।

प्रथमत. इन संघटनो में आमोद-प्रमोद की अच्छी व्यवस्था हो। समूह गान, खेलकूद, तैरना, वाहर घूमना, 'कैम्पफायर' वार्ता, फैक्ट्रिया देखना, सर्वहारा छुट्टियों में भाग लेना इन सव की वच्चों पर अमिट छाप पड़ेगी और वच्चो के सामने संघटन अथवा समूह का एक अच्छा चित्र आयेगा। सर्वहारा छुट्टियो में भाग लेने तथा श्रमिको के क्लवो, फैक्ट्रियो तथा वैठको में आने जाने से वच्चों और श्रमिक वर्ग का पारस्परिक सम्पर्क वढ़ेगा। इस सम्पर्क को प्रायः हर सम्भव तरीक़े से वढाया जाना

चाहिए। तरुण पायोनियरो की सरक्षता महिला विभागो, पार्टी संघटनो और ट्रेड-यूनियनो द्वारा होनी चाहिए। बच्चो में वर्ग एकता का विकास करने में इन सभी सस्थाओ को अपना पूरा सहयोग देना चाहिए।

श्रमिक सघटनो को चाहिए कि वे बाल आन्दोलन सप्ताह में तरुण पायोनियरो के कार्यो का सचालन करे, उनके लिए सैर-सपाटे की व्यवस्था करे और उन्हे अपने कामो का परिचय कराय। खास तौर से कुछ स्त्रिया और कुछ पुरुष चुने जायं जो बच्चो को अपने बचपन के बारे में और उन सघर्षो के बारे में सुनाय जो उन्हे करने पडे थे। सक्षेप में, श्रमिक वर्ग को चाहिए कि अन्ताराष्ट्रीय बाल सप्ताह के दौरान में वह तरुण पायोनियरो का एक प्रकार से 'दत्तकग्रहण' करे।

बच्चे बच्चे ही है। इसी लिए तरुण पायोनियर सघटन खेलकूद पर इतना ध्यान देता है क्योकि खेलकूद बच्चो के शरीर को पुष्ट करने के लिए बडा जरूरी है। खेल बच्चो की शारीरिक शक्ति का विकास करते है, उनके हाथो को मजबूत, शरीर को लोचदार और आखो को तेज बनाते है। वे उनकी प्रतिभा, साधन-सम्पन्नता और प्रेरणा को प्रखरता प्रदान करते है। इतना ही नही वे बच्चो की सघटन-क्षमता, आत्मनियत्रण, सहनशक्ति, स्थिति समझने की योग्यता इत्यादि गुणो का विकास करते है। बेशक, खेल अच्छे भी होते है और बुरे भी और ऐसे भी जिनसे बच्चे निर्दय और रुक्ष बनते है, जो उनमें दूसरे राष्ट्रो के प्रति घृणा का सचार करते हैं, उनके स्नायुमडल पर कुप्रभाव डालते है, उनमें जुए और दूसरे व्यसनो की लत डालते है। कुछ खेल ऐसे है जो बहुत अधिक शिक्षात्मक होते है, जो बच्चो की मन शक्ति को सबल बनाते है, उनकी न्याय-भावना का विकास करते है और उन्हे जरूरतमन्द लोगो की मदद करना सिखाते है। कुछ खेल ऐसे भी है जो बच्चो को पशु बनाते है और ऐसे भी जो उन्हे कम्यूनिस्ट बनाते है। तरुण पायोनियर सघटन

का कार्य है वच्चो को कम्यूनिस्ट वनाना। तरुण कम्यूनिस्ट लीग इस काम में उनकी मदद करती है।

लेकिन तरुण पायोनियर केवल खेलो में ही भाग नही लेते। आज के वच्चो ने वहुत कुछ देखा है, सुना है और वे मानव-सुख और नव-जीवन निर्माण के संघर्ष में भाग लेना चाहते हैं। शायद इस दिशा में उनका काम वहुत नही होगा; वस जडी-वूटियां इकट्ठा करना, फैक्ट्रियो के सामने के वागो में सफाई करना तथा फूलो के पौवे वोना, शिशु-गृहो के लिए कपडे सीना, वैठको के निमंत्रणपत्र वांटना, श्रमिक क्लव को साज-सज्जा देना, आदि आदि। इन सामूहिक कार्यो का परिणाम यह होगा कि तरुण पायोनियर वरावर यह समझता रहेगा कि वह समाज का एक उपयोगी अंग है और अन्य रचनात्मक कार्यो को सम्पन्न करेगा। सोवियत सस्थाओ को चाहिए कि वे तरुण पायोनियर पर ध्यान दें और उन्हे उपयोगी वनने के अवसर प्रदान करे।

वाल आन्दोलन स्कूलो के लिए एक वडी महत्वपूर्ण चीज़ है क्योकि इससे वच्चो में ऐसी आदते पड़ती हैं जो उनमें 'स्वशासन' की क्षमता का विकास करती है, अध्यापन की नयी नयी प्रणालियो का प्रयोग करने की सम्भावनाएं पैदा करती है और वच्चो में पढाई-लिखाई के प्रति रुचि वढाती है। फलत. उनकी ज्ञान-पिपासा वढती ही जाती है। प्रगतिशील अध्यापकों को तरुण पायोनियर संघटनो का उत्साहवर्द्धन करना चाहिए। अन्तर्राष्ट्रीय वाल सप्ताह के दौरान में स्कूलो को चाहिए कि वे तरुण पायोनियरो के लिए अपने दरवाज़े खोल दें और ये पायोनियर भी एक नये स्कूल का निर्माण करने और इस स्कूल की रीढ वनने में अध्यापको की मदद करे।

२४ जुलाई से ३० जुलाई तक के इस सप्ताह में हमें रूसी सोवियत संघात्मक समाजवादी जनतन्त्र में वाल आन्दोलन की एक ठोस वुनियाद रखनी चाहिए।

तरुण पायोनियरों में काम की चार प्रणालियां

(तरुण कम्यूनिस्ट लीग की सातवीं कांग्रेस में दिया गया भाषण, २१ मार्च, १९२९)

साथियो, आज इस बात की जरूरत है कि तरुण पायोनियरो के मध्य किये जाने वाले कामो की रूपरेखा स्पष्ट कर दी जाय। जब कभी हम बालस्काउटो के कार्यो का उल्लेख करते है, भले ही यह कार्य हमें कितने ही आकर्षक क्यो न लगें, उस समय हम यह अच्छी तरह समझते है कि इस सस्था का उद्देश्य इस बढती हुई पीढी को सम्राटो और पूजीपतियो का स्वामिभक्त सेवक बनाना है। जब कभी हम बाल कम्यूनिस्ट दलो के कार्यो का उल्लेख करते है तो हमें इन कार्यो का अर्थ स्पष्ट हो जाता है। जर्मनी अथवा किसी दूसरे पूजीवादी देश के बाल कम्यूनिस्ट दलो का प्रत्येक सदस्य यह जानता है कि उसका काम है पूजीवादी व्यवस्था के विरुद्ध श्रमिक वर्ग के सघर्ष में इस वर्ग की सहायता करना। पूजीवाद के जमाने में भी हमारे बच्चे इन सब बातो को जानते थे और यद्यपि उस पुराने जमाने में न बाल-सघटन थे और न तरुण पायोनियरो के ही कोई सघटन, फिर भी जब कभी कोई हडताल होती थी तो बच्चे ही जलूसो के आगे आगे चलते थे और फैक्ट्री के मैनेजरो और फोरमैनो पर कीचड फेंकते थे। ये बच्चे तन और मन से श्रमिको का साथ देते थे। गृह-युद्ध काल में भी हमने श्रमिको के बच्चो को, चाहे वे सघटित रहे हो या असघटित, श्रमिक वर्ग के पक्ष में देखा था। वे यह अच्छी तरह जानते थे कि श्वेतरक्षको से अपनी रक्षा करना बहुत आवश्यक है। उन्होंने हर तरह से इन श्वेतरक्षको के विरुद्ध अपनी घृणा का प्रदर्शन किया था।

परन्तु अब यदि हम अपने तरुण पायोनियरो से पूछे कि उन्हें किसलिए काम करना है तो मुझे इसमें जरा भी सदेह नही कि प्रत्येक यह जवाब देगा कि हम श्रमिको के हित में लडने को तैयार है। "हम

समाजवाद के लिए लडना और उसका निर्माण करना चाहते है। हम लेनिन के मार्ग का अनुसरण करेगे।" परन्तु इस सब का क्या अर्थ है यह समझना भी जरूरी है। हमारा सोवियत देश पूजीवाद और समाजवाद के सक्रमण काल से हो कर गुजर रहा है और हमारी समस्याएं उतनी आसान नही हैं जितनी दिखाई देती है। सत्ता मजदूरो और किसानो के हाथ में है। पूंजीपतियो की हार हुई है लेकिन हमारे सम्बन्ध उस पूजीवादी समाज की अपेक्षा अधिक जटिल है जहा एक वर्ग दूसरे का विरोध करता है और इसी लिए उन वर्गों के पारस्परिक सम्बन्ध स्पष्ट हैं। समाजवाद का निर्माण करने का प्रश्न एक ऐसा प्रश्न है जिसे पूरी स्पष्टता के साथ हल करना चाहिए। इस अवसर पर मुझे व्लादीमिर इल्यीच का एक भाषण याद आ रहा है। उन्होने कहा था कि जब हमारे यहां कोल्चक, देनीकिन और पूजीपति थे उस समय हमारी जनता अच्छी तरह जानती थी कि हमें क्यो और किससे लडना है। वह कोल्चक और देनीकिन आदि अपने शत्रुओ को अच्छी तरह पहचानती थी। लेकिन अब उन्हे अतीत के उन अवशेषो से मोर्चा लेने और नवीनता का विकास करने की जरूरत के संबंध में कोई विशेष जानकारी नही रह गई है।

यदि आरम्भ में एक निरक्षर श्रमिक को कभी कभी इन बातों को समझने में कठिनाई हो सकती है तो यह स्वाभाविक है कि तरुण पायोनियर के लिए वह और भी अधिक होगी। और इसी लिए हमें उसकी सहायता करनी चाहिए और उसे समझाना चाहिए कि समाजवाद के निर्माण का अर्थ क्या है। जब वह कहता है कि मै समाजवाद के लिए लड़ने को तैयार हूं तो सचमुच वह ठीक कहता है, सचमुच उसमें जोश है, परन्तु हम उससे यह आशा तो नहीं कर सकते कि वह हमें इन सब का निहितार्थ समझा सके। पार्टी और तरुण कम्यूनिस्ट लीग का काम है तरुण पायोनियर की सहायता करना।

आपको समझना चाहिए कि समाजवाद का निर्माण करना केवल किसी नये आर्थिक आधार का निर्माण करना नहीं है और न सोवियत शासन

की स्थापना करना और उसे मजबूत बनाना ही। इसका उद्देश्य तो एक ऐसी नयी पीढी को जन्म देना है जो कम्यूनिस्टो की तरह, समाजवादियो की तरह हर समस्या को एक नये ढग पर हल करेगी। यह एक ऐसी नयी पीढी होगी जिसकी आदते और दूसरे लोगो के प्रति जिसका व्यवहार पूंजीवादी समाज में रहने वाले लोगो से बिल्कुल भिन्न होगा। समाजवाद के निर्माण का मतलब सिर्फ यही नहीं है कि उद्योगो का विकास किया जाय, सहकारी सस्थाओ की स्थापना की जाय अथवा सोवियत शासन को मजबूत बनाया जाय—यद्यपि यह सारी बाते अनिवार्य है—अपितु इसका मतलब यह भी है कि हम अपने मनोविज्ञान को एक नया रूप दें और अपने सबधो की फिर से नीव रखें। इस दिशा में निश्चय ही तरुण पायोनियर आन्दोलन एक जबरदस्त काम करेगा। जो प्रौढ व्यक्ति पूजीवादी वातावरण में पैदा हुआ है, बडा हुआ है उसके लिए अपनी पुरानी आदते, पुराने रीति-रिवाज और पुराने सबध छोड देना बहुत दुष्कर है। हमारे तरुण पायोनियर ऐसे बच्चे है जिनमें सामाजिक विकास की वृत्तिया जन्म ले रही है, बढ रही है। मगर अभी इन वृत्तियो को एक ठोस आधार पर खडे होना है। तरुण पायोनियर आन्दोलन का यही महत्व है और इसी लिए हम पार्टी के सदस्य इसपर इतना जोर देते हैं। यह प्रश्न पूर्णत स्पष्ट हो जाना चाहिए। एगेल्स ने लिखा था कि पुराने पूजीवादी समाज में एक नया ससार अगडाइया ले रहा है। उसने 'इग्लैंड में श्रमिक वर्ग की दशा' नामक अपनी पुस्तक में श्रमिक पुरुषो और स्त्रियो तथा माता-पिताओ और बच्चों के बीच पनपने वाले पूर्णत नये सबंधो तथा भाईचारे पर आधारित एकता की बढती हुई उन प्रवृत्तियो का उल्लेख किया है जो समस्त श्रमिक जनता को भ्रातृत्व की भावना में बाधने में समर्थ थी, एक ऐसी भावना से जो निश्चय ही समाजवादी समाज की एक अपनी विशेषता होगी।

अपने तरुण पायोनियरो के आन्दोलन को देखते हुए हम कहेंगे कि हमारा काम है समस्त श्रमिक जनता के साथ भ्रातृत्व पर आधारित एकता,

और तरुण पायोनियर सघटनो के मध्य सौहार्द एवं मैत्री की भावना का विकास करना। मुझे कई वार तरुण पायोनियरो से वातचीत करने का मौका मिला है। विशेपकर मैंने उनसे उस विपय पर वातचीत की है जिसमें मेरी खास रुचि रही है। यह विपय है तरुण पायोनियर सघटनो के वीच भ्रातृत्व सवंधो की स्थापना। मुझे जो उत्तर मिले हैं वे प्राय. वडे मजेदार रहे हैं। उदाहरणार्थ, मुझसे एक वडे सक्रिय तरुण पायोनियर ने उस सामाजिक कार्य के वारे में वताया जिसे वे लोग कर रहे थे। जव मैंने उससे पूछा कि वह कौनसा काम है तो उसने मुझे जवाव दिया. "हम प्राय मिलते जुलते है।" मैंने इस सामाजिक कार्य के वारे में कुछ और जानकारी प्राप्त करने की कोशिश की। अन्त में मेरा अभिप्राय समझ कर वह वोल उठा: "मै स्वच्छता कमीशन में हू।"

"उस कमीशन में क्या करते हो?" मैंने उससे प्रश्न किया। "हम ठंढे पानी का छिड़काव कराते हैं, डाक्टरो से वातचीत करते है। निर्देश जारी करते है।" "और तुम्हारे दस्ते में कितने वच्चे वीमार हैं?" "मै नही जानता। यह डाक्टर का काम है।"

निश्चय ही यह कोई अच्छी वात नही कि स्वयं स्वच्छता कमीशन के सदस्य को यह न मालूम हो कि उसके साथी स्वस्थ हैं या वीमार, सव के सव लिख-पढ सकते है या नही, और वे कैसे रहतें है। यह भी खेदजनक है कि उसमें मित्रता की भावना न पाई जानी है।

काग्रेस की रिपोर्ट में कहा गया था कि वच्चो के फिर से ग्रूप वनाये जाय और एक स्कूल के वच्चे यथासम्भव एक ही तरुण पायोनियर संघटन के हों। वेशक यह ठीक भी है क्योंकि ऐसा सघटन एकरूप होना चाहिए जिसकी स्थापना सभा-समाज के लिए ही नही, अपितु सम्पर्क और पारस्परिक सहायता के लिए हुई हो। हर मुमकिन तरीके से सौहार्द की भावना को मज़वूत वनाना चाहिए। लेकिन सम्प्रति हो क्या रहा है? कल मुझे एक तरुण पायोनियर का एक पत्र मिला था। वह लिखता है, "मैं एक पिछडा

हुआ पायोनियर हू और शीघ्र ही तरुण पायोनियरो के वर्ग ने निकाल दिया जाऊगा। मैंने यरोस्लाव्स्की की पुस्तक* बडे ध्यान से पढी है, प्राय जवानी रट ली है। कृषि के प्रति कम्यूनिस्टो के क्या विचार हैं यह मैं अच्छी तरह जानता हू। लेकिन मुझे यह सोच कर निराशा होती है कि मैं प्रार्थना नही करता। कृपया मुझे कुछ ऐसी पुस्तके भेज दें जिनसे मैं कुछ सीख सकू।" इस पत्र से क्या पता चलता है?

इससे पता चलता है कि यह तरुण पायोनियर अपने सघटन में खुश नही है, उसने यरोस्लाव्स्की की पुस्तक अच्छी तरह नही पढी है और शायद उसे अच्छी तरह समझता भी नहीं। उसके साथी उसे पिछडा हुआ कहते है और उसे तरुण पायोनियरो के सघटन से निकाल देने की धमकी देते है। यही कारण है कि बच्चा अकेलापन महसूस करता है। और इसी लिए उसे धर्म की आवश्यकता का अनुभव हो रहा है। अगर हमें धर्म को एक तरफ रख कर अपना काम करना है तो हमें ऐसी सामूहिक सस्थाओ की स्थापना करनी होगी जिनमें सौहार्दपूर्ण एकता की भावना हो और जो तरुणो को उन्ही के भाग्य के भरोसे न छोड़ दें।

तरुण पायोनियर सघटन का मुख्य कार्य है सौहार्दपूर्ण एकता का विकास करना और मैत्री की भावनाओ को समुन्नत एवं सुदृढ बनाना। इस सघटन के कार्य सभाए, विचार-विनिमय अथवा खेलकूद कुछ ही क्यो न हो उनमें सौहार्दपूर्ण एकता की भावना निश्चय ही होनी चाहिए।

दूसरी बात। प्रत्येक युवक पायोनियर सामाजिक कार्यकर्ता हो। मेरी मुलाकात एक ऐसे अध्यापक से हुई थी जो कई वर्षो तक अमेरिका

---

*यरोस्लाव्स्की (१८७८-१९४३)—प्रसिद्ध सोवियत राजनीतिज्ञ और पत्रकार, जिसने अपनी विख्यात कृति 'आस्तिको और नास्तिको के लिए बाइबिल' में यह सिद्ध किया था कि बाइबिल के सिद्धान्त पूर्णत विज्ञान विरोधी है।—स०

में रह कर रूस लौटा है। उससे मेरी वातचीत भी हुई जो वडी दिलचस्प रही। आपका क्या ख्याल है कि जिस समय वह विदेश में था उस समय रूस में ऐसा कौनसा परिवर्तन हुआ था जिसने उसे सब से अधिक प्रभावित किया होगा? यह परिवर्तन था—लोग अब 'मै' के स्थान पर प्राय. सर्वनाम 'हम' का प्रयोग करने लगे थे। उसने वताया कि सड़को पर वच्चे प्रायः 'हम' शब्द का प्रयोग करते है। यही वात लाल सेना के सिपाहियो पर और लड़कियों पर भी लागू होती है। यही एक वात थी जिसका उस अध्यापक पर सव से ज्यादा प्रभाव पड़ा था। सहसा उसकी निगाह एक सुन्दर पोशाक वाली स्त्री पर पड़ती है और वह उसे कहते हुए सुनता है, "और मैंने कहा था।" हर व्यक्ति 'हम' का प्रयोग करता है लेकिन यह वूर्जवा जैसी महिला कहती है 'मै'। निश्चय ही यह एक ऐसी वात थी जिसकी ओर उसका ध्यान आकृष्ट हुआ था। हर चीज़ इस ओर इशारा कर रही है कि 'मै' का स्थान 'हम' लेगा। लेकिन यह काफी नही है। हर समस्या को सामान्य हितो और जनता के दृष्टिकोण से देखने की शिक्षा ग्रहण करना भी ज़रूरी है। इस संवध में जो कुछ भी हो रहा है वह वहुत संतोपजनक नही कहा जा सकता। उदाहरणार्थ, प्राय. हम दिन में विजली के वल्व जलते हुए देखते है और किसी को भी यह जरूरत नही महसूस होती कि वह उन्हें वुझा दे। शायद वे सोचते हैं कि यह मेरा काम नहीं; लोगो को इस काम की अलग तनख्वाह मिलती है। या एक दूसरी मिसाल ले लीजिये। एक वीमार आदमी सडक पर पडा है और उसके पास से लोग गुजर रहे है। पर वे सोचते है "यह काम मिलीशिया का है।" हमारे चारो ओर जो कुछ हो रहा है उसके प्रति इतनी उदासीनता! जहां जहा सामूहिक सहायता की ज़रूरत है वहा हस्तक्षेप तक न करना! यह सब ऐसी वाते है जो हमारे समाज में वहुत अधिक पाई जाती है। हमें चाहिए कि हम उन्हे दूर करने की कोशिश करे। इसमें कोई संदेह नही कि सामाजिक उपयोगिता के जिस

काम का उल्लेख भाषणकर्ता ने किया है— बशर्ते कि उसका सुचारु रूप से संघटन किया जाय, वह तरुण पायोनियरों की शक्ति के बाहर न हो, उसके परिणाम व्यावहारिक हो—वह सामूहिक भावना और बच्चों में सामाजिक उत्तरदायित्व का विकास करने का एक सर्वोत्तम साधन है।

जिस समय व्लादीमिर इल्यीच ने सहकारिता के बारे में लिखा था (और हम उनके इस लेख का हमेशा ही हवाला दिया करते है) उस समय उन्होंने न सिर्फ व्यापारिक सहकारिता के बारे में अपितु श्रम-सहकारिता के बारे में भी अपने विचार व्यक्त किये थे। इस लेख का संबंध एक दूसरे लेख 'महान आरम्भ' से है जिसमें उन्होंने सुबोतनिकों* के बारे में लिखा था। उन्होंने कहा था कि जरूरत इस बात की है कि नये नये श्रम-संबंध स्थापित किये जायं। भूदासत्व के दिनों में लोग कोड़ों के डर से और पूंजीवाद के जमाने में भूख के डर से काम करते थे। अब जरूरत है मिल जुल कर काम करने की, सामूहिक रूप से काम करने की और पूरी लगन के साथ काम करने की।

तरुण पायोनियरों में इस सामूहिक सहकारी श्रम-भावना का विकास करना बड़ा जरूरी है। मैं आपका ध्यान एक बात की ओर आकृष्ट करूंगी। हमारे श्रमिक प्राय कहते है, "हमारे तरुण पायोनियरों की दशा देख कर आखें भर आती है।" मैं समझती हूं कि पार्टी के सदस्य और श्रमिक तरुण पायोनियरों में श्रम का संघटन करने में काफी मदद कर सकते है। यही पर्याप्त नही है कि तरुण पायोनियर क्लब के पास सुयोग्य शिक्षक हो। इससे ज्यादा जरूरी यह है कि वह सुनियोजित श्रम, श्रम-विभाजन, श्रम-क्षेत्र में पारस्परिक सहायता और श्रमिकों के उपयुक्त संघटन के महत्व को समझे। बड़े पैमाने पर उत्पादन और फैक्ट्रियों और प्लान्टों में श्रम-

*छुट्टी के दिनों में या ओवर-टाइम काम करके राज्य को दी जाने वाली नि शुल्क मेहनत।

संघटन से श्रमिको को श्रम-समस्याओ पर ठीक ठीक कार्यवाही करने की शिक्षा मिलती है। श्रमिक अपनी फैक्ट्री में श्रम-सघटन का ज्ञान प्राप्त करता है। उसे चाहिए कि इस ज्ञान को वह तरुण पायोनियरो में भी बाटे। प्रौढ श्रमिको के लिए यह आवश्यक है कि वे श्रम का संघटन करने में तरुण पायोनियरो की सहायता करे।

और अब एक आखिरी बात। बच्चे प्राय. कहते है, "बाबा लेनिन बच्चो को प्यार करते थे और हमसे कहते थे पढो और पढो।" वस्तुत यह तो संक्षेप में वही बात है जिसे प्राय अध्यापक बताया करते है। यह ठीक है कि व्लादीमिर इल्यीच ने बार बार इस बात पर ज़ोर दिया था—और आज हर व्यक्ति उसका कारण भी समझता है—कि ज्ञान प्राप्त करना अनिवार्य है और बिना इसके एक नये जीवन का निर्माण करना असम्भव। वह कहते थे कि श्रमिको और किसानो के बच्चो के लिए तो ज्ञान प्राप्त करना विशेष रूप से अनिवार्य है। लेकिन खुद उन्होने भी एक कम्यूनिस्ट तरीके से और इस श्रम में पारस्परिक सहायता का बहुत अधिक विकास करके ज्ञानार्जन की आवश्यकता पर ज़ोर दिया था।

मैं समझती हूं ये ऐसे सिद्धान्त है जिनपर तरुण पायोनियरो में होने वाला कार्य आधृत होना चाहिए। इसके अर्थ है सौहार्दपूर्ण एकता का विकास करना, प्रत्येक प्रश्न को एक सामाजिक ढंग से देखना, सामूहिक तथा सहकारी ढंग से काम करने तथा ज्ञान प्राप्त करने की योग्यता पैदा करना। यदि हम कार्य की इन चारो प्रणालियो की ठीक ठीक व्याख्या करेंगे तो हम तरुण पायोनियरों के आन्दोलन में ऐसी ऐसी बातो का समावेश कर सकेंगे जिनका समावेश अभी तक एक क्रमबद्ध तरीके पर उसमें नहीं हो सका है। यह समय की माग है। साथियो, मै इन्ही सब बातो के लिए आपसे अपील करती हूं। पार्टी के प्रत्येक सदस्य, तरुण कम्यूनिस्ट-लीग के प्रत्येक सदस्य और तरुण पायोनियरो के प्रत्येक नेता का कर्तव्य है कि वह इस ओर कार्य करे और प्रयास करने के साथ ही साथ इन

सभी समस्याओं पर सोच-विचार भी करे। तरुण पायोनियरो का हमारा आन्दोलन एक खास तरह का आन्दोलन है, जो किसी भी दूसरे देश में नही हो सकता। तरुणों की पीढी पर अगर कोई सब से अधिक प्रभाव डाल सकता है तो वह यही आन्दोलन है। हमें चाहिए कि हम इसकी मागो पर ध्यान दें और इसका कार्यक्षेत्र व्यापक बनायें। बस मैं यही कहना चाहती थी।

तरुण पायोनियर आन्दोलन – एक शिक्षणशास्त्रीय समस्या

('उचीतेल्स्काया गज़ेता,' अंक १५, ८ अप्रैल, १९२७)

हम बार बार कह चुके है कि स्कूल और तरुण पायोनियर आन्दोलन एक ही उद्देश्य की पूर्ति करते हैं अर्थात् वे बच्चो को इस योग्य बनाते है कि बच्चे एक नयी व्यवस्था के लिए सघर्ष और उसका निर्माण कर सके। तरुण पायोनियरो के आन्दोलन का लक्ष्य ऐसे युवक पैदा करना है जो समाजवाद और साम्यवाद का निर्माण करे। समाजवाद के निर्माण का अर्थ यही नही है कि श्रम-उत्पादिता बढ जाय या अर्थ-व्यवस्था सुधर जाय। बेशक, अतिविकसित सामाजिक अर्थ-व्यवस्था जन-कल्याण का आधार है, उसकी नीव है। समाजवादी निर्माण की मुख्य बाते हैं – समस्त सामाजिक व्यवस्थाओ का पुनस्सघटन, नयी सामाजिक व्यवस्था की स्थापना और लोगो में नये नये सबधो का विकास। हम जिस जीवन का निर्माण करना चाहते हैं वह सिर्फ भरपूर ही न हो, अपितु सुखद भी हो।

हमें चाहिए कि हम प्रौढो को समाजवादी भावना के अनुसार पुन शिक्षित करे और तरुणो की पीढी में इस भावना का नये सिरे से विकास करे। इसका उद्देश्य क्या है? व्लादीमिर इल्यीच ने इस भावना की बडी आसान व्याख्या की है। श्रमिकों और लाल सेना के सैनिकों की गैर-पार्टी कान्फ्रेन्स में उन्होंने कहा था . "पुराने जमाने में लोग कहा

करते थे कि हर शख्स अपने लिए और ईश्वर सब के लिए; और उसका नतीजा देखो—मनुष्य कितना दुखी है। अब हम कहेंगे कि एक व्यक्ति सब के लिए और बिना ईश्वर की सहायता के किसी प्रकार अपना काम चलायेंगे।"

यद्यपि ये शब्द शिक्षा के सिलसिले में नही कहे गये थे फिर भी मैं समझती हूं कि उनसे हमें स्पष्ट पता चल जाता है कि हमें अपने ज़माने की शिक्षा-समस्याएं कैसे हल करनी चाहिए। हमें चाहिए कि हम बच्चो का पालन-पोषण इस ढंग से करे कि उनकी रग रग में सामूहिक भावना का प्रवेश हो सके। यह किया कैसे जाय? यही शिक्षणशास्त्र विषयक एक गम्भीर समस्या सामने आती है।

बूर्जवा पद्धति में श्रमिको के बच्चो तथा जमीदारो और पूजीपतियो के बच्चो का पालन-पोषण भिन्न भिन्न तरीको से होता है। बूर्जवा यही कोशिश करता है कि श्रमिको के बच्चे आज्ञाकारी गुलाम बने और ज़मीदारों और पूजीपतियो के बच्चे नेता। वह कोशिश करता है कि श्रमिको के बच्चो का व्यक्तित्व और निजत्व समाप्त हो जाय। अतएव उसकी सारी शिक्षा-पद्धतियां एक इसी लक्ष्य की पूर्ति के लिए तथा उन्हे निष्क्रिय बनाने के लिए हैं। और अगर उसके तरीके कुछ बच्चो पर कारगर नही होते तो बूर्जवा उन्हें आगे बढ़ाता है, दूसरो के विरुद्ध खडा करता है और अपने स्वामिभक्त नौकरो की श्रेणी में ला पटकता है। शासक-वर्ग के बच्चो के लिए पढ़ाई-लिखाई की विधियां बिल्कुल भिन्न है। बूर्जवा ऐसे बच्चो को उन व्यक्तियो का रूप देता है जो जनता और समूह के विरुद्ध खडे होते है और उन्हे सिखाता है कि जनता पर शासन कैसे करना चाहिए।

शिक्षा की सोवियत प्रणाली का उद्देश्य है—हर बच्चे की योग्यता, क्रियाशीलता, जागरूकता, निजत्व और व्यक्तित्व का विकास करना। यही कारण है कि हमारी शिक्षा-प्रणाली बूर्जवा पब्लिक स्कूलो की शिक्षा-

प्रणाली से भिन्न है। शिक्षा के हमारे तरीके उन तरीको से एकदम भिन्न है जिनका उपयोग बूर्जवा बच्चो को पढ़ाने-लिखाने में किया जाता है। बूर्जवा इस बात का प्रयत्न करता है कि अपने बच्चो को इस ढग से शिक्षण दे कि वे अपने को दूसरो से अलग समझें और जनता का विरोध करे। कम्यूनिस्ट शिक्षा-प्रणाली में दूसरे तरीकों का इस्तेमाल किया जाता है। हम बच्चो के चतुर्दिक विकास पर जोर देते है – हम चाहते है कि हमारे बच्चे नैतिक और शारीरिक दोनो प्रकार से सबल बनें, हम उन्हे शिक्षा देते है कि वे अपने को समुदाय का एक अग समझें और व्यक्तिवादी ही बन कर न रह जाय। हमारा लक्ष्य है कि हम बच्चो को यह सिखायें कि वे समुदाय के विरुद्ध न खडे हो कर उसकी शक्ति बनें और उसे एक नये, ऊचे स्तर पर स्थापित करे। हमारा विश्वास है कि बच्चे का व्यक्तित्व सिर्फ समुदाय में ही सब से अधिक विकसित हो सकता है। सामुदायिक शिक्षा से बच्चे के व्यक्तित्व का विनाश नही होता, अपितु शिक्षा का क्षेत्र व्यापक बनता है और शिक्षा देने का ढग समुन्नत।

इस दृष्टि से तरुण पायोनियर आन्दोलन बहुत कुछ कर सकता है। प्रश्न यह है कि शिक्षा सबधी कार्यो में वह कौनसा रास्ता अपनाये? पहले तो यह कि तरुण पायोनियरो को मौका मिलना चाहिए कि वे दूसरे बच्चो के अनुभवो में शरीक हो, उनसे फायदा उठाये। जिस बच्चे के भाई-बहन न हो तथा मा 'हानिकर प्रभावो से' जिसकी रक्षा बडी उत्कठा के साथ करती हो उसमें सामूहिक भावनाए कभी न आ सकेगी।

तरुण पायोनियर सगठन को इस बात पर बराबर ध्यान देना चाहिए कि उसके सदस्यो को एक दूसरे के अनुभवो में शरीक होने का हर सम्भव अवसर मिलता रहे। इसके माने यह नही है कि उनके लिए 'मनोविनोद की व्यवस्था की जाय', और सिनेमा-नाटक आदि का प्रबध किया जाय। सवाल उनके मनोविनोद का नही अपितु यह है कि उनके सगठन के कार्यो को सजीव और भावुकतापूर्ण बनाया जाय। उदाहरणार्थ,

ऐसे भी मामले देखने-सुनने मे आये है जबकि पायोनियर नेता रैली में देर से आता है और तरुण पायोनियर उसके इन्तजार में इधर-उधर मटरगश्ती करते है। और जब नेता आता भी है तो उनके साथ धूम्रपान और अनुशासन के संबंध में ऐसी चर्चाएं ले बैठता है जो मन को उबा डालती है। या फिर बहुत हुआ तो राजनैतिक शिक्षा की कक्षा शुरू कर देता है। परिणाम यह होता है कि ऐसे सघटन टूट जाते है।

समूह-गान, रोचक और बौद्धिक खेलकूद, सामूहिक वाचन इत्यादि को सघटित करने की क्षमता भी अनिवार्य है। ऐसा करना बच्चो की एकता के लिए बहुत जरूरी है, क्योंकि इन कामो में बच्चो को दूसरो के जिस सुख-दुख में शरीक होना पडता है उससे वे एक दूसरे के और पास आते है। ऐसे कामो में औपचारिकता कम होनी चाहिए और तत्व की बाते अधिक। किन किन खेलो को चुनना चाहिए यह देखना भी ज़रूरी है, क्योकि कुछ खेल ऐसे होते है जो बच्चो की सामूहिक भावना के विकास में बाधक बनते है और उन्हे एकता के सूत्र में बांधने के बजाय उनका विघटन करते है। बच्चे कौन कौन सी पुस्तके पढें यह एक दूसरा ज़रूरी सवाल है—उन्हें पढने के लिए वे गन्दी पुस्तके दी जाय जिनसे व्यक्तिवाद की अहम्-भावना का विकास होता हो अथवा वे पुस्तके जो सचमुच उपयोगी हो?

एकता के मार्ग में जिन दूसरी चीज़ो की ज़रूरत है वे है—निकट की मैत्री, मित्रो की स्कूली और घरेलू स्थिति की जानकारी, उनकी सहायता करना, आदि। जिसे ज्यादा आता है उसे चाहिए कि अपने पिछडे हुए साथियो की उन कामो में मदद करे जो उन्हे घर के लिए दिये गये है। जिसके पास खाना ढेर है उसे चाहिए कि अपना भोजन उन व्यक्तियो के साथ मिल बाट कर खाये जिन्हे खाना नही मिलता। जिसके पास घर-गृहस्थी की झंझटें नही हैं उसे चाहिए कि उन लोगो के कामो में हाथ बंटाये जो इन

झंझटो में फंसे रहते हैं। तरुण पायोनियर संघटनों में सौहार्द के आधार पर सुसंघटित पारस्परिक व्यवहार की व्यवस्था होनी चाहिए।

तीसरी बात है सामूहिक अध्ययन, पढ़ना-लिखना, सैर-सपाटा, दीवालपत्र, डायरी इत्यादि, इत्यादि। यह बात खास तौर से जरूरी है कि बच्चो को एक ओर ऐसे समूहों में न बांटा जाय जो बहुत सक्रियता से काम करते हो, हर काम को पूरा कर लेते हो और इसी लिए काम से बुरी तरह लदे रहते हो, और दूसरी ओर उन निष्क्रिय बच्चो के समूहो में न रखा जाय जिन्हे कोई भी काम न दिया जाता हो। सामूहिक प्रयास, श्रम का सम्यक् विभाजन, सम्यक् रूप से कार्यो का वितरण, बच्चो की निजी रुचियो का सामूहिक हितो के साथ सामंजस्य ये सारी समस्याएं ऐसी है जिनका समाधान होना ही चाहिए।

चौथी बात है श्रम के संबंध में व्यक्ति की निजी कुशल मेहनत को सामूहिक श्रम के साथ समन्वित करना, श्रम क्षेत्र में वैयक्तिक और सामूहिक स्वभावो का विकास, श्रम का समुचित समन्वय, किये गये कार्य को आंकना, पारस्परिक नियंत्रण, जीवन के सभी आर्थिक क्षेत्रो में सहयोग।

पांचवी बात है संघटन के भीतर अनुशासन बनाये रखने की स्वतः-उद्भूत भावना। कम्यूनिस्ट सुब्बोतनिको के संबंध में लेनिन ने 'महान आरम्भ' शीर्षक अपने लेख में पूंजीवाद के अधीन स्थापित अनिवार्य अनुशासन के स्थान पर स्वतःउद्भूत और चेतनाशील सामाजिक अनुशासन का समर्थन किया है। स्कूल और तरुण पायोनियर संघटन में अनुशासन और दंड के संबंध में क्या कार्यवाही की जाय इसपर भी लेनिन ने इस लेख में प्रकाश डाला है।

और आखिरी बात है सामाजिक कार्य तथा सामूहिक कार्यों के माध्यम से प्राप्त ज्ञान और पड़ी हुई आदतो का सभी की भलाई के लिए उपयोग। हम सामाजिक कार्य के चुनाव के संबंध में विचार करेंगे। इनके

अन्तर्गत स्वेच्छा और जागरूकता के साथ किया जाने वाला चुनाव, सामूहिक निर्णय, सामूहिक नियोजन, योग्यता और क्षमता का वास्तविक अनुमान आदि अनेक वाते आती है। तरुण कम्यूनिस्ट लीग की तीसरी काग्रेस में व्लादीमिर इल्यीच के दिये गये भाषण के अधिकाश का सवध सामाजिक कार्यो तथा सामाजिक उपयोगिता के सामूहिक श्रम से था।

इस प्रश्न का कई वातो से निकट का सवध है, जैसे प्रौढ नर-नारियो को अपने वच्चो की सामूहिक शिक्षा और स्वाध्याय में कैसे मदद करनी चाहिए? स्कूल तथा तरुण पायोनियर आन्दोलन के वीच कैसे सवध होने चाहिए?

उपर्युक्त प्रश्नो का संवंध अनेक ऐसी समस्याओ से है जो अत्यधिक महत्वपूर्ण है। फलत. तरुण पायोनियर आन्दोलन के नेताओ और शिक्षाशास्त्रियो को उन्हे हल करना चाहिए।

हमारे बच्चों को उन पुस्तकों की जरूरत है जो उन्हें वास्तविक अन्तारा‍ष्ट्रीयवादी बनायेंगी

('लितेरातूर्नया गजेता', १७ अक्तूवर, १९३३)

मुझे वह दिन याद आ रहा है जव मैं एक स्विस स्कूल देखने गई थी। स्कूल की परिचय-पुस्तिका में इस वात का उल्लेख था कि स्कूल का अपना पुस्तकालय है। मै एक पाठ सुनने वैठ गई और जव वह समाप्त हुआ तो मैंने अध्यापिका से पुस्तकालय दिखाने का अनुरोध किया।

"हमारे यहा तो कोई पुस्तकालय नही," उसने जवाव दिया, "और सच पूछिये तो उसकी हमें जरूरत भी नही। यह काफी है कि वच्चे पाठ्यपुस्तको को ही ठीक ठीक पढते रहे। देखिये तो कि ये कितने सुन्दर चिकने कागज पर छपी है और इनमें कितने वढिया चित्र है।"

यह वात स्वीट्ज़रलैंड के एक गाव की अध्यापिका ने कही थी।

एक साल बाद मुझे पेरिस और वहा के रंगीन जीवन के दर्शन करने का मौका मिला। वहां के स्कूली बच्चो को ढेरो पुस्तकें दी जाती थी और सभी में बूर्जवा नैतिकता और धनियो के आदर्शों के बखान रहते थे। यह बात १९०८-०९ की है। मैंने अपने जमाने में इसके बारे में लिखा था। अब दुनिया में ऐसे 'शान्त कोने' नही रहे। डूबते को तिनके का सहारा मिला। मरणासन्न पूजीवाद बढती हुई पीढी से चिपका हुआ है और हर सम्भव तरीके से—इनमें बच्चो की पुस्तके भी शामिल हैं—युवको को बरगलाने में लगा है। ये पुस्तके सीधी-सादी ज़बान में, बडे कौशल के साथ, लिखी मिलती हैं। इनमें सनसनीखेज बातें होती है और भ्रामक विषय। इस वर्ष हमारी पाठ्यपुस्तके खराब नही रही हैं किन्तु बहुत कुछ अच्छी पाठ्यपुस्तके निकाल चुकने के बाद अब हम स्कूलो में पुस्तकालय खोल रहे है और यह देख रहे हैं कि हमारे बच्चे और अधिक पुस्तकें पढें। सचमुच हमें बच्चो के लिए अच्छी पुस्तको की जरूरत है, ऐसी पुस्तको की जरूरत है जिनमें साम्यवाद की भावना हो, जो बच्चों में जोश भरे, सीधी-सादी ज़बान में हो और सच्चाई के साथ लिखी गई हो।

ऐसी पुस्तके जरूर लिखी जानी चाहिए। और वे लिखी जाय न सिर्फ हमारे प्रतिभासम्पन्न बच्चो के लिए, जो हमारे सारे क्रिया-कलापो में एक महत्वपूर्ण स्थान रखते है और जिन्हे देख कर हमारे विदेशी दर्शक सराहना करते करते नही थकते, अपितु साधारण से साधारण स्कूली बच्चो तक के लिए। पहले की अपेक्षा अब हमें साधारण बच्चो पर अधिक ध्यान देना चाहिए। क्या हम इन साधारण स्कूली बच्चो को जानते हैं? शायद नहीं। हम भूल जाते है कि वे उस पीढी के है जिसने न तो जार के किसी सिपाही, या पूजीपति को ही देखा है और न शोषण को ही। ये बच्चे वर्गविषमताओ, वर्ग-संघर्ष और पूंजीपतियो के विरुद्ध श्रमिक वर्ग संघर्ष के बारे में ज़रा भी नहीं जानते। आज के प्रौढ व्यक्ति अपने बचपन में 'बॉस', 'मजदूर', 'शोषक' और 'शोषित' जैसे

शब्दो के अर्थ जानते थे और इसी लिए उन्हे यह नही समझ पडता कि आजकल के बहुत से बच्चे इन शब्दो के बारे में बिल्कुल नही जानते और बहुतों के लिए तो ये शब्द निस्सार धारणाएं मात्र हैं। और कभी कभी कोई योग्य विद्यार्थी, जो तरुण पायोनियर की लाल टाई भी लगाये होगा, ऐसी बेतुकी बात बोल सकता है जिसे सुन कर उस प्रौढ को यह विश्वास भी न जमेगा कि बच्चा इतनी साधारण बात तक नहीं जानता। आज का बच्चा ऐसी बहुत सी बाते जानता है जिन्हे कल का बच्चा नही जानता था, लेकिन फिर भी आज का बच्चा ऐसी कोई चीज़ नही जानता जिसे देहात और शहर के बच्चे और श्रमिको के बच्चे अपने छुटपन ही में जानते थे। अध्यापक को इस बात का सन्देह तक नहीं होता और तरुण पायोनियर नेता इसपर कोई ध्यान नही देता। बच्चो को जो कुछ बताया जाता है उसे वे, इन छोटी छोटी बातो के बारे में अनभिज्ञ होने के कारण, अपने ही और कभी कभी बड़े विचित्र तरीके से समझते हैं। बच्चो को अधिकाधिक पढ़ना चाहिए। हमारे यहां विगतकालीन पूजीवाद संबंधी पुस्तके हो, ऐसी पुस्तके जो ईमानदारी के साथ, सच्चाई के साथ लिखी गई हो, जिन्हे पढ़ कर जोश आता हो और पुरानी व्यवस्था के प्रति घृणा पैदा होती हो। परन्तु इस व्यवस्था का पूरी सच्चाई के साथ, यथावत् और उसकी सारी जटिलताओ सहित चित्रण किया गया हो और साथ ही यह चित्रण यथासम्भव संगत हो, ठोस हो। इस प्रकार की पुस्तकें काफी अधिक होनी चाहिए। हमारे पास बच्चों की पुस्तकें ऐसी हो जिनमें पूंजीवादी देशो में चलने वाले संघर्ष का स्पष्ट एवं यथावत् चित्रण हो। हाल ही में जर्मनी से सोवियत संघ आये हुए एक साथी ने कहा था: "मैंने आपके तरुण पायोनियरो से बातचीत की है और वे इस बारे में बिल्कुल नहीं जानते कि हमारे तरुण पायोनियर कैसे रहते हैं और उन्हे कितना कठिन संघर्ष करना पड़ रहा है। जी हां, इन सब का उन्हें रत्ती भर ज्ञान नहीं!"

वच्चो को यह समझाना वडा जरूरी है कि "दुनिया के मजदूरों, एक हो !" इस नारे का क्या महत्व है। यदि आप इस नारे को नहीं समझते, यदि आप इसके महत्व को नहीं समझते तो आप श्रमिक वर्ग के सच्चे हिमायती नही वन सकते। यह नारा क्रियाशीलता का पथ-प्रदर्शक है, सारी दुनिया के श्रमिक वर्ग की विजय का प्रतीक है। वच्चो को चाहिए कि वे इसे अच्छी तरह समझ ले। और अगर वे उसे एक वार भी समझ लेगे तो फिर निश्चय ही यह समझ जायेंगे कि फासिस्टवाद क्या है और उसे विश्वव्यापी श्रमिक सघटन से क्यो भय लगता है।

समाज विज्ञान के अध्यापक प्राय. वच्चो को यथासम्भव अधिक से अधिक 'तथ्य' देने का प्रयास करते है और उनकी स्मृति को सक्रमणकालीन अथवा, ज्यादा से ज्यादा, उदाहरणो के रूप में सग्रहीत तथ्यो से वोझिल वना देते है। अगर उनके शिष्य व्यौरे देने में कुडमुडाते है तो वे उन्हे नम्वर कम देते है, लेकिन उन्हे यह वात समझ में नही आती कि वच्चे अन्ताराष्ट्रीय वाल सप्ताह सवधी मूल वाते समझते है या नही। वच्चे तभी अन्धराष्ट्रवादी विचारो से दूर रह सकेंगे जव वे इस नारे को समझ सके– "दुनिया के मजदूरो, एक हो !"

हाजिरी के समय तरुण पायोनियर नेता इस वात का ध्यान रखता है कि वच्चो को अन्ताराष्ट्रीय वाल सप्ताह के नारे याद रहे, लेकिन उसे यह कभी ध्यान नही आता कि कोई छोटी सी वालिका उन्हे अपने ही ढग से कह-सुन सकती है क्योंकि वह उनके नार को नही समझती। और फिर भी अगर 'अन्ताराष्ट्रीय सप्ताह' को महज दान-खाते नही जाना है तो इसे समझाने के लिए वहुत वडे कौशल की जरूरत होगी। वच्चे 'अन्ताराष्ट्रीय वाल सम्मेलनो' में क्या कहे उन्हे यह समझाने के लिए वहुत कुछ करना होगा। इन सम्मेलनो में वडी धूमधाम रहती है परन्तु वहा भाषणकर्ता यह कहना सुनना भूल जाते है कि अन्ताराष्ट्रीय सर्वहारा वर्ग ने कौन कौन से सघर्ष छेडे है।

हमें ऐसी पुस्तके चाहिए जो वच्चो में अपेक्षित अन्ताराष्ट्रीय विचारो को जन्म दे सके। ये किन रूपो में हो इसकी कोई चिन्ता नही। भले ही वे परी-कथाओ के रूप में क्यो न हो। वस कथा में सच्चाई हो और त्यागरत वच्चो के लिए केवल सवेदनात्मक आसू ही न वहाये गये हो, और वह वच्चो को यह सिखाती हो कि वे फासिस्टवाद की काली शक्तियो के विरुद्ध लडने वाले वालवच्चो की इज्ज़त करे, उन माता-पिताओ की इज्ज़त करे जो, वच्चो के प्रति आशकित रहते हुए भी, उनसे आगे वढने और मोर्चा लेने के लिए कहते हो। कथा का एक उद्देश्य यह भी हो कि वह हमारे वच्चो को स्वतन्त्रता के साहसी सेनानी वनने की शिक्षा देती हो। यही मुख्य चीज है। हमें ऐसी पुस्तकें चाहिए जो वच्चो से गम्भीरतापूर्वक वाते करती हो न कि केवल वाल सुलभ ढंग से। परी-कथाए, 'वच्चो की' छोटी छोटी कहानियो से उनका मनोरजन करने के साथ साथ प्राय· उन्हे अधिक गम्भीर वाते सिखाती है। प्रश्न यह नही है कि जो कुछ उन्हे सिखाया जाय उसका स्वरूप क्या हो अपितु यह है कि उसका विपय क्या हो।

वच्चों का चतुर्दिक विकास

('वोजाती' पत्रिका, अंक ६, १९३७)

... हम प्राय. ओर से छोर तक पहुंच जाते है। पहले लोगो का कहना था कि वच्चो में राजनीतिक चेतना का विकास उनकी शैशवावस्था से ही होना चाहिए। ये लोग वच्चो से ऐसे ऐसे गम्भीर विपयो पर वातचीत करते थे, जिन्हे वच्चे कुछ भी नही समझ पाते थे। ये लोग वच्चो को स्कूल जाने से पहले ही कम्यूनिस्ट वना डालना चाहते थे। यह वात गलत थी। वस्तुत. हमें न तो उनके साथ वहुत अधिक 'वच्चो' जैसा व्यवहार करना चाहिए और न उन्हे मन्द-वुद्धि ही समझना चाहिए। हमें उन्हें

बहुतेरी बातें बतानी चाहिए, उनके ज्ञान-क्षेत्र का प्रसार करना चाहिए और सामाजिक कार्यकर्ता बनने में उनकी मदद करनी चाहिए। हम उन्हें अधिकतर अप्सरा-कथाए सुनाते है, और आजकल, जब जीवन खुद ही प्राय कहीं अधिक दिलचस्प है। और हमें यह न भूलना चाहिए कि हमारे यहा अप्सरा-कथाए कई प्रकार की है।

ऐसी आकर्षक अप्सरा-कथाए है जो लोगो के आचरणो और मानव-संबधो का स्पष्ट चित्रण करती है और ऐसी भी, जो बच्चो के दिमागो को आक्रान्त करती है और वातावरण के सबध में उनकी जानकारी बढाने में बाधक सिद्ध होती है। जीवन बच्चो को मजबूर करता है कि वे बहुत सी चीजो पर ध्यान दें और यहा हम हथियार नही डाल सकते। बूर्जवा सरकारें बच्चो में बूर्जवा राजनीति और धर्म की आदत डालती है और दूसरे राष्ट्रो के प्रति उनमें घृणा पैदा करती है। ये सरकारे बच्चो को धोखा देने में बडी सिद्धहस्त है और इसी लिए वे सारे कार्य बडे कौशल के साथ सम्पन्न करती है। इस क्षेत्र में न सिर्फ बूर्जवाओ को ही अपितु कैथालिक चर्च को भी काफी अनुभव है।

हमें बच्चो की जागरुकता में वृद्धि करनी है और इस विषय में पुस्तक को हमारी सहायता करनी है। हमारे यहा बच्चो के अच्छे और अधिक पुस्तकालय होना बहुत जरुरी है। लेकिन यही तो काफी नही है। बच्चे क्या पढें यह देखना भी जरुरी है। इस दृष्टि से अच्छी पुस्तको का चुनाव करना आवश्यक है। अब जब हमारे सामने देहातो के सास्कृतिक स्तर को नगरो के सास्कृतिक स्तर तक लाने का सवाल आता है तो यह जरुरी हो जाता है कि गावो के बच्चो के पास आवश्यक पुस्तके हो, और देहाती स्कूलो में भी सचमुच श्रेष्ठ साहित्य हो, ऐसा साहित्य जिसे बच्चे समझ सकें, जो उन्हे अच्छा लगे, उनके दृष्टिकोण को व्यापक बनाये।

बच्चो को तरुण पायोनियरो के क्रिया-कलाप पसन्द है। वे उनमें भाग लेते है। एक दिन जब हम गावो के पुस्तकालयो की एक प्रतियोगिता

आयोजित कर रहे थे तो मैंने पुस्तकालयो के वारे में वच्चो को एक पत्र लिखा था और उस समय मुझे वड़ा आश्चर्य हुआ जव सामूहिक और राजकीय फार्मों पर काम करने वाले लोगो ने मुझे वताया कि वच्चे ही पुस्तकालयो का सव से अधिक प्रचार करते है। परन्तु ऐसे भी मौके आते हैं जव वच्चे ये चीजें जरूरत से ज्यादा कर डालते है। एक वार एक वालक ने मुझे पत्र लिख कर वताया कि उसने अपना हर खाली क्षण सामूहिक किसानों के समक्ष पढ़ने में विताया था और वे कहते थे "ओह, हमें कुछ विश्राम भी करने दोगे कि नही?"

स्कूल के पुस्तकालयों के निमित्त पुस्तकें चुनने के लिए यह आवश्यक है कि वच्चो की दिलचस्पियो और उनके विकास-स्तर पर भी विचार कर लिया जाय। पुस्तकालय की स्थापना हो जाने के वाद वच्चों को चुनाव की स्वतंत्रता भी देनी चाहिए। जव मैं लोगो को यह कहते सुनती हूं कि अमुक अमुक अवस्था के लोगो को अमुक अमुक पुस्तके पढ़नी चाहिए तो निश्चय ही मुझे क्रोध आ जाता है। वच्चों को इतना वच्चा भी समझना क्या! उन्हे चुनाव की कुछ न कुछ स्वतंत्रता अवश्य होनी चाहिए और अपनी योग्यता का परिचय देने का अवसर अवश्य मिलना चाहिए। जव वच्चे किसी चीज की योजना वनाते हैं उस समय वे अपनी अंत प्रेरणा का परिचय देते है, अपने को संघटित करना सीखते हैं। इस प्रकार उनकी अनुशासन भावना में वृद्धि होती है। उन्हें उस प्रकार का काम दिया जाना चाहिए जिसमें उनकी दिलचस्पी हो, जो उन्हे अच्छा लगे।

वच्चो का विकास किस स्तर तक हो चुका है इसपर भी विचार कर लेना जरूरी है। मैंने अभी हाल ही में एक अप्सरा-कथा का नाट्य रूपान्तर देखा था। इसमें वहुत सी दिलचस्प वाते थीं, गुलाव की झाडी का खिलना आदि। लेकिन मै समझती हूं कि उन वच्चो के लिए यह कथा वडी जटिल है जो रूसी सामन्तो, जारशाही दूतो अथवा पुराने जमाने

के जारो के वारे में कुछ नही जानते। और इसी लिए वच्चो की समझ में यह कथा नही आई। जहा तक ११, १२ साल के वच्चो का संवंध है उन्हे यह अप्सरा-कथा विल्कुल पसन्द नही आई।

पता नही क्यो हम यह सोचने लगे है कि ज्ञान सिर्फ पुस्तको से ही प्राप्त किया जा सकता है। लेकिन हम जीवन का अनुकरण करना नही जानते, यह नही जानते कि इसका निरीक्षण एव अध्ययन कैसे किया जाय, नये ढग से जीवनयापन कैसे किया जाय। यह वात न हमी जानते है, न तरुण पायोनियरो के नेता ही और न शिक्षक ही। फिर भी खेल-कूद और सैर-सपाटो से हमें यह पता चल सकता है कि जीवन क्या है। अपने पाठशाला-इतर कार्यो के दौरान में हमें सैर-सपाटो आदि का काम उठाना चाहिए और प्रकृति, प्राणियो और जीवन का अध्ययन करना चाहिए। हम यह वात नही सिखाते। हमारे मडल प्राय या तो खेल-कूद के लिए होते हैं या फिर नाटक-तमाशे के लिए।

फिर हम यह सोचते है कि साहित्यिक, प्राकृतिक विज्ञान अथवा इतिहास मडल का काम है शिक्षा में विकास करना। हम यह सोचने के आदी हो गये है कि ऐसे मडल में कोई ऐसा शिक्षक अवश्य होना चाहिए जो वच्चो को वे सारी वाते वताये जो उन्हे जाननी चाहिए। हम समझते है कि उन्हे चिडियो की तरह अपने मुह खोल देना चाहिए और जो कुछ भी उन्हे चुगाया जाय उसे निगल लेना चाहिए। हम विना शिक्षक के मडल की कल्पना तक नही कर सकते—उस समय जव कि हमें ज्यादा जरूरत इस वात की है कि वच्चे खुद ही अपनी अन्त प्रेरणा से काम ले।

दुर्भाग्यवश हम वच्चो की रुचियो और उनकी मागो की ओर काफी ध्यान नही देते। और यह एक ऐसी चीज है जो तरुण पायोनियरो के नेताओ और अध्यापको को जाननी चाहिए। जव पेदोलोजिस्टो की इसलिए आलोचना की जाती है कि वे वच्चो के प्रति उदासीन और औपचारिक

रूप से व्यवहार करते है, उन्हे योग्य और अयोग्य इन दो श्रेणियो में रखते है और उनके पालन-पोषण तथा विकास में कोई सहायता नही देते तो फिर आलोचना ठीक ही होती है। अगर हम यह नही जानते कि बच्चो की जरूरते क्या है, अमुक अमुक उम्र का बच्चा किस किस चीज में दिलचस्पी लेता है, वह अपने चारो ओर की चीजो को देख कर क्या समझता है तो हमें अपने कामो में कभी सफलता नही मिल सकती।

हम संस्कृति-प्रासादो के बारे में बहुत कुछ कहते सुनते है। जिस समय मैंने यह सुना था कि पुराने बोल्शेवीको के संघ के भवन को केवल अत्यधिक प्रतिभाशाली बालक-बालिकाओ के प्रासाद का रूप दिया गया है तो मुझे बड़ा क्रोध आया। हमारे देश में ऐसे बच्चे लाड़-दुलार से बिगड़ जाते है। एक दिन इस प्रासाद में मेरी मुलाकात एक बालिका तथा उसकी अध्यापिका से हो गई। मै उसकी ओर मुडी और अध्यापिका ने मुझसे कहा : "यह एक बडी होनहार लड़की है।"

अगर हम अपने बच्चो से कहे कि वे होनहार है तो हम उन्हे बिगाड़ देंगे। मुझे इस संबंध में व्लादीमिर इल्यीच से हुई एक बातचीत की याद आ रही है। मैंने उन्हे एक अच्छे योग्य बच्चे के बारे में बताया था जिसके माता-पिता उसे कन्सर्ट ले जाया करते थे। उन्होने मुझसे कहा था कि इस बच्चे को उसके मां-बाप से ले लेना चाहिए नही तो वे ही उसकी मौत का कारण बनेगे। इल्यीच की भविष्यवाणी ठीक निकली। मां उस बच्चे को विदेशो में ले गई, उसने लोगो को दिखाया कि उसका बच्चा कितना होनहार है और आखिर में बच्चा मस्तिष्क ज्वर के कारण मर गया। बेशक, हमेशा ऐसी दुर्घटनाएं नही होती परन्तु यह उदाहरण तो शिक्षात्मक है ही।

हमें होनहार बच्चो के दिमाग में यह बात नही बिठलानी चाहिए कि वे असाधारण है, और न ही उन्हे कोई विशेषाधिकार देने चाहिए।

हमें सिर्फ यही देखना है कि उन्हे हर तरह की शिक्षा मिलती रहे। इससे उन्हे नुकसान नहीं होगा। इसके विपरीत, जब वे बड़े होंगे तो वे कोई ऐसा पेशा चुन सकेंगे जो हर तरह से उनके उपयुक्त सिद्ध होगा। किसी लडकी के लिए पहले ही से यह निश्चित कर लेना कि वह नर्तकी बनेगी, या लडके के लिए यह तय कर लेना कि वह इजीनियर बनेगा, एक अनुचित बात है।

हमें सभी बच्चो की चिन्ता और उनकी यथासम्भव अधिक से अधिक सहायता करनी चाहिए।

पाठशाला-इतर कार्य बहुत महत्वपूर्ण है। इससे बच्चो के समुचित पालन-पोषण में मदद मिलती है और उनके चतुर्दिक विकास के लिए अपेक्षित दशाओ का सृजन होता है। हमें चाहिए कि हम उनकी प्रेरणाशक्ति को प्रखर बनायें, रचनात्मक कार्यों में उनकी मदद करे, उनका पथप्रदर्शन करे और उनके हितो को ठीक दिशा में अग्रसर करे। माता-पिता प्राय लाड-दुलार में अपने बच्चो को बहुत अधिक सिनेमा देखने की या थियेटर जाने की अनुमति दे देते है। सिनेमा बच्चो में उत्तेजना पैदा करता है। आप उन्हे ध्यान से देखें तो आपको लगेगा कि चित्र देखने के पश्चात् बच्चे प्राय अपनी मा से रुक्षता का व्यवहार करने लगते है या फिर अपने सहपाठियो से झगड़ा मोल ले लेते है। बेशक, बच्चो को आप फिल्में दिखाइये मगर वे फिल्में जिन्हे वे समझ सकते हो, जिनमें उन्हे मज़ा आये, जो उनके सामान्य ज्ञान को व्यापक बनायें। प्रौढ़ो के देखने के लिए बनाये गये फिल्मो को देख कर बच्चे प्राय मतलब नही समझते लेकिन अभिनेताओ की नकल करते है। मुझे बताया गया कि बच्चो ने चैंपलिन की किसी फिल्म में पेंचकश द्वारा नाक खोली जाती हुई देख कर खुद भी पेंचकश लेकर वैसा ही करने का प्रयत्न किया था। आवश्यकता इस बात की है कि उन्हे सार समझना और ठीक दिशा में सोचना-विचारना चाहिए।

हमें वच्चो के टेक्निकल मंडलो की सख्या में वृद्धि और फैक्ट्रियो तथा विजलीघरो में सैर-सपाटे की व्यवस्था करनी चाहिए, आदि। हर संस्कृति-प्रासाद में ऐसे ऐसे कमरो की व्यवस्था होनी चाहिए जहा वच्चे अपनी इच्छानुसार जो चाहे कर सके।

वच्चो का पालन-पोषण इस ढंग से होना चाहिए कि वे उस काम को चालू रख सके जो उनके वाप-दादाओ ने आरम्भ किया था। व्लादीमिर इल्यीच चाहते थे कि वच्चे अपने पिताओ द्वारा शुरू किये गये कामो में सफलता प्राप्त करे। वे कहा करते थे कि हमारे वच्चे और भी अच्छी तरह लड़ना सीखेंगे और उन्हे विजय मिलेगी।

वच्चो को आवश्यक ट्रेनिंग देने, उनके चरित्र का विकास करने, उपयोगी वनने की उनकी इच्छा को प्रोत्साहित करने और सामाजिक कार्यकर्ताओ और समुदायवादियो के रूप में उनका पालन-पोपण करने की दिशा में अधिकाधिक ध्यान दिया जाना चाहिए। उनके चतुर्दिक विकास की अच्छी देखरेख की जाय .

युवक संघटन

युवक लीग

('प्राव्दा', २७ मई, १९१७)

बूर्जवा शिक्षाशास्त्री युवकों की 'नागरिक शिक्षा' की आवश्यकताओं पर बहुत कुछ कहते हैं, बहुत कुछ लिखते हैं। उनके लिए नागरिक शिक्षा के माने हैं निजी संपत्ति और वर्तमान शासनतंत्र की इज्ज़त, अन्धराष्ट्रवाद (या, जैसा वे स्वयं कहते हैं देशभक्ति), दूसरे राष्ट्रों से घृणा करना इत्यादि। बच्चों में ये भावनाएं भरने के लिए वे ऐसे सभी तरह के संघों का संघटन करते हैं, जिनमें ये अनुभूतियां पनप सकती हैं। उदाहरणार्थ, बाल-स्काउटों को ले लीजिये। जहां तक बच्चों का सवाल है वे खुश हैं कि उन्हें अपनी शक्ति और अपनी प्रतिभा के प्रदर्शन का अवसर मिलता है। ये बेचारे नहीं समझते और न देखते ही हैं कि यह संघटन उनकी आत्मा को विषाक्त कर रहे हैं। उनकी आत्मा में जो विष प्रवेश कर रहा है वह बूर्जवाई दृष्टिकोण और नैतिकताओं का विष है। इसी विष के कारण युवक वर्ग मुक्ति के उस महान आन्दोलन में भाग लेने में असमर्थ है जो दुनिया में दमन और शोषण को नष्ट करने के लिए, समाज का वर्गों में विभाजन करने के लिए, और मानव जीवन को सुखद बनाने के लिए आरम्भ किया गया है। हमने इस नागरिक शिक्षा के परिणामों को रूस में, पेत्रोग्राद में उस समय देखा था जबकि अन्यायी सरकार के पक्ष में प्रदर्शन करने के लिए माध्यमिक स्कूल के विद्यार्थियों को भड़काया गया था। ये लोग श्रमिक वर्ग के शत्रुओं से घिरे हुए,

वढिया वढिया हैट पहने हुए पुरुषो, सुन्दर पोशाको वाली स्त्रियो और ऐसे व्यक्तियो के साथ चल रहे थे जो कहते थे कि लेनिन ने जर्मनी के रुपये से श्रमिको को घूस दी है, जो समाजवादियो को गालिया देते थे और उन भाषणकर्ताओ को मारते मारते वेदम कर देते थे जो ईमानदारी के साथ इस भीड के सामने कोई सच्ची वात कहना चाहते थे। युवको को समझाया जाता था कि इस भीड के साथ प्रदर्शन में भाग लेने मे वे अपने नागरिक कर्त्तव्यो का ही पालन कर रहे है।

हर युवक सघटन अच्छा नही होता। कुछ ऐसे सघटन भी है जो वाह्यत वच्चो का मनोरजन करते है किन्तु यथार्थत उन्हे गुमराह करते है।

'नागरिक शिक्षा' की एक किस्म और है, यानी वह नागरिक शिक्षा जो युवक श्रमिको में जान डालती है। यह उनमें सर्वहारा वर्ग की एकता की महान अनुभूति जाग्रत करती है, "दुनिया के मज़दूरो, एक हो!" इस नारे को उनतक पहुचाती है, इसके प्रति उनमें आस्था उत्पन्न करती है और उन्हे "भ्रातृ शान्ति के लिए, पावन स्वतत्रता के लिए" लडने वालो की कोटि में रखती है। दुनिया के तरुण श्रमिक सर्वहारा वर्ग की अपनी अपनी युवक लीगो की स्थापना करते है। ये लीगें युवक अताराष्ट्रीय सघ में मिल कर एक समान लक्ष्य की प्राप्ति के लिए श्रमिक वर्ग के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर वढ़ती है। युवक अतारराष्ट्रीय सघ का विघटन युद्ध में भी नही हुआ था। उस खूखार युद्ध में भी इस सघटन ने समस्त देशो के समस्त तरुण श्रमिको का आह्वान किया और उन्हे आदेश दिये कि वे उसे मजवूत वनाये, और अपने आन्दोलन को आगे वढायें। वहुत समय तक इस युवक अन्ताराष्ट्रीय सघ की जर्मन शाखा की अध्यक्षता कार्ल लीव्क्नेख्त करता रहा। इस व्यक्ति ने, स्वार्थपूर्ण उद्देशो को लेकर लड़े जाने वाले सर्वभक्षी युद्ध के खिलाफ वडे साहस के साथ अपनी आवाज़ वुलन्द की, अपने देश की सरकार की खुल

कर भर्त्सना की और इन सब के परिणामस्वरूप उसे कठोर श्रम कारावास का दंड मिला। युवक अन्तारराष्ट्रीय संघ की रूसी शाखा का प्रतिनिधित्व श्रमिक युवकों के उस अन्तारराष्ट्रीय सम्मेलन में ठीक ठीक नहीं किया जा सका था जो अन्तारराष्ट्रीय महिला सम्मेलन के बाद १९१५ में आयोजित किया गया था। इसका कारण यह था कि रूसी निरंकुशता के अधीन रहते हुए काम करनेवाले युवक नर-नारी किसी अच्छे संघटन का निर्माण नहीं कर सकते थे। इसका एक कारण यह भी था कि युद्ध ने अंतारराष्ट्रीय सम्पर्कों को कठिन बना दिया था और रूस के साथ संचार के साधनों की कोई संभावना न रह गई थी। लेकिन रूसी सामाजिक-जनवादी मजदूर पार्टी की केन्द्रीय समिति ने इस सम्मेलन में अपना एक सदस्य भेजा था जिसने रूसी श्रमिक युवकों के नाम से यह घोषणा की थी कि वे तन-मन-धन से दुनिया के तरुण श्रमिकों के साथ हैं और अन्तारराष्ट्रीय झंडे के नीचे उनके साथ साथ आगे बढ रहे हैं। और केन्द्रीय समिति का कहना सच था। यह बात पेत्रोग्राद की फैक्ट्रियों और प्लान्टों के शिशिक्षुओं ने सिद्ध कर दी थी—इनके संघटन में अब ५०,००० सदस्य हो चुके थे। उन्होंने युवक अन्तारराष्ट्रीय संघ की रूसी शाखा का शिलान्यास किया है और वे समस्त युवक श्रमिकों से एक होने का अनुरोध कर रहे हैं—सिर्फ उन्हीं श्रमिकों से नहीं जो फैक्ट्रियों और प्लान्टों में काम करते हैं लेकिन दस्तकारी उद्यमों के शिशिक्षुओं से भी, व्यापारिक संस्थापनों के तरुण कर्मचारियों और अखबार बेचने वाले तरुणों से भी। संक्षेप में वे इस प्रकार का अनुरोध उन समस्त किशोरों और नौजवानों से कर रहे हैं जिन्हें अपना श्रम बेचना पडता है। वे मास्को, मास्को क्षेत्र, येकातेरिनोस्लाव, खारकोव—नाराज यह कि रूस के समस्त भागों के तरुणों से अनुरोध कर रहे हैं कि वे उनके साथ मिल कर चलें और सुंदर भविष्य के लिए, समाजवाद के लिए, अपनी लडाई जारी रखें। युवक अंतारराष्ट्रीय संघ की रूसी शाखा अमर हो!

11*

तरुण श्रमिकों के लिए संघर्ष

('प्राव्दा', ३० मई, १९१७)

भविष्य उनका है जिनके पीछे श्रमिक-युवको की शक्ति है। सारे संसार के समाजवादी इस बात को समझते है और इसी लिए युवको में अपना प्रचार करते हैं। वे निष्कपट भाव से अथवा अपने विचारो या अपने आप को छिपाये विना युवको के पास जाते है, उन्हे साफ साफ और निश्चित रूप से समझाते है कि उनके लक्ष्य क्या है और वे किस लिए लड रहे है। वे इन युवक श्रमिको से कहते है, "तुम सर्वहारा वर्ग की संतान हो, तुम्हें जम कर मोर्चा लेना होगा। विजय पाने के लिए तुम्हे अपने में वर्ग-चेतना पैदा करनी होगी, अपना सघटन करना होगा और साफ साफ समझना होगा कि तुम जा कहा रहे हो। और जितनी ही जल्दी तुम सर्वहारा की समस्याए समझ लो उतना ही अच्छा। तुम फैक्ट्रियो और प्लान्टो में काम करते हो, तुम चाहो या न चाहो जीवन ने तुम्हे सर्वहारा के वर्ग सघर्ष में घसीट लिया है। तुम तव तक इसके वाहर नही रह सकते जव तक वर्ग संघटन के साथ गद्दारी न करो। पश्चिमी यूरोप के समाजवादी युवक संघटन सर्वहारा के संघटन है। उनके अखवारो और उनकी पत्रिकाओ में एक निश्चित राजनैतिक विचारधारा होती है।

बूर्जवा पार्टिया श्रमिक युवको को सर्वहारा दल से अलग करना और उनके संघटन की वर्ग-चेतना को कमज़ोर वनाना चाहती है।

लेकिन उन्हे खुल्लमखुल्ला ऐसा कहने की हिम्मत नही होती, क्योकि वे जानते है कि अगर उन्होने ऐसा किया तो युवक श्रमिक उनकी एक न सुनेंगे, उनसे अपना सवंध-विच्छेद कर लेगे। यही कारण है कि जव वे युवको से मिलते हैं तो किसी पार्टी के सदस्यो के रूप में नही अपितु हमेशा सदय, सवेदनाशील लोगो के छद्म-वेश में ही। वे युवको की उदारता का लाभ

उठा कर पहले-पहल उनके मनोनुकूल बाते करते है और यह दिखाने का प्रयत्न करते है कि जो कुछ वे कह रहे है वह उन्ही के हित में है। सीधे सीधे यह कहने के बजाय कि श्रमिक पार्टी खराब है वे कहते है "साथियो, तुम्हारी वुद्धि अभी परिपक्व नही है। अभी तुम्हे राजनीति में नही पडना चाहिए और निश्चित रूप से कोई एक मत नही अपनाना चाहिए। पहले अच्छी तरह अध्ययन करो, ज्ञानार्जन करो और उसके बाद ही कही तुम सम्यक् रूप से निश्चय कर सकोगे कि तुम्हारे लिए कौनसी पार्टी उचित है। किसी को ऐसा मौका मत दो कि वह तुमपर अपना प्रभाव डाले। अपने व्यक्तित्व और अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा करो।" और प्राय युवक साथी इन अपीलो के अनुसार आचरण करते है। और यह देख कर, कि उनका ज्ञान सीमित है उन्हे अभी बहुत कुछ अध्ययन करना है, वे इन लोगो की बातो का विश्वास कर लेते है। वे "अपनी आध्यात्मिक स्वतंत्रता की रक्षा करो" जैसे शब्दो में व्यक्त रुक्ष चाटुकारिता पर ध्यान नही देते। क्या एक अनुभवहीन व्यक्ति अपनी आध्यात्मिक स्वतन्त्रता की रक्षा कर सकता है? उससे कहा जाता है कि वह राजनीति से नाता तोड ले और इतिहास, साहित्य आदि का अध्ययन करे। किन्तु आखिर इतिहास की, साहित्य के इतिहास आदि की किताबो में रहता क्या है—उसके लेखक का सासारिक दृष्टिकोण ही तो। बूर्जवा लेखक द्वारा लिखी गई पुस्तक में उसके विचारो का सग्रह मिलता है और ये विचार पाठक पर अपनी छाप छोडते है। अतएव ऐतिहासिक और साहित्यिक पुस्तको की सहायता से अनुभवहीन व्यक्ति को प्रभावित करना पूर्णत सम्भव है।

पाठक अगर जीवन से अनभिज्ञ है तो वह इस प्रभाव से भी अनभिज्ञ रहेगा। और इस प्रकार बूर्जवा हमेशा युवको पर अपना प्रभाव डालता है—हा स्पष्ट और प्रत्यक्ष रूप से नही अपितु अप्रत्यक्ष रूप से।

यह प्रभाव सब से खराब किस्म का होता है। लोग कहते है "अभी तुम्हे राजनीति में नही पडना चाहिए, किसी को ऐसा मौका न दो कि

वह तुमपर प्रभाव डाले," लेकिन उनका मतलव होता है "सिवा मेरे और मेरी पार्टी के और दूसरे को कोई ऐसा मौका न दो कि वह तुमपर प्रभाव डाले।"

रूसी युवक अब सघटित होने लगे है। पहले कदम सब से अधिक महत्वपूर्ण है, सब से अधिक उत्तरदायित्वपूर्ण, क्योकि बहुत हद तक वे युवक का मार्ग निश्चित करते है—क्या रूसी युवक सघटन सर्वहारावादी होगा, क्या वह अपने देश के श्रमिक सघटनो और युवक अन्ताराष्ट्रीय सघ में काम करेगा और क्या वह स्वय अपना सर्वहारा पत्र प्रकाशित करेगा जिसमें सीधी-सादी और जनता की भाषा में आर्थिक और राजनीतिक सवालो की चर्चा होगी या वह श्रमिको के आन्दोलन से, अस्थायी रूप से, अपना नाता तोड लेगा और सास्कृतिक एवं शिक्षात्मक ढग का कोई ऐसा पत्र प्रकाशित करेगा जिसपर बूर्जवा वर्ग का प्रभाव होगा और जिसमें स्थूल विषयो की चर्चा होगी। पहली स्थिति में, पेत्रोग्राद के कार्यकारी युवक सघटन रूस के समस्त श्रमिक युवको को संघटित करने की दिशा में शायद वडा सम्मानित काम करेगे। दूसरी में, वे गल्तिया करेगे जिसके परिणामस्वरूप इस संघटन के विकास में विलम्ब होगा। हमें इसमें कोई सन्देह नही कि पेत्रोग्राद का क्रान्तिकारी युवक सघटन पहला रास्ता चुनेगा।

श्रमिक युवक कैसे संघटित हों?

('प्राव्दा', २० जून, १९१७)

रूस भर से 'प्राव्दा' के पास जो पत्र आया करते है उनमें प्राय यही प्रश्न पूछा जाता है। युवको की यह प्रवल इच्छा होती है कि वे संघटित हो, लेकिन सघटन कैसे किया जाय इस सवध में वे कुछ भी नही जानते। प्राय. वे नही जानते कि वे यह काम कैसे उठायें और अपने कदो

पर ऐसे ऐसे काम ले लेते है जो या तो बहुत बडे होते है—जैसे "स्वतन्त्र रूप मे पार्टी का कोई कार्यक्रम निश्चित करना"—या बहुत छोटे—जैसे "पूर्णत सास्कृतिक एव शिक्षात्मक उद्देश्य"। सघटन को ठीक मार्ग पर चलाने के लिए उन्हे चाहिए कि वे सामान्य नियम निश्चित करे, प्रतिनिधियो की तथा युवको की अन्य बैठको में उनपर विचार-विनिमय करे और फिर पूरे उत्साह के साथ उनके अनुसार काम करे। ये नियम जल्दबाजी में स्वीकार नही किये जाने चाहिए। उनपर भली भाति विचार-विनिमय होना चाहिए क्योंकि अगर ऐसा नही किया जाता और कोई सघटन उन्हे अगीकार करने मे जल्दबाजी से काम लेता है तो रूसी श्रमिक युवक को एकता के सूत्र में बाधना बडा कठिन होगा। पार्टिया बडे गम्भीर वाद-विवाद के बाद ही कोई नियम अगीकार करती है। सामान्य बैठको मे इन नियमो के कई कई मसौदो पर विचार-विनिमय होता है, हर पैराग्राफ और हर शब्द तौला जाता है और तब कही कोई निश्चय होता है। युवको के लिए यह कार्य बडा कठिन है क्योंकि एक तो उनमें ज्ञान की कमी रहती है और दूसरे वे भिन्न भिन्न पार्टियो के नियमो से परिचित नही होते और इसी लिए अपनी बात साफ साफ कहने के आदी नही होते। सामान्य नियम बनाने की दिशा में नवयुवको की सहायता करने के लिए मै सुझाव देती हू कि वे निम्नलिखित मसौदे पर विचार-विनिमय करे।

रूसी तरुण श्रमिक लीग के नियम

पैरा १ रूस में काम करने वाले सभी तरुण जन—लड़के, लड़किया, युवक नर-नारी, जो अपनी श्रम शक्ति के विक्रय पर जीवित रहते है—बिना उनके धर्म या उनकी मातृभाषा का विचार किये हुए, 'रूसी तरुण श्रमिक लीग' के रूप में सघटित किये जाते है।

इस बात पर जोर देना बहुत आवश्यक है कि लीग में, बिना लिंग-भेद, धर्म और राष्ट्रीयता का विचार किये हुए, तरुण जन ही लिये जायेंगे।

यदि इस वात पर घ्यान न रखा गया तो कुछ युवक लीगें लडकियो अथवा लाटवी, पोलिश, यहूदी, तातार आदि को न लेने का निश्चय कर सकती है। इससे मुख्य उद्देश्य को क्षति पहुचेगी और श्रमिक वर्ग की भ्रातृत्व भावना के सिद्धान्त को ठेस लगेगी।

पैरा २· 'रूसी तरुण श्रमिक लीग' का उद्देश्य स्वतत्र एव वर्ग-चेतना वाले नागरिको और उस लड़ाई में भाग लेने वाले योग्य व्यक्तियो को प्रशिक्षित करना है जो समस्त दलित और शोषित व्यक्तियो को पूजीवादी जुए से मुक्त करने के लिए, सर्वहारा होने के नाते, उन्हे आगे वढानी होगी।

इस उद्देश्य पर जोर देना जरूरी है। यही वह महान उद्देश्य है जो दुनिया भर के श्रमिको को प्रोत्साहित करता है, उनमें जान डालता है। यह उद्देग्य निश्चय ही युवको में भी जीवन फूकेगा क्योकि वे उन समस्त वातो के प्रति जागरूक होते है जो महान होती है, अच्छी होती है और ईमानदारी पर आधृत होती है। और विशेष रूप से यह उद्देश्य रूसी युवक को इसलिए और भी उत्साहित करेगा क्योकि उसने अभी हाल ही में क्रान्ति को न सिर्फ अपनी आखो देखा था बल्कि कुछ हद तक उसमें भाग भी लिया था। जो सघटन अपने सामने यह उद्देश्य नही रखता वह सर्वहारा-वादी कहलाने का दावा नही कर सकता।

पैरा ३ चूकि युवक अन्ताराष्ट्रीय सघ, जिसके सदस्यो में सभी देशो के तरुण श्रमिक है उसी उद्देश्य को मानता है और चूकि 'रूसी तरुण श्रमिक लीग' "दुनिया के मजदूरो, एक हो!" इस नारे में आस्था रखती है, अतएव वह युवक अन्ताराष्ट्रीय सघ से सहमत है और अपने को इस सघटन का एक अंग घोषित करती है।

वूर्जवा सरकारो ने श्रमिको को सहारकारी, सर्वभक्षी युद्ध में झोंका, एक देश के श्रमिको को दूसरे देश के श्रमिको के विरुद्ध खडा किया, उन्हें एक दूसरे पर गोली चलाने को मजवूर किया, एक दूसरे का गला

काटने को विवश किया। श्रमिक युवक यह सब नहीं सहन कर सकता और न इसके प्रति अपनी सहानुभूति ही प्रकट कर सकता है। उसका नारा है "सारी कौमों का भाईचारा"। अतएव अपनी नियमावली में 'रूसी तरुण श्रमिक लीग' को समस्त देशों के तरुण श्रमिकों के साथ भाईचारे पर आधारित एकता पर जोर देना चाहिए।

पैरा ४: तरुण श्रमिक श्रमिकों की भलाई के लिए लड सके और तदर्थ उपयोगी भी साबित हों इसके लिए यह आवश्यक है कि वे मज़बूत हों और स्वस्थ हों।

एतदर्थ उन्हें चाहिए कि वे (क) बाल श्रम की रक्षार्थ, छ घंटे के कार्य-दिवस की व्यवस्था किये जाने, काम की दशाएं स्वस्थ बनाने और किशोरों को रात की पारियों में काम न करने देने और चिकित्सा-सहायता, आदि के लिए सघर्ष छेडें; (ख) ऊंची मजदूरियों के लिए सघर्ष छेडें, जहा मजदूरी तरुण नर-नारियों के पौष्टिक एव स्वास्थ्यकर भोजन तथा रहने के साफ और गर्म क्वार्टर के लिए अपर्याप्त हो, (ग) कारखाने के विभागों के मानीटरों की परिषद में अपने प्रतिनिधि भेजें, ट्रेड-यूनियनों में भाग ले, रहने-सहने के स्तरों को ऊंचा करने के लिए प्रौढों के साथ साथ सामान्य सघर्ष छेडें क्योंकि इस सघर्ष में उन्हें प्रौढ श्रमिकों की सहायता की वैसी ही जरूरत रहती है जैसी कि प्रौढों को उनकी रहती है।

पैरा ५ उज्जवल भविष्य के लिए कर्मठ होने के निमित्त यह आवश्यक है कि तरुण नर-नारी यथासम्भव अधिक से अधिक ज्ञानार्जन करें। फलत (क) 'रूस की तरुण श्रमिक लीग' १६ वर्ष से कम के सभी बालबच्चों के लिए सार्वभौम, अनिवार्य और नि शुल्क शिक्षा की माग करती है, (ख) 'रूस की तरुण श्रमिक लीग' पुस्तकालयों, वाचनालयों, अध्ययन-कोर्सों, शिक्षा फिल्म प्रदर्शनों आदि की माग करती है, (ग) श्रमिक युवक तत्काल ही स्वाध्याय मडलों, गश्ती पुस्तकालयों, क्लबों और सैर-सपाटों आदि के सघटन का कार्य हाथ में लेंगे।

इन सब का उद्देश्य प्रधान लक्ष्य की पूर्ति होना चाहिए, अर्थात् युवकों में वर्ग-चेतना और इतनी योग्यता पैदा की जाय कि वे विना दूसरो की सहायता के स्वय ही वर्तमान विकास-कार्यो को समझ सके और घटनाओ का विश्लेषण कर सके।

पैरा छ तरुण श्रमिको के लिए अकेले ज्ञान ही की नही अपितु अपने को सघटित करने की योग्यता की भी जरूरत है। यह योग्यता सर्वोत्तम ढंग से स्वतत्र रूप से काम करने वाली तरुण श्रमिक लीगो में ही प्राप्त की जा सकती है। अतएव, स्वय संघटन की तो बात ही क्या, सारे स्वाध्याय मडलो, क्लवो, वाचनालयो आदि का निर्माण आत्मप्रशासन के आधार पर और इस प्रकार होना चाहिए कि युवक अपनी प्रेरणाशक्ति का विकास करने में समर्थ हो सके।

यदि श्रमिक युवक को दुनिया में होने वाली घटनाओ द्वारा इगित महान कार्यो को सम्पन्न करना है तो वर्ग-चेतना और संघटन कौशल की नितान्त आवश्यकता पडेगी।

तरुण कम्यूनिस्ट लीग की आठवीं अखिल संघीय कांग्रेस में दिये गये भाषण से

(८ मई, १९२८)

व्लादीमिर इल्यीच ने सघटन के बारे में वहुत कुछ कहा था। जिस समय सोवियत शासन की स्थापना का समय आया उस समय उन्होंने इस प्रश्न पर विशेष ध्यान दिया था। उन दिनों उन्होने कहा था कि सामाजिक निर्माण का मतलव है सघटन और सघटन—समाजवाद की जड है। उन्होने प्राय इसी विचार की पुनरावृत्ति भी की थी। उनके लिए सोवियत शासन सारी जनता के सघटन का केन्द्र था।

उन्होंने एक नये तरीके से, एक नये आधार पर सघटन करने की आवश्यकता पर प्राय. ज़ोर दिया था। उन्होंने यह बात उस समय कही थी जब हम अपनी पार्टी का निर्माण कर रहे थे। उन्होंने हम लोगो का ध्यान इस बात की ओर आकृष्ट किया था कि पार्टी के हर सदस्य को चाहिए कि वह अपने को सम्पूर्ण का एक आवश्यक अग समझे। सचमुच हमारी पार्टी एक कायदे का सघटन है और तरुण कम्यूनिस्ट लीग उसी के चरण चिह्नो पर चल रही है। लेकिन अगर हम ध्यानपूर्वक अपनी पार्टी की ओर देखें तो हम अच्छी तरह समझ सकेंगे कि बहुत कुछ इसकी व्यवस्था का (और तरुण कम्यूनिस्ट लीग की व्यवस्था का भी) उद्देश्य है बाहर से दुश्मन को रोकना।

हमारी पार्टी का प्रादुर्भाव हुआ जारशाही, पूजीवाद और श्वेतरक्षको के विरुद्ध होने वाले सघर्ष में। युवको ने भी वही मार्ग अपनाया। पूजीवाद के विरुद्ध जो मोर्चा लिया जा रहा है उसने सम्प्रति एक दूसरा ही रूप ले लिया है। यह मोर्चा भी अब बहुत कुछ ठढा पडता जा रहा है।

इस समय सब से जरूरी चीज़ है निर्माण। फिर भी, हमारा सघटन हमेशा अपने मध्य पाये जाने वाले शत्रुओ के दुष्कृत्यो को रोकने में समर्थ नही रहता और न वह हमेशा ऐसा सघटन ही सिद्ध होता है जो समाजवाद का निर्माण करने में समर्थ हो। उदाहरणार्थ शाख्ति केस* ही ले लीजिए। इससे क्या पता चलता है? यही कि यद्यपि काफी समय बीत चुका है फिर भी हमारी पार्टी, ट्रेड-यूनियनें और तरुण कम्यूनिस्ट लीग अभी तक इतनी

---

*इस केस की सुनवाई मास्को में (१८ मई से ५ जुलाई, १९२८ तक) हुई थी। अभियोग इस प्रकार था बूर्जुआ विशेषज्ञों के एक बड़े सघटन ने शाख्ति तथा दोनबास की खानों के कुछ जिलों में तोड़-फोड़ के काम किये थे। इस संगठन की स्थापना १९२२-२३ में हुई थी। सघटन का उद्देश्य कोयला उद्योग को अव्यवस्थित तथा नष्ट-भ्रष्ट कर डालना था।—सं०

संघटित नही हो सकी है कि वे इंजीनियरो के राजद्रोह का पता चला सकती। प्रतिक्रान्ति का पता तव चला था जव काफी देर हो चुकी थी। यदि हम अपने निर्माण-प्रयासो को निकट से देखें तो हमें पता चलेगा कि हमें अपनी वडी भारी गल्तियो का ज्ञान तव होता है जव वे साफ सामने आ जाती है। उदाहरणार्थ, गवन के मामले प्राय हमें तभी सुनाई पडते हैं जव गवन हो चुकता है। हमें अपराधो का पता उनके किये जा चुकने पर ही चलता है। अभी हमने इस ढंग से काम करना नही सीखा है कि हम अपने कामो के दौरान में ही शाख्ति जैसे छोटे-वड़े केसो का घटना रोक सके। हमारा संघटन ऐसा होना चाहिए कि हम—अपने कार्यो के दौरान में ही—इस वात का पता चला सके कि हम ठीक रास्ते से कहा कहा भटके हैं, अपनी गल्तियो को ठीक कर सके और शाख्ति जैसे केसो, गवन तथा दूसरे अपराधो की घटना वस्तुत असम्भव बना दें। हमने अभी इस ढंग से काम करना नही शुरू किया है और अभी हम उतने सघटित भी नही हैं जितना हमें होना चाहिए। मै समझता हू कि तरुण कम्यूनिस्ट लीग को इसपर विचार करना चाहिए और इस प्रश्न पर अच्छी तरह सोचना चाहिए कि वह ऐसे कौनसे काम करे कि न सिर्फ पूजीवाद अथवा वाहरी दुश्मनो से ही मोर्चा ले सके अपितु एक ऐसे सघटन के रूप में भी रह सके जो ठीक ठीक काम करने में समर्थ हो और अपनी व्यवस्था इस प्रकार कर सके कि, स्वयं व्लादीमिर इल्यीच के शब्दो में, मशीन ठीक दिशा में चलती जाय, सघटन गुमराह न हो।

इसके लिए हमें किस चीज़ की जरूरत है? पहले पहल, **कम्यूनिस्टो की निगाह तेज हो।** साथियो, तरुण कम्यूनिस्ट लीग का प्रत्येक सदस्य राजनीतिक शिक्षा ग्रहण करता है लेकिन प्राय· राजनीतिक शिक्षा एक चीज़ है और ज़िन्दगी दूसरी।

यद्यपि लीग के सदस्य दिल से चाहते हैं कि वे अच्छे कम्यूनिस्ट वनें फिर भी प्राय वे यह नही जानने कि राजनीतिक-शिक्षा को जीवन

पर घटित कैसे किया जाय और उनके आपसी संबंध किस ढंग के हो। राजनीतिक पाठ्यपुस्तको से वे यह तो जान लेते है कि हमारी स्त्रियो को पुरुषो के बराबर अधिकार प्राप्त है, लेकिन फिर भी कुछ सदस्य, उदाहरणार्थ, इस बात की रचमात्र परवाह नही करते कि उनकी नन्ही बहने स्कूल नही जाती। कभी कभी वे कुलको के बारे में बाते करते है और प्राय शोषण होते देखते हुए भी आखे मूद लेते है। बेघर बच्चो के प्रश्न पर शिक्षा सबंधी जन कमिसेरियट के एक अधिवेशन में एक श्रमिक महिला ने इस बात पर प्रकाश डाला था कि बहुत-से श्रमिक नगरो के अपने अपने घरो में नौ-नौ दस-दस साल की छोटी छोटी ग्रामीण लड़कियो को ले आये थे जो या तो अनाथ थी या फिर गरीब घराने की। इन बच्चियो का काम था उन श्रमिको के छोटे छोटे बच्चो की देखरेख करना। जब उनसे पूछा गया कि वे इन लडकियो को स्कूल क्यो नही भेजते तो वे जवाब देते थे कि हम उन्हे इसलिए देहातो से थोडे ही लाये है। "मै उसे काम करने के लिए लाया हू," वे कहते थे। ऐसे परिवार में प्राय लीग का सदस्य भी होता है मगर वह ऐसा बन जाता है मानो उसने कुछ देखा ही न हो। वह यह तो जानता है कि कुलक शोषण करता है लेकिन उसे यह विश्वास नही होता कि श्रमिक भी ऐसा कर सकता है। फिर इसका सबध राजनीतिक शिक्षा से भी तो नही है और वह इसे अनदेखा कर देता है। जीवन में, फैक्ट्रियो में ऐसी अनेक घृणित बाते है जो हमें अतीत की विरासत-स्वरूप प्राप्त हुई है। ये बाते हमारे निर्माण-प्रयासो के मार्ग में बाधक बनती है। लेकिन बात कुछ भी हो हम उसपर गौर नही करते।

व्लादीमिर इल्यीच कहा करते थे "हमे अध्ययन करना चाहिए, अध्ययन करना चाहिए, अध्ययन करना चाहिए"। हमें पूरी निष्ठा के साथ अध्ययन करना चाहिए। आप जानते है कि मुझे तरुण कम्युनिस्ट लीग के सदस्यो, लडको और लडकियो से ढेरो पत्र मिला करते है। वे

लिखते हैं "ब्लादीमिर इल्यीच का कहना है कि हमें अध्ययन करना चाहिए, अध्ययन करना चाहिए, अध्ययन करना चाहिए। क्या आप किसी श्रमिक फैकल्टी या इस्टीट्यूट में मेरा जल्दी से जल्दी दाखिला करवा देने में मेरी मदद नही करेगी?" ब्लादीमिर इल्यीच ने इस अध्ययन की चर्चा करते हुए भिन्न भिन्न स्कूलो में चलने वाले अध्ययन के बारे में नही कहा था। उन्होने ये शब्द पार्टी के सदस्यो को सबोधित करते हुए कहे थे और उनका मतलब जीवन के गम्भीर अध्ययन से था। मनुष्य को चाहिए कि वह आखें खोल कर देखता सीखे, इतना अध्ययन करे कि वह चीजो की गहराई में प्रवेश कर सके। उसे अध्ययन सिर्फ किसी इन्स्टीट्यूट या उच्च शिक्षा की किसी अन्य सस्था की पढाई समाप्त करने के लिए ही नही करना चाहिए। उसके अध्ययन का लाभ यह भी होना चाहिए कि वह गलती समझ ले और गलती कहा हुई है इसका पता चला ले। तरुण कम्यूनिस्ट लीग का यह एक मुख्य काम है। बेशक लीग के सदस्यो को इन्स्टीट्यूटो में अध्ययन करना चाहिए, उन्हे अध्ययन के हर मौके से लाभ उठाना चाहिए, लेकिन उन्हे जीवन से भी सीखना चाहिए, उसका पूरी तरह अध्ययन करना चाहिए, और उन सभी अवसरो पर सजग रहना चाहिए जब उन्हे विषमताओ से मोर्चा लेने की जरूरत महसूस हो।

यही कुछ लोग यह तर्क उपस्थित करते है. तरुण कम्यूनिस्ट लीग एक सघटन है। फिर पार्टी भी है। परन्तु प्रायः लीग इस बात पर गौर नही करती कि सोवियतें और उनकी शाखाएं भी तो है। उदाहरणार्थ, मुझे यह याद नही पड़ता कि लीग के सदस्य नियमित रूप से सार्वजनिक शिक्षा शाखा में जाते रहे हो। मै जानती हू कि प्रतिनिधि और लीग के थोडे-से सदस्य जाते हैं मगर तरुण कम्यूनिस्ट लीग की किसी भी बैठक में किसी को समझ में यह बात न आई कि पूछे आखिर इस शाखा का कार्य क्या है।

साथियो, शायद मै ठीक नही कह रही हू? (आवाज़ें: "आप

ठीक कह रही हैं!") कुछ भी हो शाखाएं एक प्रकार का संघटन ही हैं, एक ऐसा संघटन जिसमें सोवियत के सदस्य ही न हो अपितु दूसरे लोग भी हों जो संबद्ध विषय में दिलचस्पी रखते हो। ऐसे व्यक्ति उस केन्द्र के रूप में काम करे जिनके चारो ओर जनसाधारण अपने अपने कार्य सम्पन्न करता हो। फिर भी जब कोई व्यक्ति नगर सोवियत शाखा में जाता है और इसके बारे में बातचीत करता है तो ट्रेड-यूनियनें कहती है "हमें डर है कि इससे ट्रेड-यूनियनो का महत्व कम हो जायेगा।" बेशक, मैंने तरुण कम्यूनिस्ट लीग के किसी सदस्य को यह कहते कभी नही सुना कि इससे उनके संघटन का महत्व कम हो जायेगा। लेकिन यह बात कि उन सोवियतों की शाखाओं के कार्यो के संबंध में इतना कम ध्यान दिया जाता है, मैं समझती हू, बड़ी महत्वपूर्ण है। आवश्यकता इस बात की है कि हमें जिन्दगी को कैसे देखना चाहिए और उसे बनाना कैसे चाहिए?

दूसरा मसला है उदाहरणार्थ, शाख्ति केस। ऐसा क्यो हुआ? क्योंकि हमारे पास ऐसे लोग न थे जो यह जानते हो कि इंजीनियर क्या करते हैं। बेशक, विशेषज्ञता बहुत जरूरी है और यही कारण है कि हमारे युवक ज्ञान प्राप्त करने के लिए इतनी हाय-तोबा मचा रहे हैं। आपकी कार्यक्रम-सूची में दूसरा विषय है पेशेवर ट्रेनिंग और शिक्षा। बेशक, यह भी एक बडी जरूरी चीज है। और तरुण कम्यूनिस्ट लीग इसके बारे में क्यो इतनी उत्सुक है इसे आसानी से समझा जा सकता है। एक वक्ता ने यहा ठीक कहा था कि जो व्यक्ति जिस काम को कर रहा है उसके लिए उसका जानना बडा जरूरी है।

अब कन्ट्रोल की बात ले लीजिए। मैं समझती हू कि प्रश्न सिर्फ 'लाइट कैवेलरी' कन्ट्रोल* का ही नही है। बेशक, यह एक अच्छी चीज

---

*जाच-पड़ताल के लिए तरुण कम्यूनिस्ट लीग द्वारा किये जाने वाले आकस्मिक छापे।—सं०

है। अपने इर्द-गिर्द क्या हो रहा है उसे देखने-समझने में इससे मदद मिलती है। सचमुच यह एक अच्छी चीज़ है मगर प्रधान चीज़ नहीं। प्रधान चीज़ तो यह है कि दैनिक जीवन में इसे कैसे कार्यान्वित किया जाय इसका निश्चित ज्ञान हो। भ्रष्ट गल्ती हो जाने के बाद उसके बारे में बातचीत करने से क्या लाभ? मनुष्य को चाहिए कि वह उसे रोके। अभी कुछ ही दिन पहले मैंने एक इन्स्पेक्टर से बातचीत की थी—शिक्षा के जन कमिसेरियट में मुआइना करने की लोगों को एक धुन सी होती है—और मुआइने का ढंग समझ कर मुझे बडा मज़ा आया था।

और इसलिए मैंने एक इन्स्पेक्टर से—एक अच्छे साथी और कम्यूनिस्ट से—बातचीत के दौरान में पूछा कि वह मुझे अपना काम करने का तरीका बताये। उसने मुझे बताया कि मैंने एक शिशुगृह का मुआइना किया। शिशुगृह की छत बैठने वाली थी। शिशुगृह की मरम्मत पर ६३,००० रूबल लगे थे और इतने अधिक धन की बरबादी अस्वीकार्य थी। "और क्या तुमने यह भी पूछा कि कन्ट्रोल की व्यवस्था क्या थी, यह काम किसे सौंपा गया था और मरम्मत के कामों के लिए कौन कौन उत्तरदायी था?" मैंने उससे प्रश्न किया। पता चला कि उसने यह बात पूछी ही न थी कि काम के लिए ज़िम्मेदार कौन है। और सवाल यह है काम के लिए कौन ज़िम्मेदार है? ऐसी घटना फिर न घटे इसकी देखरेख किसे करनी है? जब धन बरबाद हो चुका हो, जब छत बैठ रही हो उस समय ज़िम्मेदारी वगैरह की बातचीत करने से क्या लाभ? नियंत्रण होना चाहिए काम के दौरान में न कि जब वह पूरा हो चुका हो।

मैं एक और प्रश्न पर भी विचार करना चाहूंगी . हमें अराजकता फैलाने वाली आलोचनाए रोकनी चाहिए। इनसे सारा काम चौपट हो जाता है। आलोचना का काम है लोगों के कामों मे उनकी सहायता करना। मैं समझती हूं कि यह एक बहुत बड़ा सवाल यानी सब से बडे सवालों में से एक है और तरुण कम्यूनिस्ट लीग को उसे हल करना चाहिए…

प्रश्न यह है मित्रतापूर्ण और पारस्परिक नियन्त्रण की, प्रभाव कर ढंग से, कैसे व्यवस्था की जाय—उस नियन्त्रण की नहीं जो सिर्फ गल्तिया ढूढने के उद्देश्य से या छापे मारने के रूप मे हो परन्तु सौहार्द पर आधारित सच्चे नियन्त्रण की, जिससे काम में मदद मिलती हो।

राजनीतिक शिक्षा के क्षेत्र में तरुण कम्यूनिस्ट लीग के आवश्यक कार्य

('कोम्सोमोल्स्काया प्राव्दा', २६ नवम्बर, १९३२)

पार्टी के नेतृत्व मे और तरुण कम्यूनिस्ट लीग की अध्यक्षता में हमारे युवक युवतिया समाजवाद का निर्माण कर रहे हैं और इस दिशा में अपनी सारी शक्ति और सारे उत्साह से काम ले रहे हैं। लेकिन हर कदम पर उन्हें ऐसा लगता है जैसे उन्हें अपेक्षित जानकारी नही है। जो भी हो, समाजवादी निर्माण का अर्थ यही तो है नही कि फैक्ट्रिया और प्लान्ट या बडे बडे मकान तथा दूसरी इमारते बना ली जायें। समाजवादी निर्माण एक संघर्षपूर्ण कार्य है। इल्यीच का कथन था कि समाजवादी निर्माण कुल मिला कर समाजवादी पद्धति की स्थापना का संघर्ष है। इसका अर्थ है कि यह संघर्ष है उत्पादन की सुनियोजित, समाजवादी व्यवस्था के लिए, यह संघर्ष है समाजवादी वितरण के लिए, श्रम और जन सम्पत्ति के संबंध में कम्यूनिस्टो के दृष्टिकोण के लिए, सामूहिकता के संबंध में गहरी जानकारी के लिए, लोगो के बीच नये नये संबंधो की स्थापना के लिए, यह संघर्ष है साधारण दुर्जवा और मामूली स्वार्थी की आदर्शवादिता के विरुद्ध, यह संघर्ष है मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्तो को कार्यान्वित करने के लिए।

यह एक बडा जटिल संघर्ष है, उस संघर्ष से भी कही अधिक जटिल जो जार के विरुद्ध किया गया था, जो जमींदारो और पूंजीवादियो

को सत्ताविहीन करने के लिए किया गया था। इसके लिए जरूरत है समाजवाद के लिए लड़ने वाले प्रत्येक व्यक्ति में गम्भीर ज्ञान की और जरूरत है इस ज्ञान के सदुपयोग की योग्यता की, मार्क्सवाद-लेनिनवाद की प्रणाली और भावना से काम करने की क्षमता की।

तरुण कम्यूनिस्ट लीग को ज्ञान प्राप्त करने के लिए सघर्ष छेडना चाहिए। लेकिन हमें हमारे देश के सामान्य सास्कृतिक स्तर को घ्यान में रखना चाहिए। क्रान्ति के वाद के इन पन्द्रह वर्षो में यह स्तर काफी ऊचा हो गया है। यह याद रखना चाहिए कि सिर्फ ६० प्रतिशत लोग ही साक्षर है, कि वहुत-से लोगो को स्कूल में चार वर्ष से भी कम शिक्षा मिली है और इसलिए हमें वड़ी गम्भीरता से पढना-लिखना चाहिए।

तरुण कम्यूनिस्ट लीग को ज्ञानार्जन का यह सघर्ष न सिर्फ अपने मध्य ही, अपितु सामान्यतया युवको के वीच भी, आरम्भ करना चाहिए। यह भी वडा जरूरी है कि समस्त युवक वर्ग स्वतत्र रूप से अध्ययन करने की योग्यता तथा पुस्तको, पुस्तकालयो, पत्र-व्यवहार कोर्सो और रेडियो की सहायता से भी, स्वतंत्र रूप से ज्ञान प्राप्त करे। एतदर्थ उसे पूरा सहयोग मिलना चाहिए। एक सव से जरूरी काम है स्वतत्र अध्ययन के और ऐसे विपयो के कार्यक्रम तैयार करना जिनका भिन्न भिन्न मडलो में अध्ययन किया जा सकता हो। पुस्तकालयो की सख्या में वृद्धि, पुस्तकालयो में पुस्तको की व्यवस्था, वाचनालयो की स्थापना और इस क्षेत्र में अन्य अनेक सुविवाए—यह सव मूलत तरुण कम्यूनिस्ट लीग का काम है। लेकिन इस क्षेत्र में उसे अपना सहयोग उन प्रयासो में देना चाहिए जो राष्ट्रव्यापी आवार पर किये जा रहे है, और सव से अलग रह कर कोई काम न करना चाहिए।

मैं एक प्रश्न पर अर्थात् सामान्य शिक्षा के तरीको पर लोगो का ध्यान आकृष्ट करना चाहूगी। प्राय कहा जाता है कि युवको के लिए जो स्कूल हो उनका कोई औद्योगिक आवार होना चाहिए। यह ठीक है।

अर्द्ध-साक्षरों तथा स्वतंत्र रूप से अध्ययन करने वालों के लिए जो पुस्तकें हों उनके विषय ऐसे व्यक्तियों के कार्यों के साथ संबद्ध हों। इसे समझा कैसे जाय? कुछ लोगों का कहना है कि अगर इन पुस्तकों में 'प्लान्ट', 'ब्लूमिंग' अथवा 'ट्रैक्टर' जैसे शब्द आ जाय तो काफी होगा। दूसरों का ख्याल है कि 'औद्योगिक आधार' का मतलब है संकीर्ण विशेषज्ञता। वे भूल जाते हैं कि सामान्य शिक्षा के स्कूलों और कोर्सों का उद्देश्य विद्यार्थियों में व्यापक पोलीटेक्निकल दृष्टिकोण का विकास करना है। लेनिन ने इस बात पर विशेष बल दिया था। उन्होंने पोलीटेक्निकल शिक्षा के बारे में अपने विचार १८९०-१९०० में ही व्यक्त कर दिये थे और जब हमने १९२०-२१ में सुनियोजित अर्थ-व्यवस्था के प्रश्न पर विचार किया था उस समय तो उन्होंने इस विषय पर खास तौर से जोर दिया था। समाजवादी अर्थ-व्यवस्था का विकास योजनानुसार होता है और यही पर इसमें और उस पूंजीवादी अर्थ-व्यवस्था में मूल अन्तर है जिसका आधार है प्रतियोगिता और लाभ। पूंजीवादी देशों में सुनियोजित अर्थ-व्यवस्था हो ही नही सकती। राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था का निर्माण होता है लाखों व्यक्तियों के सहयोग से और इसलिए यह आवश्यक है कि ये लाखों ही व्यक्ति नियोजित अर्थ-व्यवस्था के जागरूक निर्माता हों, खनिज और प्रक्रिया उद्योग का, तथा उत्पादन की भिन्न भिन्न शाखाओं का पारस्परिक संबंध समझे और यह भी समझ ले कि अमुक अमुक उद्योग का स्थान महत्वपूर्ण क्यों है? जनता के लिए यह देखना कि अर्थ-व्यवस्था किस प्रकार पनपती है और यह जानना कि उनके समक्ष महत्वपूर्ण कार्य कौन कौनसे हैं एक तरह से अपरिहार्य है। हमारे अखबार, समाजवादी प्रतिस्पर्द्धा, तूफानी मजदूर आन्दोलन तथा औद्योगिक और आर्थिक योजनाओं की पूर्ति के लिए होने वाले स्पर्द्ध श्रम के प्रति जनता की चेतनाशील प्रवृत्ति का विकास करते हैं, पोलीटेक्निकल प्रचार को सुगम

बनाते हैं और एक सुनियोजित समाजवादी अर्थ-व्यवस्था का निर्माण करने में राष्ट्रव्यापी प्रयासो में जनता का सहयोग देते हैं। तरुण कम्यूनिस्ट लीग के प्रत्येक सदस्य में एक निश्चित पोलीटेक्निकल दृष्टिकोण पैदा करने के लिए यथासम्भव सभी प्रयत्न किये जाने चाहिए क्योकि तभी वह अपनी फैक्ट्री के आर्थिक कार्यों को अच्छी तरह समझ सकेगा।

एक दूसरा कार्य भी है: शिक्षा संबंधी, प्रचारात्मक, आन्दोलनात्मक तथा राजनीतिक शिक्षा विषयक कार्य सम्पन्न करने में मनुष्य को इतना ज्ञान अवश्य होना चाहिए कि चालू निर्माण-कार्यों को मार्क्सवाद-लेनिनवाद के मूलभूत सिद्धान्तो से कैसे सबद्ध किया जाय।

तरुण कम्यूनिस्ट लीग को इस संबध पर विशेष ध्यान देना चाहिए। उसे चाहिए कि वह उन प्रचारात्मक और आन्दोलनात्मक तरीको को समझे और उन्हे भली भांति सीखे जिन्हे पार्टी आरम्भ ही से प्रयोग में लाती रही है तथा जिन्हें उसके संघर्ष के पूरे इतिहास ने पूर्णत उचित ठहराया है। प्रचारक ने श्रमिको की ज़रूरतो को लेकर अपना काम शुरु किया यानी उसने एक ऐसे विषय को उठाया जो उस समय श्रमिको के मस्तिष्क को सब से अधिक आन्दोलित कर रहा था और दिखा दिया कि आज श्रमिको की जो हीन दशा है उसका एकमात्र कारण है पूजीवादी व्यवस्था। एक समय था जब कि श्रमिक को फैक्ट्री में गर्म पानी के लिए संघर्ष करना पड़ता था; इस सघर्ष को समाजवाद के लिए किये जाने वाले सघर्ष से संबद्ध किया गया था। एक इसी पद्धति के कारण १९१७ में पार्टी श्रमिक जनता को विजय और सफलता के मार्ग पर ले जाने में समर्थ हो सकी। आज भी इसी पद्धति का उपयोग करना अपरिहार्य समझा जा रहा है। उदाहरणार्थ, अगर ऐसे किसानो की मीटिंग हो रही हो जो अन्न की सरकारी खरीदारी सबंधी प्रश्नो पर विचार-विमर्श कर रहे हो और वक्ता राज्य को अनाज देने की आवश्यकता के संबध में ही बोले जा रहा हो किन्तु इस प्रश्न का सबंध समाजवादी

निर्माण से स्थापित न कर रहा हो, तो उनका भाषण बिल्कुल बेकार होगा।

इसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति किसी छुट्टी के दिन वाली मीटिंग में भाषण देते हुए सिर्फ हमारी सफलताओं की ही बात करता है और आंकडे देता है तथा यह नही जानता कि हमारी सफलताओ की इस कहानी के साथ किसानो के अपने विचारो को किस प्रकार पिरोना चाहिए तो उसकी बात श्रोताओ के गले तले न उतरेगी।

इस वर्ष केन्द्रीय कमेटी ने कई कम्यूनिस्ट कालेजो को बन्द करने और उनके स्थान पर उन कम्यूनिस्ट कृषि कालेजो का एक जाल-सा बिछा देने का निश्चय किया है जिनमें ऐसे स्थानीय कार्यकर्ता काम सीखें जिन्होने किसी स्कूल में चार-चार पाच-पाच वर्षो तक शिक्षा पाई हो। और फिर भी यह निश्चय बडा महत्वपूर्ण है क्योकि इसका उद्देश्य सिद्धान्त और व्यवहार के बीच के अन्तर को दूर करना है। स्थानीय कार्यकर्ताओ को ऐसी अनेक व्यावहारिक समस्याओ का सामना करना पडा है जिन्हें हल करना उन्हें खुद नही मालूम। यहा इन कार्यकर्ताओं को प्रारम्भिक परामर्श के अवसर सुलभ हैं जिनके परिणामस्वरूप उन्हे मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्तो के अनुसार इन प्रश्नो को हल करने में काफी सहायता मिलेगी। मार्क्सवाद-लेनिनवाद की भावना से कैसे काम किया जाय इसकी उन्हें शिक्षा मिलेगी और वे अपना काम निपुणता के साथ कर सकेंगे। इन कम्यूनिस्ट कृषि कालेजो का सम्यक् ढग से सगठन हो जाने से देहातो में भी मार्क्सवाद-लेनिनवाद का प्रचार होगा और इस प्रकार ग्राम्य-क्षेत्र में होने वाला सामूहिक फार्म सबधी कार्य एक नया रूप ग्रहण करेगा।

तरुण कम्यूनिस्ट लीग के राजनीतिक शिक्षा के कार्य भी इसी ढग से किये जाय, इनके सदस्यो को मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धान्त समझाये जाय और उन्हें यह बताया जाय कि वर्तमान समस्याओ को सुलझाने के लिए व्यवहार में उनका उपयोग कैसे किया जाय।

राजनीतिक शिक्षा सबंधी एक सम्मेलन में लेनिन ने कहा था कि राजनीतिक शिक्षा के काम में लगे हुए लोगो को हर चीज में रुचि दिखानी चाहिए· निरक्षरता दूर करने में, नौकरशाही से मोर्चा लेने में और उन सारी समस्याओं को हल करने में जो देश के सामने हैं। बेशक, यही बात तरुण कम्यूनिस्ट लीग के राजनीतिक शिक्षा सबंधी कार्यकर्ताओं के लिए भी है। लीग के हर सदस्य को भले ही उसका पेशा कोई भी क्यो न हो राजनीतिक शिक्षा के क्षेत्र में काम करना चाहिए। सास्कृतिक निर्माण का प्रश्न आज बडा महत्वपूर्ण बन गया है। हमारी जनता को ज्ञान की जरूरत है। हर सोवियत विशेषज्ञ को यह जानना चाहिए कि जनता में रह कर कैसे काम करना चाहिए। आज, विज्ञान अकादमी के प्रत्येक अधिवेशन में कार्यकर्ताओं के मध्य होने वाले व्यावहारिक कार्यों पर विचार-विनिमय होता है। अकादमी का नारा है "ज्ञान, विज्ञान और टेक्नीक सारी जनता के लिए।" लेकिन यह बात सिर्फ अकादमी पर ही लागू नही होती। हर शिक्षा सस्था को, हर टेक्निकल कालेज को और हर विश्वविद्यालय को इसी रास्ते का अनुसरण करना चाहिए।

तरुण कम्यूनिस्ट लीग के सदस्यो को चाहिए कि वे उक्त नारे का पूरा पूरा समर्थन करे। अकादमीशियनों ने जो कार्य आरम्भ किये है उनका स्वागत भर कर लेना काफी नही है। टेक्निकल कालेज, कृषि कालेज या विश्वविद्यालय के प्रत्येक विद्यार्थी को सर्वसाधारण की भाषा में बोलना और लिखना आना चाहिए। उसे यह भी सीखना चाहिए कि अपने ज्ञान को दूसरो तक कैसे पहुंचाया जाय।

इन शिक्षा संस्थाओं के प्रत्येक विद्यार्थी का यह कर्तव्य है कि वह यह देखे कि उसकी संस्था जनता में व्यापक प्रचार कार्य करे। तरुण कम्यूनिस्ट लीग को इसपर ध्यान देना चाहिए।

अन्त में मैं एक बात और कहूंगी।

तरुण कम्यूनिस्ट लीग स्कूलों का संरक्षक है।

स्कूलों की दिशा में जितनी कुछ प्रगति हो चुकी है, उसे हम देख ही रहे हैं। अच्छी शिक्षा और सम्यक् भरण-पोषण के लिए अध्यापकों ने जो आन्दोलन चलाया है, उसे तथा साथ ही इस बात को भी हम देख रहे हैं कि वृद्ध और युवक अध्यापकों में एकत्व की भावना बढ़ रही है, अनुभवी अध्यापक युवकों की मदद करते हैं और युवक लोग आन्दोलन में उत्साह दिखाते हैं। अध्यापक अध्ययनरत हैं। तरुण कम्यूनिस्ट लीग खड़े खड़े तमाशा ही तो नहीं देख सकती। उसे इस कार्य में भाग भी तो लेना चाहिए, स्कूल के संरक्षक के रूप में उसे इस कार्य में हाथ बटाना चाहिए, सर्वसाधारण में प्रचार कार्य करना चाहिए, यह देखना चाहिए कि स्कूल सचमुच पोलीटेक्निकल रूप में काम करे, बच्चों को सर्वहारा के अनुशासन की शिक्षा दे, उनमें ज्ञान का प्रसार करे, और काम और अध्ययन के प्रति उनमें चेतना का प्रादुर्भाव करे।

मुझे विश्वास है कि उपर्युक्त प्रश्नों को तरुण कम्यूनिस्ट लीग द्वारा निश्चित किये जाने वाले कार्यक्रम में समाविष्ट कर लेना चाहिए। संक्षेप में ये प्रश्न हैं—संस्कृति संबंधी व्यापक क्रियाशीलता, सांस्कृतिक क्रिया-कलापों का उत्पादन कार्यों से समन्वय, उत्पादन संबंधी प्रचार कार्यों का लोगों के पोलीटेक्निकल दृष्टिकोण से समन्वय, राजनीतिक शिक्षा और व्यावहारिक कार्यों का मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्तों में समावेश, अध्यापकों के बीच होने वाले कार्य, इन कार्यों के लिए सोवियत विशेषज्ञों की भर्ती, शिक्षा संस्थाओं को राजनीतिक शिक्षा के कामों में लगे हुए केन्द्रों का रूप देना। सम्प्रति यह कार्य बड़ा जरूरी है।

युवकों के संबंध में लेनिन के विचार

(‘तरुण कम्यूनिस्ट’ पत्रिका, अंक १, १९३५)

क्रान्तिकारी आन्दोलन और समाजवादी निर्माण में सर्वहारा युवको के भाग लेने के संबंध मे लेनिन के विचार

सामान्यतया युवक क्रान्ति आन्दोलन के सिलसिले में व्लादीमिर इल्यीच ने उन तरुण श्रमिको के क्रान्तिवादी आन्दोलन पर विशेष ध्यान दिया था, जिन्होने अपने हितो के लिए ही श्रमिक-वर्ग-संघर्ष में भाग लिया था, जिनमें उत्साह था, वर्ग-चेतना थी, जिन्होने इस सघर्ष में तप कर इस्पात की शक्ति प्राप्त की थी।

१९०१ में ओवूखोव के श्रमिको पर एक मुकदमा चला। इन श्रमिको ने पुलिस का मुकावला किया था। मुकदमे के समय मार्फा याकोवलेवा नामक एक १८ वर्षीय श्रमिक युवती ने जो एक रविवारीय महिला सायंकालीन स्कूल की छात्रा थी, साफ साफ और दृढता के साथ यह कहा था कि “हम अपने भाइयो के साथ हैं”। उस समय वह दूसरी श्रमिक युवतियो के नाम से ही अपनी आवाज़ वुलन्द कर रही थी। ‘कालेपानी के नियम और कालेपानी के निर्णय’ शीर्षक एक लेख में व्लादीमिर इल्यीच ने कहा है—

“हमारे उन वीर साथियो की, जिनकी हत्या की गई थी अथवा जिनपर जेलो में अत्याचार किये गये थे, यादगार उन लोगो की शक्ति वढायेगी जो अन्याय से लडने के लिए पहले-पहल वढ़ रहे है और उनके पक्ष में ऐसे हज़ारो सहायको को खडा कर देगी जो १८ वर्षीय

मार्फा याकोवलेवा की भांति खुल्लमखुल्ला कहेंगे कि 'हम अपने भाइयों के साथ हैं !'"*

१५ अगस्त १९०३ को लिखे गये अपने एक लेख में लेनिन ने बताया था कि शासक युवकों से डरते हैं क्योंकि पुलिस के कथनानुसार "औद्योगिक आबादी के सब से अधिक अव्यवस्था फैलाने वाले लोग" १७ और २० वर्षों के बीच के ही उम्र के थे। इन्हीं 'अव्यवस्था फैलाने वालों' ने १९०५ की क्रान्ति में साहस और वीरता का परिचय दिया था। दिसम्बर १९०५ के मास्को विद्रोह में प्रदर्शित वीरता का वर्णन करते हुए 'मास्को विद्रोह के सबक' शीर्षक एक लेख में इल्यीच ने (११ सितम्बर १९०६ को) लिखा था—

"दस दिसम्बर को प्रेस्न्या जिले की दो श्रमिक लडकियां १० हजार की भीड में एक लाल झंडा लिये हुए दौडती हुई कज्जाकों के पास आईं और चिल्ला चिल्ला कर कहने लगी 'हमें मार डालो हम जिन्दा रहते झंडा नहीं देंगी' और कज्जाक घबडा गये तथा भीड के 'कज्जाक हुर्रा!' नारे सुनते हुए घोडों पर भाग गये। साहस और वीरता के इन उदाहरणों को सर्वहारा के दिमागों में बराबर बिठाना चाहिए।"**

फरवरी १९०५ में इल्यीच ने गूसेव और बोग्दानोव को लिखे गये अपने पत्र में कहा था कि युवकों के साथ अधिक विश्वास से व्यवहार किया जाय और उन्हें क्रान्तिकारी आन्दोलन में सम्मिलित किया जाय। यही बात उन्होंने 'नये कार्य और नयी नयी शक्तियां' (मार्च १९०५) में कही थी।

युवक श्रमिक पार्टी में भर्ती होने लगे। मेन्शेविकों को और लान्नि

---

*व्ला० इ० लेनिन, ग्रंथावली, चतुर्थ रूसी संस्करण, खंड ५, पृष्ठ ३२८।

**व्ला० इ० लेनिन, चुने हुए ग्रंथ, खंड १, भाग २, पृष्ठ १९७।

को भी, जो उस समय एक मेन्शेवीक था, यह वात अच्छी न लगी। इसके वारे में लेनिन ने २० दिसम्बर १६०६ को 'मेन्शेविज्म के सकट' शीर्षक लेख में लिखा था—

"उदाहरणार्थ, लारिन की शिकायत है कि हमारी पार्टी में युवको की वहुतायत है और परिवार वाले लोग वहुत कम हैं तथा वे (परिवार वाले) पार्टी से अलग होते जा रहे हैं। इस रूसी अवसरवादी की शिकायत से मुझे एगेल्स द्वारा लिखी गई एक वात याद आ गई। (मैं समझता हू यह 'रिहायशी मकानो की समस्या'—'Zur Wohnungsfrage' में कही गई थी।) किसी अशिष्ट वूर्जवा प्रोफेसर को, जो एक जर्मन सावियानिक-जनवादी था, उत्तर देते हुए एगेल्स ने लिखा था हमारी क्रान्तिवादी पार्टी में युवको की वहुतायत हो, क्या यह स्वाभाविक नही? हमारी पार्टी भविष्य की पार्टी है और भविष्य युवको का है। हमारी पार्टी नयी व्यवस्था कायम करने वालो की पार्टी है और इसी लिए युवक पूरी लगन से उसके साथ हैं। हमारी पार्टी हर पुरानी और घिसी-घिसाई व्यवस्था के विरुद्ध नि स्वार्थ सघर्ष कर रही है और युवक हमेशा इस सघर्ष में अग्रणी रहेगे।

"नही, हम तीस तीस वर्ष के 'थके-थकाये' वूढो का, उन क्रान्तिवादियो का 'जो और अधिक वुद्धिमान हो चुके है' और सामाजिक-जनवादी गद्दारो का चुनाव सावियानिक-जनवादियो पर ही छोड दें। हम हमेशा ही प्रगतिशील वर्ग के युवको की पार्टी वने रहेगे।"*

इल्यीच की इच्छा थी कि हमारे युवक दमन और शोपण के खिलाफ लड़ने वाले पुराने लोगो के अनुभवो को, और संघर्ष में लगे हुए उन व्यक्तियो के अनुभवों को संग्रहीत करे और उनसे फायदा उठायें जिन्होंने

---

*व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी सस्करण, खड ११, पृष्ठ ३१६।

बहुत-सी हड़तालों और क्रान्तियों में भाग लिया था, जिन्हें क्रान्तिवादी परम्पराओं और व्यापक व्यावहारिक दृष्टिकोण का अच्छा ज्ञान था। "प्रत्येक देश में सर्वहाराओं को सर्वहारा वर्ग द्वारा सचालित विश्वव्यापी सघर्ष के अविकार की आवश्यकता पड़ती है। हमें भी अपनी पार्टी के कार्यक्रम और कामो को स्पष्ट करने के लिए विश्व सामाजिक-जनवाद के सिद्धान्तवादियों के अविकार की जरूरत है।"* यह बात लेनिन ने १९०६ में कौत्स्की के 'रूसी क्रान्ति की प्रेरक शक्तियां और सभावनाएं' के रूसी सस्करण की भूमिका में लिखी थी। उन्होंने यह भी लिखा था कि तात्कालिक नीति की अत्यधिक जरूरी, व्यावहारिक एव निश्चित समस्याएं उठने पर सब से बड़ा अधिकार भिन्न भिन्न देशों के उन प्रगतिशील और वर्ग-चेतन श्रमिकों का होगा जिनका सघर्ष से सीधा सबध है। ऐसे प्रश्न दूर रह कर हल नहीं किये जा सकते।

८ वर्ष बाद, १९१४ में, 'एकता की चीख-पुकारों की आड़ में एकता का विघटन' शीर्षक अपने लेख में लेनिन ने युवकों का ध्यान इस ओर दिलाया था कि रूस के अग्रयुगीन श्रम आन्दोलन के अनुभवों पर ध्यान देना तथा पार्टी द्वारा किये गये निर्णयों के अनुसार काम करना बहुत जरूरी है। त्रोत्स्की ने अपनी स्थिति को किस प्रकार बदला इसका जिक्र कर चुकने के बाद इल्यीच ने लिखा था—

"इस प्रकार के लोग इतिहास के प्राचीन निर्माणों के, उस समय के ध्वसावशेष हैं जब रूस में सामूहिक श्रमिक वर्ग आन्दोलन सुप्त अवस्था में था और जब समाज के हर छोटे छोटे गिरोह के पास इतना 'पर्याप्त स्थान' होता था जिसमें रह कर वह एक प्रवृत्ति, समूह अथवा दल, सक्षेप में, दूसरों के साथ एक हो जाने के लिए वार्ता करने की 'शक्ति' का ढोंग कर सकता था।

---

*वही, पृष्ठ ३७४।

"श्रमिको की युवक पीढी को यह वात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि वे किस तरह के लोगों से बातचीत कर रहे हैं: उनके पास ऐसे लोग आते हैं जो विश्वास से परे वडे वड़े दावे करते है लेकिन या तो पार्टी के निर्णयो को विल्कुल अस्वीकार कर देते है—पार्टी के उन निर्णयो को जिन्होंने १६०८ के वाद विसर्जनवाद के प्रति हमारे रुख को स्पष्ट और परिभापित किया था— अथवा उपर्युक्त निर्णयों की पूर्ण मान्यता के आधार पर वहुमत में वास्तविक एकता की स्थापना करने वाले अद्ययुगीन रूसी श्रमिक वर्ग के अनुभवो पर कोई ध्यान नही देते।"*

लेनिन की इच्छा थी कि युवक लोग मूल समस्याओ के हल करने के प्रश्न पर खुद ही मनन करे और उन प्रश्नो का उत्तर ढूढें जो उनके दिमागो को व्यथित कर रहे है। उन्होने यह वात 'युवक अन्ताराप्ट्रीय सघ' विष्यक अपने लेख में दिसम्वर १६१६ में लिखी थी—

"यह स्वाभाविक है कि अभी तक युवक संघटन में सैद्धान्तिक रूप से स्पष्टता और दृढता नही आ सकी हैं। ये गुण उसमें शायद कभी न आ सकेगे क्योकि यह वलवती इच्छावाले, प्रचड और उत्सुक युवको का संघटन है। परन्तु हमें चाहिए कि हम, ऐसे लोगो में जो सैद्धान्तिक स्पष्टता की कमी है उसे, उस ढग से भिन्न तरह पर समझें जिस ढग से हम दिमागो की सैद्धान्तिक अव्यवस्था और अपने 'ओकिस्त'**, 'सामाजिक-क्रान्तिवादी', 'तोलस्तोयवादी', अराजकतावादी, अखिल यूरोपीय कौत्स्कीवादी ('केन्द्र'), आदि, के दिलो में क्रान्तिवादी दृढता की कमी को समझते है, या हमें समझना चाहिए। जव सर्वहारा वर्ग उन प्रौढो के कारण मदोन्मत्त हो रहा हो जो दूसरो के नेतृत्व का

---

*व्ला० इ० लेनिन, चुने हुए ग्रन्थ, खड १, भाग २, पृष्ठ २७०।

**ओकिस्त—रूसी में इस नाम की व्युत्पत्ति मेन्शेवीको के नेतृत्व-केन्द्र के नाम से हुई है। यह केन्द्र वस्तुत. एक सगठनात्मक कमेटी था।—सं०

अथवा उन्हें सिखाने का दावा करते हैं तब तो बात ठीक नहीं। हमें ऐसे लोगों के विरुद्ध निर्दय संघर्ष छेड़ना चाहिए। हां युवक मंचों की बात दूसरी है क्योंकि वे तो साफ साफ यह स्वीकार करते हैं कि वे अभी सीखते हैं कि उनका मुख्य काम समाजवादी पार्टियों के कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करना है। हमें इन लोगों की हर सम्भव तरीके से मदद करनी चाहिए, उनकी गल्तियों के प्रति सहनशील होना चाहिए, उन्हें धीरे धीरे ठीक करना चाहिए, मुख्यतया समझा-बुझा कर न कि लड़-झगड़ कर। प्राय ऐसा होता है कि वृद्धों की पीढ़ी के लोग युवकों के साथ व्यवहार करना भी नहीं जानते और युवक अपने बाप-दादाओं से उलटे ढंग पर समाजवाद की ओर बढ़ते हैं, एक भिन्न रास्ते से, भिन्न तरह से और भिन्न दशाओं में।"* लेनिन को युवकों में बड़ी बड़ी आशाएं बनी रहीं। 'श्रमिक वर्ग और नियो-मेलथूजियानिज्म' शीर्षक अपने लेख में, जो जून १९१३ में प्रकाशित हुआ था, उन्होंने यह बात निम्नलिखित पंक्तियों में कही थी "हां, और हम भी, श्रमिक और छोटे छोटे मालिकों के कुछ समूह, असह्य दमन और कष्टों का जीवन व्यतीत कर रहे हैं। अपने बाप-दादाओं की अपेक्षा हमारा जीवन अधिक कठोर है। लेकिन एक बात में हम उनसे भी अधिक भाग्यशाली हैं। हमने लड़ना सीख लिया है और तेजी से सीख भी रहे हैं—और अकेले रह कर लड़ना नहीं जैसा हमारे बाप-दादा किया करते थे, बूर्जवाई हवाई नारों के अधीन भी नहीं जो आध्यात्मिक रूप से हमारे लिए पूर्णत अस्वीकार्य हैं, अपितु खुद अपने नारों के अधीन, वर्ग के नारों के अधीन। हम अपने बाप-दादाओं की अपेक्षा कहीं अच्छी तरह लड़ रहे हैं। हमारे बच्चे हमसे अच्छा लड़ेंगे और वे जीतेंगे भी।

---

*ब्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी संस्करण, खंड २३, पृष्ठ १५४।

"श्रमिक वर्ग मरणासन्न नही है। वह आगे बढ़ रहा है, मज़बूत बन रहा है, और अधिक मजबूती के साथ संघटित हो रहा है। वह संघर्ष में कदम रख कर फौलाद की तरह बन रहा है। भूदासत्व, पूंजीवाद और छोटे पैमाने पर उत्पादन जैसे मामलो में हम निराशावादी हैं परन्तु जब सवाल श्रमिक वर्ग के आन्दोलन और उसके उद्देश्यो का उठता है तो हम सोत्साह आशावादी हैं। हम एक नयी इमारत की नीव रख रहे हैं जिसे हमारे बच्चे पूरा करेंगे।"*

लेनिन को श्रमिक वर्ग की विजय में दृढ विश्वास था और यह भी विश्वास था कि यह वर्ग जीवन का पुनर्निर्माण करने और एक शानदार समाजवादी इमारत की रचना करने में पूर्णतया समर्थ है। इसी लिए वे समझते थे कि बढती हुई पीढी हमारे उद्देश्य को आगे बढ़ायेगी और चाहते थे कि हम इस तरुण पीढी के लोगो को निर्माता और संघर्षशील बनायें।

'सर्वहारा क्रान्ति के युद्ध कार्यक्रम' में लेनिन ने लिखा था कि यह संघर्ष गम्भीर संघर्ष होगा। "वर्ग-चेतन नारी-श्रमिक अपने बच्चे को समझा कर कहेगी· 'शीघ्र ही तुम आदमी बनोगे। तुम्हे बन्दूक दी जायेगी। इसे उठाओ और सैनिक शिक्षा ग्रहण करो। सर्वहारा को इस ज्ञान की ज़रूरत है—अपने भाइयो को, अन्य देशो के श्रमिको को, गोली से उडाने के लिए नही, जैसा कि वर्तमान युद्ध में हो रहा है, और जैसा कि समाजवाद के शत्रु तुमसे करने के लिए कह रहे है लेकिन अपने देश के बूर्जवाओ के विरोध का मुकाबला करने तथा शोषण, गरीबी और युद्ध को समाप्त करने के लिए, परन्तु, सदुद्देश्यो के प्रदर्शन से नही अपितु, बूर्जवा वर्ग पर विजय प्राप्त कर के, उन्हे निरस्त्र कर के।"**

---

*व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी संस्करण, खंड १९, पृष्ठ २०६।

**व्ला० इ० लेनिन, चुने हुए ग्रन्थ, खड १, भाग २, पृष्ठ ५७६।

युवकों को बन्दूक भर इस्तेमाल कर लेना ही नहीं सीखना है। उन्हें चाहिए कि वे कम अवस्था से ही राजनीतिक जीवन में भाग लेना शुरू करें।

ब्लादीमिर इल्यीच ने ६ फर्वरी १९१३ को, दूमा की बहस के दौरान में, स्कूल के प्रश्न पर सभी पार्टियों की स्थिति का विश्लेषण किया था। अक्तूब्रिस्टों, प्रगतिवादियों और सांविधानिक-जनवादियों का कहना था कि स्कूली बच्चों को राजनीति में घसीटना बड़ा हानिकर है। इस दोष के अपराधी विद्यार्थियों को सजा दी जानी चाहिए, परन्तु पुलिस द्वारा नहीं अध्यापकों द्वारा। वे सरकार से असन्तुष्ट थे क्योंकि उनका कहना था कि सरकार में सद्भावना की कमी है, वह सुस्त है। सांविधानिक-जनवादियों के प्लेटफार्म की व्याख्या करते हुए लेनिन ने लिखा था—

"वे 'अल्पायु' राजनीतिक क्रियाशीलता की भी भर्त्सना करते हैं, यद्यपि ऐसा वे बड़ी अस्पष्टता और मृदुता के साथ करते हैं। यह एक जनवाद-विरोधी दृष्टिकोण है। अक्तूब्रिस्ट और सांविधानिक-जनवादी पुलिस की कार्रवाइयों को खराब कहते हैं सिर्फ इसलिए कि वे इन कार्रवाइयों के बजाय निरोधक उपायों की मांग करते हैं। शासन को चाहिए कि वह मीटिंगों की रोकथाम करे, न कि उन्हें भंग करे। यह स्पष्ट है कि ऐसा सुधार शासन को बदलेगा नहीं उसे जरा कम देगा सर्वप्रथम जनवादी को कहना चाहिए था मंडल और वार्ताएं स्वाभाविक भी हैं और वांछनीय भी। बात यही है। राजनीतिक क्रियाशीलता की, यहां तक कि 'अल्पायु' क्रियाशीलता की भी, भर्त्सना—पाखण्ड और सुधार या जागृति का विरोध है। जनवादी को एक मंत्रालय का नहीं अपितु सारी राज्य व्यवस्था का सवाल उठाना चाहिए था।"*

---

*व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी संस्करण, खंड १८, पृष्ठ ५३६-४१।

फ़र्वरी क्रान्ति के वाद व्लादीमिर इल्यीच ने उन सव चीज़ो में विशेष रुचि का प्रदर्शन किया जिनका समाजवादी निर्माण से कोई भी संवध था। इस संवंध में उनके विचार 'दूर देश से पत्रो' में अधिक स्पष्टता से व्यक्त हो सके हैं। पेरिस कम्यून तथा मार्क्स और एगेल्स द्वारा की गई उसकी व्याख्या और १९०५ की क्रान्ति के अनुभवो के आधार पर व्लादीमिर इल्यीच का मत था कि राज्य की पुरानी व्यवस्था नष्ट हो जाने के वाद एक नयी किस्म का संघटन वनाना ज़रूरी होगा। श्रमिको और सैनिकों के डिप्टियो की सोवियतो का कार्यपालिका-सघटन जनता की मिलीशिया होना चाहिए जिसमें सभी नागरिक काम करे तथा सेना, पुलिस और प्रशासकीय व्यवस्था के कृत्यो का सम्पादन करे। लेनिन ने लिखा है "ऐसी मिलीशिया जनवाद को उस सुन्दर परदे से, जिसके पीछे पूजीपति जनता को गुलाम वनाते और उनका अपमान करते है, वदल कर उस वास्तविक स्कूल का रूप दे देगी, जहां ट्रेनिंग पा कर जनता राज्य के समस्त कार्यो में भाग ले सकेगी। ऐसी मिलीशिया वच्चो को राजनीति में प्रवेश दिलायेगी और उन्हे ज़वानी शिक्षा ही नहीं, अपितु आचार-व्यवहार और कार्यों की शिक्षा भी देगी।"*

'हमारी क्रान्ति में सर्वहारा वर्ग के लक्ष्य' में, जो १० अप्रैल १९१७ को लिखा गया था, उक्त विचार को और भी आगे वढाते हुए, इल्यीच ने वह उम्र निर्दिष्ट कर दी थी जव कि लोगो को सार्वजनिक सेवाओ में जाना चाहिए। उन्होंने कहा था कि मिलीशिया की सेवा में १५ और ६५ वर्ष के वीच के सभी नर-नारी होने चाहिए वशर्ते कि अस्थायी रूप से प्रस्तावित उम्र की ये सीमाएं तदर्थ किशोरो और वृद्धो के लिए ठीक समझी जायं।

---

*व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी संस्करण, खड २३, पृष्ठ ३२०।

श्रमिकों और लाल सैनिको के डिप्टियो की मास्को सोवियत के अधिवेशन में, ६ मार्च १९२० को, भाषण देते हुए व्लादीमिर इल्यीच ने इस बात पर ज़ोर दिया था कि राज्य पर नियंत्रण रखने के लिए जनता का सहयोग प्राप्त करना अपरिहार्य है। उनका विचार था कि राज्य-नियंत्रण शासन का वह स्कूल है जहां सब से अधिक बुज़दिल और पिछड़े हुए लोगो को भी शासन करना सिखाया जाता है बशर्ते कि निर्देशन ठीक हो। श्रमिक और किसान जनता को राज्य-नियंत्रण की व्यवस्था करनी चाहिए। लेनिन का कथन था "आपको यह यंत्र उन श्रमिक और कृषक समुदाय और उन श्रमिक और कृषक युवको की सहायता से मिलेगा जो सरकार की बागडोर अपने हाथो में लेने के लिए अभूतपूर्व आकांक्षा, तत्परता और निश्चय के साथ जुटे हुए है। हमने युद्ध के दौरान में अनेक अनुभव प्राप्त किये है और हमारे पास हज़ारो ऐसे लोग है जिन्होंने सोवियत प्रणाली को देखा-समझा है और जो राज्य का संचालन करने में समर्थ है।"*

बढती हुई पीढी की सार्वभौम शिक्षा और पोलीटेक्निकल कार्यों पर लेनिन के विचार

व्लादीमिर इल्यीच ने किशोरो एवं तरुण श्रमिकों के श्रम का प्रश्न उन्हे प्रशिक्षण देने तथा उनके श्रम को एक नये ढंग से संघटित करने के प्रश्न के साथ संबद्ध कर दिया था। 'नरोदनिको की सुरगोशी योजनाओं के रत्न कण' लेख में, जो १८९७ में लिखा गया था, उन्होंने कहा था—

"प्रशिक्षण को तरुण पीढी के उत्पादनशील श्रम के साथ संबद्ध किये बिना भावी समाज की कल्पना करना भी असम्भव है। बिना

*व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी संस्करण, खंड ३०, पृष्ठ ३८९।

उत्पादनशील श्रम के प्रशिक्षण एव शिक्षा और बिना समानान्तर प्रशिक्षण और शिक्षा के उत्पादनशील श्रम आधुनिक टेक्नोलाजी और विज्ञान के स्तर तक नहीं लाये जा सकते।" और—

"सार्वभौम शिक्षा के साथ उत्पादनशील श्रम को संबद्ध कर देने के लिए स्पष्टतया यह आवश्यक है कि उत्पादनशील श्रम में सभी को भाग लेने के लिए विवश किया जाय।"*

और इसलिए,, शिक्षा, स्कूल की हाज़िरी, सब के लिए वैसे ही अनिवार्य हो जैसे कि समाजोपयोगी उत्पादनशील श्रम। पार्टी की दूसरी काग्रेस ने जो कार्यक्रम अंगीकार किया था उसमें एक ओर तो १६ वर्ष से कम के सभी बच्चो को सार्वभौम शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण देने की बात थी और दूसरी ओर १६ वर्ष से कम के बालको को श्रम करने की मनाही थी, साथ ही उसमें १६ से १८ वर्ष तक के तरुणो के लिए काम के घंटो को छ तक सीमित कर देने की बात थी। इल्यीच ने इस प्रश्न पर १९१७ में उस समय फिर विचार किया जब पुराने कार्यक्रम में संशोधन करना आवश्यक हो गया था। 'पार्टी कार्यक्रम के संशोधन की सामग्री' में उन्होंने किशोर श्रम संबंधी खंडो की रचना इस प्रकार की थी—

"मालिकों को स्कूली उम्र (१६ से नीचे) के बच्चो को काम पर लगाने की मनाही है; तरुणों (१६ से २० वर्ष तक) के लिए कार्य-दिन चार घंटे तक ही सीमित हो और उनसे रात में अस्वास्थ्यकर दशाओं अथवा खानों में काम न लिया जाय।

" १६ वर्ष से कम के बालक-बालिकाओ के लिए शिक्षा तथा पोलीटेक्निकल प्रशिक्षण (उत्पादन की सभी प्रमुख शाखाओ में सिद्धान्त और व्यवहार)

---

*व्ला० इ० लेनिन, ग्रंथावली, चतुर्थ रूसी संस्करण, खड २, पृष्ठ ४४०-४१।

मुफ्त और अनिवार्य हो। शिक्षा को समाजोपयोगी बाल-श्रम के साथ सबद्ध किया जाय।"*

यहां अन्तिम वाक्य पर विशेष ध्यान देना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि स्कूल के लिए सिर्फ यही जरूरी नहीं है कि वह ज्ञान का प्रसार करे और पोलीटेक्निकल ढग का प्रशिक्षण दे अपितु यह ज्ञान तथा प्रशिक्षण बच्चो और किशोरो के समाजोपयोगी श्रम के साथ सबद्ध हो। इस प्रकार इस श्रम का त्याग नही किया जा रहा है बल्कि इसे सब के लिए अनिवार्य बनाया जा रहा है और इसका सघटन कुछ इस ढग से किया जा रहा है कि वह व्यावसायिक ट्रेनिग और साथ ही टेक्नोलाजी और विज्ञान के चतुर्दिक अध्ययन के साथ सबद्ध हो।

श्रमिको को उद्योगो का प्रबन्ध करना सीखना चाहिए। यह बात १९२० में उस समय विशेष रूप से स्पष्ट हो गई थी जब गृहयुद्ध पीछे पड रहा था और जरूरी आर्थिक कार्यो ने एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया था। मार्च १९२० मे जलयातायात-श्रमिको के तीसरे सम्मेलन मे भाषण करते हुए लेनिन ने कहा था "जो व्यक्ति जीवन का निकट से अनुसरण करता है और जिसे दुनिया के काफी अनुभव है वह यह जानता है कि प्रबन्ध के लिए जरूरी है क्षमता और उत्पादन की समस्त प्रक्रियाओ, उसकी आधुनिक टेक्नोलाजी और वैज्ञानिक शिक्षा के एक निश्चित स्तर का अच्छे से अच्छा ज्ञान।"**

श्रम सबधी प्रश्न प्रमुख प्रश्न बन गये थे। अप्रैल १९२० मे, 'कोमुनिस्तीचेस्की सुब्बोतनिक' नामक एक विशेष समाचारपत्र में इल्यीच

---

* व्ला० इ० लेनिन ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी सस्करण खण्ड २९, पृष्ठ ४३७, ४३५।

** व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली चतुर्थ रूसी सस्करण, खण्ड ३० पृष्ठ ४०१।

ने 'पुरानी व्यवस्था के विध्वस से ले कर नयी व्यवस्था की रचना तक' शीर्षक एक लेख लिख कर साम्यवादी श्रम का अर्थ समझाया था। १ मई को आयोजित अखिल रूसी सुब्बोतनिक के सबध में लिखे गये अपने लेख में लेनिन ने कहा था—

"हमें इस ढग से काम करना चाहिए कि हम 'हर व्यक्ति अपने लिए और ईश्वर सब के लिए' इस सिद्धान्त का और श्रम को बन्धन के रूप में समझने के स्वभाव और इस भावना का उन्मूलन कर सके कि न्यायोचित श्रम केवल वही है जिसमें पारिश्रमिक निश्चित दरो के अनुसार दिया जाता है। हमें जनता के दिमाग में कुछ नियमो को भी बिठाना होगा जैसे 'एक सब के लिए और सब एक के लिए', 'हर एक से उसकी योग्यता के अनुसार, हर एक को उसकी ज़रूरतो के मुताबिक', और ये नियम उनके आचार-व्यवहारो और उनकी प्रथाओ में घुल मिल जाने चाहिए, साथ ही धीरे धीरे किन्तु दृढता के साथ कम्यूनिस्ट अनुशासन और कम्यूनिस्ट श्रम की भी आदत डालनी चाहिए।"*

रूसी तरुण कम्यूनिस्ट लीग की तीसरी अखिल रूसी काग्रेस में २ अक्तूबर, १९२० को लेनिन ने जो भाषण दिया था वह एक अत्यधिक महत्वपूर्ण भाषण है। इल्यीच ने युवको को सम्बोधित किया था। इन युवकों से उन्हे बडी बडी आशाए थी और वह मानते थे कि ये युवक हमारे उद्देश्यो को आगे बढायेंगे। उन्होने यह भाषण बडे ध्यानपूर्वक तैयार किया था। उन्होने बताया था कि हमें युवक को क्या सिखाना चाहिए और अगर वह सचमुच कम्यूनिस्ट युवक के नाम को सार्थक ठहराना चाहता है तो उसे क्या सीखना चाहिए और जो कुछ हमने शुरू किया है उसे पूरा करने के लिए युवक को प्रशिक्षण कैसे देना चाहिए। युवक को

---

*ब्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी सस्करण, खड ३१, पृष्ठ १०३।

कम्यूनिज्म सीखना चाहिए लेकिन ऐसा भी न हो कि जो कुछ कम्यूनिज्म के बारे में लिखा गया है उसे वह बिना समझे-बूझे ही हिफ्ज कर ले। युवकों को चाहिए कि वे इस सारे ज्ञान को एक सुविचारित समष्टि का रूप देना सीखें ताकि वह उनके दैनिक चतुर्दिक कार्यों के लिए एक पथ-प्रदर्शक का काम दे सके। उन्हें मार्क्सवाद का अध्ययन करना चाहिए, मानवसमाज के विकास के उन नियमों का स्पष्टीकरण करने वाले तथ्यों का अध्ययन करना चाहिए जो सामाजिक विकास का रास्ता दिखाते हैं और यथासम्भव अधिक से अधिक गम्भीरता के साथ पूंजीवादी समाज और मध्ययुगीन जीवन का अध्ययन करना चाहिए। उन्हें जानना चाहिए कि पुरानी व्यवस्था में से वह सब कुछ कैसे अलग कर लिया जाय जो कम्यूनिज्म के लिए जरूरी है।

लेनिन ने इस बात पर विशेष रूप से जोर दिया था कि मानव ज्ञान ने जो कुछ सग्रहीत किया है उसे प्राप्त करना युवकों के लिए बड़ा जरूरी है। नयी पीढी को पुरानी पीढी से ज्यादा जानकारी होनी चाहिए क्योंकि पुरानी पीढी का मुख्य कार्य बूर्जवा वर्ग को सत्ताविहीन करना था। आज के युवक को कम्यूनिज्म का निर्माण करना चाहिए और उसके लिए बडे ज्ञान की जरूरत है। इल्यीच ने कहा था कि नयी पीढी को एक ऐसी नयी साम्यवादी नैतिकता का निर्माण करना चाहिए जो निजी हितों को सामाजिक हितों से नीचे का दर्जा दे और लोगों को शिक्षा दे कि वे जागरूक अनुशासित निर्माता तथा सघर्षरत प्राणी बनें। उन्होंने कहा कि युवकों को यह जानना चाहिए कि सघर्ष में मिल जुल कर कैसे काम किया जाय और कैसे अपने सामुदायिक कार्यों को सघटित तथा व्यवस्थित किया जाय। उन्होंने कहा था—

"अगर अध्यापन, प्रशिक्षण और शिक्षण सिर्फ स्कूल तक ही सीमित और जीवन के सत्ता से अलग रहे तो हम उनमें विश्वास न करेंगे हमारे स्कूलों को चाहिए कि वे युवकों को ज्ञान के मूल तत्त्व समझायें

उनमें स्वतत्र रूप से कम्यूनिस्ट विचारो को पैदा करने की योग्यता का विकास करे और उन्हे शिक्षित वनायें। स्कूल पढाई के समय लोगो को इस वात की भी शिक्षा दें कि वे शोपको से उद्धार पाने के लिए चलने वाले सघर्प मे भाग ले।"* और—

"युवक लीग के सदस्य होने के माने है सार्वजनिक हितो के लिए मेहनत और तदर्थ प्रयास करना। कम्यूनिस्ट शिक्षा का अर्थ यही है

"तरुण कम्यूनिस्ट लीग को तूफानी कार्यकर्ताओ के दल के रूप में हर काम में सहायता करना तथा अगुआई और उद्यम का परिचय देना चाहिए . और तरुण कम्यूनिस्ट लीग को चाहिए कि वह अपने शिक्षण, प्रशिक्षण और अध्यापन को श्रमिको और किसानो की मेहनत के साथ सवद्ध करे, न कि अपने को स्कूलो और कम्यूनिस्ट पुस्तके और पैम्फ्लेट पढने तक ही सीमित कर दे। श्रमिको और किसानो के साथ कन्धे से कन्धा मिला कर काम करने से ही मनुप्य सच्चा कम्यूनिस्ट हो मकता है। और हर व्यक्ति को यह दिखा देना चाहिए कि जो लोग युवक लीग के सदस्य है वे पढे-लिखे लोग है और उन्हे काम करने का तरीका मालूम है .हमें चाहिए कि हम सभी प्रकार के श्रम का सघटन करे, भले ही यह काम कितना भी दुप्कर और अरुचिकर क्यो न हो, और सघटन भी इस प्रकार करे कि हर श्रमिक और किसान यही कहे मै स्वाधीन श्रम की एक वडी सेना का अग हू और विना भूपतियो और पूजीपतियो के ही अपने जीवन का निर्माण तथा कम्यूनिस्ट पद्धति की स्थापना कर सकता हूं। तरुण कम्यूनिस्ट लीग को चाहिए कि वह हर व्यक्ति को, थोडी ही उम्र से, जागरूक और अनुशासित श्रम की शिक्षा दे। इस प्रकार हमें विश्वास है कि हमारे सामने जो समस्याए है वे हल हो जायेंगी ..

---

*व्ला० इ० लेनिन, चुने हुए ग्रन्थ, खड २, भाग २, पृष्ठ ४८७।

"और इसलिए जो पीढ़ी अब पन्द्रह साल की हो चुकी है उसे चाहिए कि वह शिक्षा संबंधी अपने सभी कामों को इस ढंग से उठाये कि हर दिन, हर गांव और हर नगर में तरुण लोग सार्वजनिक श्रम की किसी न किसी समस्या के व्यावहारिक समाधान में लगें भले ही वह समस्या छोटी से छोटी या आसान से आसान क्यों न हो। यह काम जिस हद तक हर गांव में हो सकता है, कम्यूनिस्ट स्पर्धा जिस हद तक विकसित हो सकती है, युवक जिस हद तक इस बात का प्रमाण दे सकते हैं कि वे अपने परिश्रम को संघटित कर सकते हैं, उसी हद तक कम्यूनिस्ट निर्माण की सफलता का आश्वासन मिल सकता है।"*

सोवियतों की आठवीं कांग्रेस ने दिसम्बर १९२० में विद्युतकरण की उस योजना की जांच-पड़ताल की थी जो रूस के विद्युतकरण के लिए राज्य कमीशन द्वारा निर्दिष्ट की गई थी। इस कमीशन के सदस्यों में राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था की सर्वोच्च परिषद्, संवहन के जन कमिसेरियत और कृषि के जन कमिसेरियत के सर्वोत्तम कार्यकर्ता और विशेषज्ञ थे। इस योजना के समर्थन में लेनिन का उत्साहपूर्ण भाषण सर्वप्रसिद्ध है। उन्होंने कहा था कि विद्युतकरण की राज्य योजना हमारी पार्टी का दूसरा कार्यक्रम था। हमारे राजनीतिक कार्यक्रम में हमारे लक्ष्यों की गणना है और इसमें वर्गों और जनता के संबंधों को स्पष्ट किया गया है। इस कार्यक्रम की अनुपूर्ति हमारे आर्थिक निर्माण संबंधी कार्यक्रम द्वारा की जाय। लेनिन ने कहा था "बिना अपनी विद्युतकरण योजना की पूर्ति के हम असली निर्माण तक नहीं पहुंच सकते। हम बिना किसी व्यापक आर्थिक योजना के संबंध में बातचीत किये हुए कृषि, उद्योग और यातायात के पुनरुत्थान और उनके एकरूप अन्य संबंधों की पुनर्व्यवस्था के बारे

---

*व्ला० इ० लेनिन चुने हुए ग्रन्थ खंड २ भाग २ पृष्ठ ४८२-८३।

में कुछ नहीं कह सकते। हमें इस योजना को अंगीकार करना चाहिए। स्वाभाविक है कि यह योजना सिर्फ मसौदे के रूप में अंगीकार की जायेगी। पार्टी का यह कार्यक्रम हमारे उस वास्तविक कार्यक्रम की भांति अपरिवर्तनशील नहीं होगा जिसमें रद्दोवदल सिर्फ पार्टी कांग्रेसों में ही हो सकता है। नहीं, यह कार्यक्रम हर रोज, हर कारखाने में और हर ज़िले में व्यापक बनाया जायेगा, पूरा किया जायेगा, समुन्नत बनाया जायेगा और आवश्यकतानुसार बदला जायेगा। हमें इसकी ज़रूरत एक ऐसी कच्ची रूपरेखा के रूप में पड़ेगी जो रूस के देखते देखते एक बडी आर्थिक योजना का रूप ले लेगी, जो कम से कम दस वर्षों में कार्यान्वित होगी और जिससे साफ साफ यह पता चल जायेगा कि रूस किस प्रकार एक ऐसे वास्तविक आर्थिक आधार पर खडा होता है जो कम्यूनिज्म के लिए ज़रूरी है।" *

सोवियतों की आठवीं कांग्रेस में ब्लादीमिर इल्यीच ने कहा था कि "कम्यूनिज्म के माने है सोवियत शासन और देश का विद्युतकरण"। उनका यह वाक्य एक बडा प्रसिद्ध वाक्य है। इससे कुछ कम प्रसिद्ध उनका वह कथन है जिसमें उन्होंने कहा था कि विद्युतकरण की योजना बिना जनता की सहायता के कार्यान्वित नहीं हो सकती और श्रमिकों तथा अधिकांश किसानों के लिए उन कामों की जानकारी प्राप्त करना अनिवार्य है जो देश के सामने है। लेनिन का कहना था कि जनता के सांस्कृतिक स्तर को ऊंचा उठाना आवश्यक है और हर नवनिर्मित बिजलीघर का फर्ज है कि वह "जनता की विद्युत शिक्षा" के लिए उपयोगी सिद्ध हो। विद्युतकरण योजना का संक्षिप्त रूप विशेष पाठ्यपुस्तकों में होना चाहिए और ये पाठ्यपुस्तके हर स्कूल में पढाई जानी चाहिए।

---

* व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी संस्करण, खंड ३१, पृष्ठ ४८२-८३।

सोवियतों की आठवीं कांग्रेस में, लेनिन द्वारा तैयार किये गये विद्युतकरण-रिपोर्ट-संबंधी मसौदे में कहा गया है—

"कांग्रेस सरकार को यह निर्देश और देती है तथा ट्रेड-यूनियनों की अखिल रूसी केन्द्रीय परिषद् और ट्रेड-यूनियनों की अखिल रूसी कांग्रेस से अनुरोध करती है कि वे हर संभव तरीके से योजना का प्रचार करें और नगर और देहातों की अधिक से अधिक जनता को उससे परिचित करायें। जनतंत्र की सभी शिक्षा संस्थाएं योजना के विषय में विद्यार्थियों को पूरी पूरी बातें बतायें। हर बिजलीघर, न्यूनाधिक हर सुसंगठित फैक्ट्री और राजकीय फार्म बिजली, आधुनिक उद्योग और विद्युतकरण योजना को लोकप्रिय बनाये और इसके संबंध में क्रमबद्ध पाठ्यक्रम तैयार करे। विद्युतकरण योजना का प्रचार करने, और उसे समझने के लिए अपेक्षित ज्ञान का प्रसार करने, के निमित्त उन सभी लोगों को संघटित करना चाहिए जिन्हें इस क्षेत्र में पर्याप्त वैज्ञानिक और व्यावहारिक ज्ञान है।"*

इल्यीच 'रूसी सोवियत संघात्मक समाजवादी संघ का विद्युतकरण' शीर्षक पुस्तक से काफी संतुष्ट थे। यह पुस्तक अगले वर्ष इ० इ० स्तेपानोव द्वारा, स्कूलों की पाठ्यपुस्तक के रूप में, लिखी गई थी। लेनिन चाहते थे कि जिले के हर पुस्तकालय में और हर बिजलीघर में इस पुस्तक की कुछ प्रतियां अवश्य पहुंच जाय। उनका कहना था कि हर अध्यापक इस पाठ्यपुस्तक को पढ़े और अध्ययन करे, न सिर्फ पढ़े, अच्छी तरह समझे और पूरी तरह अध्ययन ही करे अपितु अपने विद्यार्थियों को आसानी के साथ और साफ साफ समझा भी सके।

एक वर्ष बाद, 'आर्थिक कार्यों के प्रश्नों का घोषणापत्र' २८ दिसम्बर

---

*व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी संस्करण खंड ३१ पृष्ठ ४९९।

१६२१ को सोवियतो की नवी अखिल रूसी काग्रेस मे अगीकार किया गया था। इसमें लेनिन ने लिखा था–

"नवी काग्रेस का मत है कि नये युग में शिक्षा के जन कमिसेरियत का कर्तव्य है कि वह यथासंभव कम से कम समय में किसानो और श्रमिको में से, सभी प्रकार के विशेपज्ञो को प्रशिक्षण दे। कांग्रेस का मुझाव है कि स्कूलो में होने वाले कार्यो और उसके वाहर होने वाले शिक्षा संवधी कार्यो और जनतत्रीय एव जिला और स्थानीय रूप से किये जाने वाले आवश्यक आर्थिक कामो के वीच, और भी अधिक निकट का सवध स्थापित किया जाय।"*

जिस समय सोवियतो की आठवी काग्रेस हो रही थी उस समय पार्टी ने शिक्षा सवधी विपयो पर एक सम्मेलन का आयोजन किया जिसमें १३४ ऐसे प्रतिनिधियो ने, जिन्हे निर्णायक वोट देने का अधिकार था और २६ ऐसे प्रतिनिधियो ने भाग लिया था जिन्हे यह अधिकार प्राप्त न था। देश के समक्ष समाजवादी निर्माण के जो काम थे उनका ध्यान रखते हुए समस्त कार्यो का पुनस्सघटन करना जरूरी था। स्कूलो को वास्तविक रूप से पोलीटेक्निकल वनाना और उत्पादन के साथ उनका निकट का सवध स्थापित करना अनिवार्य था। पोलीटेक्निकल शिक्षा के सिद्धान्तो के अनुसार वाल श्रम एवं किशोर श्रम की व्यवस्था करना तथा वढती हुई पीढी को मानसिक और शारीरिक दोनो ही प्रकार के कार्यो की शिक्षा देना आवश्यक था। फिर नये नये कार्यक्रमो को भी तैयार करना अपेक्षित था। इस पार्टी सम्मेलन से व्लादीमिर इल्यीच को वडा असंतोप रहा। असतोप का कारण था पोलीटेक्निकल ट्रेनिंग के प्रश्नो का ठीक तरह से न उठाया जाना और पोलीटेक्निकल शिक्षा ज़रूरी है या नही इस संवध

---

*व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी सस्करण, खंड ३२, पृष्ठ १५५।

में रखे जाने वाले तर्क—विशेष रूप से उस समय जब इस प्रश्न पर पार्टी ने निश्चित फैसला कर लिया था। पोलीटेक्निकल शिक्षा एक नयी चीज थी। 'शिक्षा के जन कमिसेरियत के काम' में लेनिन ने लिखा था "इस काम के संबंध में पूरा ज़ोर दिया जाना चाहिए 'व्यावहारिक अनुभव के हिसाब और जाँच-पड़ताल' पर, और 'इस अनुभव के क्रमबद्ध उपयोग' पर।"*

"पार्टी के कार्यकर्ताओं के सम्मेलन को उन विशेषज्ञों और अध्यापकों की राय भी सुननी चाहिए थी जिन्होंने लगभग दस वर्षों तक व्यावहारिक काम किया था। ये लोग हमें यह बता सकते हैं कि अमुक क्षेत्र में, उदाहरणार्थ, व्यावसायिक शिक्षा के क्षेत्र में, क्या क्या किया जा चुका है अथवा क्या क्या किया जा रहा है। वे हमें बता सकते हैं कि सोवियत राज्य यह काम कैसे कर रहा है और इस क्षेत्र में उसे कौन कौनसी सफलताएं मिल चुकी हैं (सफलताएं तो शायद मिली हैं यद्यपि उनकी संख्या कम है)। वे हमें इन सफलताओं का ब्यौरा भी दे सकते हैं और मुख्य दोषों तथा उन्हें दूर करने के तरीकों के संबंध में ठोस जानकारी भी।"**

यह बात ७ फरवरी १९२१ को अर्थात् 'शिक्षा के जन कमिसेरियत के कम्यूनिस्ट कार्यकर्ताओं को केन्द्रीय कमेटी के आदेश' प्रकाशित होने के दो दिन बाद की है। आदेशों ने वही बातें कही थीं—शिक्षा के जन कमिसेरियत के काम को समुन्नत बनाने की आवश्यकता, स्कूलों में पोलीटेक्निकल शिक्षा की जरूरत, व्यावसायिक-टेक्निकल ट्रेनिंग को पोलीटेक्निकल ज्ञान के साथ संबद्ध करने की अपरिहार्यता। इनके अलावा उन्होंने इस बात पर भी जोर दिया था कि कालेजियम और जन कमिसार

---

*व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी संस्करण, खंड ३२ पृष्ठ १०२।

**वही, पृष्ठ १०३।

को चाहिए कि वे बुनियादी ढंग की शिक्षा सस्थाओ के लिए पाठ्यक्रम, और, तत्पश्चात्, भाषण, कोर्स, वाचन, वार्ता और व्यावहारिक अध्ययन की व्यवस्था और अनुमोदन करें। उन्होने कहा था कि फैक्ट्रियो और कृषि सस्थाओ आदि में व्यावसायिक-टेक्निकल और पोलीटेक्निकल ट्रेनिग देने के लिए टेक्नोलाजी और कृषिक्षेत्रो में समस्त विशेषज्ञो का संगठन करने की ज़रूरत है।

युवको को समाजवादी सघर्ष के लिए तैयार करने के निमित्त सामान्य और पोलिटेक्निकल दोनो ही प्रकार की शिक्षा की आवश्यकता है। लेनिन ने उस समाजवाद की कल्पना तक न की थी जो, बिना किसी प्रकार के सघर्ष के, ऊपर से 'थोपा' जा सकता है। उन्होने कहा था कि ज़िन्दा समाजवाद सर्वसाधारण की रचना है और संघटन समाजवादी निर्माण की रीढ। समाजवाद एक बिल्कुल नयी प्रणाली है जो दीर्घकालीन सघर्ष के दौरान में पनपी है। इस प्रणाली के निर्माण के लिए विशद ज्ञान की ज़रूरत है।

४ दिसम्बर १६२२ को व्ला० इ० लेनिन ने कम्यूनिस्ट युवक अन्ताराष्ट्रीय संघ को लिखा था कि युवको को व्यापारिक ढग से प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।

किसलिए प्रशिक्षित किया जाना चाहिए? इस प्रश्न का उत्तर रूसी तरुण कम्यूनिस्ट लीग की पांचवी कांग्रेस के प्रति लेनिन की शुभकामना में मिलता है। यह कांग्रेस तरुण कम्यूनिस्ट अन्ताराष्ट्रीय संघ की कांग्रेस से दो महीने पहले हुई थी। लेनिन ने लिखा था. "मुझे विश्वास है कि जब विश्व क्रान्ति के आगामी चरण का प्रादुर्भाव होगा तब उसका सामना करने के लिए युवक बडी सफलता के साथ अपना विकास कर सकेगा।"*

---

*व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी सस्करण, खंड ३३, पृष्ठ ३३७।

तरुण कम्यूनिस्ट लीग की क्रियाशीलता का सब से महत्वपूर्ण अंग

('यूनी कोमुनीस्त' पत्रिका, अक ८, १९३५)

तरुण कम्यूनिस्ट लीग के समक्ष जितने भी कार्य है उनमे एक सब से महत्वपूर्ण कार्य है महिलोद्धार। यह एक ऐसा उद्देश्य है जिसे हमारी कम्यूनिस्ट पार्टी बराबर आगे बढाती रही है।

इस क्षेत्र में, अर्थात् स्त्रियो को जागरूक बनाने में, हमने कितनी अधिक प्रगति की है उसे दुहराने की यहा कोई आवश्यकता नही। इसके बारे में बहुत कुछ लिखा और कहा जा चुका है।

इस लेख में मैं तरुण कम्यूनिस्ट लीग के कुछ ठोस कार्यो, और विशेष रूप से उसकी महिला सदस्याओ के कार्यों के बारे में कुछ कहना चाहूगी।

यह नही भूलना चाहिए कि तरुण कम्यूनिस्ट लीग के कार्यकर्ताओ का फर्ज है कि वे शहरो और देहातो में युवा महिलाओ का नेतृत्व करे। लीग में ऐसी ऐसी युवा महिलाए है जिनके गुणो को देख कर आश्चर्य होता है परन्तु यदि हम समस्त युवा महिलाओ की दशाओ पर एक दृष्टि डाले तो हम देखेंगे कि वे अभी तक अतीत के अवशेषो से ही प्रभावित है। और यहा, प्रतिदिन, व्याख्यात्मक और सघटनात्मक कार्यो का सम्पन्न किया जाना जरूरी है। देखने में तो यह कार्य साधारण लगता है परन्तु करने के लिए बडे सयम और लगन की आवश्यकता है, किन्तु यह अपरिहार्य है, और तरुण कम्यूनिस्ट लीग का कर्तव्य है कि वह इस काम को निरन्तर करती रहे।

अतीत के अवशेषो में से एक है महिलाओ का सास्कृतिक दृष्टि से पिछडा हुआ होना और यह कमी युवा और वृद्धा सभी महिलाओ के कामो और उनकी सामाजिक क्रियाशीलता मे बाधक बनती है। वे ठीक ठीक

पढ-लिख नही सकती क्योकि वे घर-गृहस्थी के झंझटो और वच्चो की देख-रेख में ही वुरी तरह फंसी रहती हैं। पुराने जमाने मे लडकियो को स्कूल नही भेजा जाता था क्योकि घर के कामो मे मदद करने और वच्चो को सभालने के लिए उनकी घर पर ही जरूरत रहा करती थी। हमारे सार्वभौम अनिवार्य शिक्षा कानून ने एक वहुत वडा एव महत्वपूर्ण कार्य किया है। अव माता-पिताओ के लिए अपने वच्चो को स्कूल भेजना अनिवार्य है। लेकिन फिर भी, हमे यह देखना पड़ता है कि इस कानून का सम्यक् ढग से पालन हो, माता-पिता अनेक 'उचित' कारणो से लडकियो को घरो में न रखे, जो काम उन्हे घरो मे दिया जाता है वह उनके अध्ययन आदि में वाधक न वने। यह भी समझ रखना चाहिए कि पाठशाला-इतर और सामाजिक क्रिया-कलाप लडकियो के लिए स्कूली कामो की तरह ही जरूरी है।

परन्तु यहा प्रश्न लडकियो का ही नही है—वे अपनी वड़ी वहनो की अपेक्षा कही अच्छी दशाओ मे रहती हैं। हमारा भी कर्तव्य है कि हम इन लडकियो के पढने-लिखने के अधिकार को सुरक्षित रखें और यह देखें कि वे—खास तौर से कुछ राष्ट्रीय क्षेत्रो और जनतंत्रो में—वरावर स्कूल जाती रहे। इस क्षेत्र में क्रमवद्ध सार्वजनिक नियंत्रण का होना भी वहुत आवश्यक है।

जहा तक युवा महिलाओ का, विशेष रूप से देहातो में, संवध है, शिक्षा का प्रश्न वहुत महत्वपूर्ण है। तरुण कम्यूनिस्ट लीग और सामान्यतया युवको को इस संवंध में ध्यान देना चाहिए। सास्कृतिक रूप मे पिछडे रहने के कारण युवा महिलाओ की उन्नति में वाधा पड़ती है। अत मुख्य कार्य है उनकी निरक्षरता को दूर करना। लेकिन केवल साक्षरता से हमें सतोष नही। सोवियत देश में आर्थिक और सामाजिक उन्नति के वर्तमान चरण मे श्रमिक जनता के लिए यह आवश्यक है कि वह उस स्तर का ज्ञान जरूर प्राप्त कर ले जिसकी सहायता से वह उत्पादनशील श्रम, लाभकर

सामाजिक क्रियाशीलता और समाजवादी निर्माण के लिए अनिवार्य योग्यता प्राप्त करे। समाजवादी निर्माण के प्रत्येक क्षेत्र में काम करने वाले हर व्यक्ति को चाहिए कि वह आधुनिक विज्ञान और टेक्नोलाजी का एक निश्चित और अपेक्षाकृत उच्च ज्ञान प्राप्त करे। श्रम, विज्ञान और टेक्नोलाजी में जितनी ही अधिक उन्नति होती जाय चतुर्दिक ज्ञान का स्तर भी उतना ही अधिक उच्च हो।

समाजवादी निर्माण के लिए अपेक्षित है करोडो श्रमिको का सक्रिय रूप में भाग लेना और, सामूहिक रूप से, उनका सामाजिक कार्यों में जुटना। और यदि इस काम को ठीक ठीक सम्पन्न करना है तो यह जरूरी है कि लोग एक निश्चित सास्कृतिक स्तर की योग्यता प्राप्त करे।

हमारी लडकिया इल्यीच के इन शब्दो को अच्छी तरह जानती है "रसोई में काम करने वाली हर महिला को देश का शासन करने के योग्य बनना चाहिए।" लेकिन ऐसा करने के लिए जरूरत है अध्ययन की अधिकाधिक जानकारी की।

उदाहरणार्थ, सोवियतो की क्रियाशीलता ही को ले लीजिये। आम तौर पर युवा नर-नारी सोवियतो के कार्यों मे बहुत कम भाग लेते हैं। वे उनकी शाखाओ के कार्यों में अधिक दिलचस्पी नही दिखाते और प्रतिनिधियो की सहायता नही करते। हमें इस मनोवृत्ति को बदलना होगा। लेनिन ने सोवियतो की शाखाओ के काम के महत्व पर बहुत अधिक जोर दिया था। उनका कहना था कि युवको को चाहिए कि वे सोवियतो की हर तरह से मदद करे। वे इस कार्य को शासन-विद्यालय की तरह समझते थे।

हमें सोवियतो द्वारा ही असभ्यता के विरुद्ध मोर्चा लेना चाहिए क्योकि हमारी युवा महिलाओ पर उसका विशेष रूप से दूषित प्रभाव पडता है। इसे दूर करने के लिए जरूरी है ज्ञान और इस क्षेत्र के बारे की जानकारी। बिना इसके असभ्यता के विरुद्ध किया जाने वाला सघर्ष निश्चित

ही सकीर्ण वन कर रह जायेगा और काहिलो तथा व्यापारियो की पुरानी सभ्यता का रूप ले लेगा।

आज के सव से ज्वलत प्रश्नो में से एक है परिवार का प्रश्न, शिक्षा तथा सामाजिक और पारिवारिक शिक्षा के परस्पर समन्वय का प्रश्न। किन्तु तरुणो की पीढी की कम्यूनिस्ट-शिक्षा माता-पिता की सस्कृति पर, उनके शैक्षणिक स्तर पर भी निर्भर है।

जहा कही भी निगाह जाती है वस एक ही चीज़ दिखाई देती है— समाजवादी निर्माण के लिए ज़रूरी है कि सभी श्रमिको को एक निश्चित स्तर का ज्ञान अवश्य हो। अर्द्ध-साक्षरता शव्द का अर्थ भी व्यापक वन जाता है। जिस व्यक्ति को भूगोल की या मानव-विकास के प्रधान चरणो की जरा भी जानकारी नही है, जो प्राकृतिक तत्वो और अपने चारो ओर होने वाली घटनाओ को नही समझता, जो काम की तथा रहन-सहन की दशाओ में परिवर्तन लाने के लिए विज्ञान का उपयोग करना नही जानता अथवा यह नही जानता कि अपेक्षित ज्ञान कहा से प्राप्त हो सकता है, वह अर्द्ध-साक्षर है।

तरुण कम्यूनिस्ट लीग को ऐसे सारे कार्य सम्पन्न करने चाहिए जिनके कारण युवक और प्रौढ़ स्कूलो का विस्तार हो सकता हो। उसे यह देखना चाहिए कि हर युवक स्कूल जाय। उसे उन युवको की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए जो अभी तक या तो निरक्षर है या अर्द्ध-साक्षर। हमारे युवको, खास कर लड़कियो और युवक सामूहिक किसानो को, सप्तवर्षीय शिक्षा मिलनी चाहिए। यह कार्य वडा है और गम्भीर भी। युवको को चाहिए कि वे आवश्यक स्कूलो की सख्या वढाने के लिए सघर्परत रहे। उन तरुणो की शिक्षा के संवध में विशेप ध्यान दिया जाना चाहिए जिन्होंने किसी न किसी कारणवश वहुत देर से स्कूल जाना शुरू किया है। मतलव यह कि पिछडे हुए वच्चो की शिक्षा का खास ख्याल रखा जाय। लडकियो में ऐसे वच्चो की वहुतायत है। यह कार्य वहुत महत्वपूर्ण है परन्तु इसकी

व्यवस्था काफी अच्छी नहीं है और सभी पिछड़े हुए बच्चे इससे लाभ नहीं उठा पाते।

स्वाध्याय का विशेष महत्व है। इसके लिए पुस्तकालयों की जरूरत है और पुस्तकालय अधिक हैं नहीं। फिर भी उन्हें सारी जनसंख्या की सेवा करनी पड़ती है। सम्प्रति यह देखने के लिए कि सर्वोत्तम रूप से संघटित पुस्तकालय किन किन गांवों या ग्राम्य ज़िलों में हैं, गांवों और ग्राम्य ज़िलों में पुस्तकालयों के लिए एक प्रतिस्पर्द्धा चल रही है। इस प्रतिस्पर्द्धा में तरुण कम्यूनिस्ट लीग के सदस्यों, खास कर लड़कियों, को भाग लेना चाहिए।

शिक्षा के लिए अपेक्षित दशाएं (शहरों और देहातों में युवकों और प्रौढ़ों के स्कूलों का विस्तार, पुस्तकालयों की संख्या में वृद्धि, स्वाध्याय के लिए सहायता की व्यवस्था आदि) पैदा करने के अलावा हमें इस बात के भी प्रयत्न करने चाहिए कि ट्रेड-यूनियनें श्रमिक महिलाओं के शिक्षा पाने के अधिकारों की सुरक्षा करें। उदाहरणार्थ, नौकरानियों की ट्रेड-यूनियन ले लीजिये। इसने मालिकों के साथ होने वाले करार में अध्ययन के लिए कुछ घंटे निश्चित करने के संबंध में क्या किया है? क्या कोई इसपर निगरानी या नियंत्रण रख रहा है? कोई इसकी देखरेख कर रहा है? क्या उन मालिकों पर कोई जुर्माना किया जाता है जो अपनी नौकरानियों को पढ़ने की सुविधा नहीं देते? छोटे पैमाने के उद्योगों में काम करने वाली लड़कियों के लिए अध्ययन करने के अधिकारों की सुरक्षा के लिए क्या किया जा रहा है? आदि आदि। इस क्षेत्र में अभी बहुत कुछ करना शेष है।

सोवियत संघ में विकास के वर्तमान चरण में ट्रेड-यूनियन के कार्यों को जनता के सांस्कृतिक स्तर के उत्थान, उनके रहन-सहन की दशाओं में सुधार और उनके जीवन का पुनर्निर्माण करने के लिए सम्पन्न किया जाना चाहिए। इस क्षेत्र में युवा महिलाएं काफी रुचि ले रही हैं। उन्

चाहिए कि वे इस काम को पूरी लगन के साथ करे और ट्रेड-यूनियन के कार्यो में अधिक से अधिक भाग ले।

हम जिस नये जीवन का निर्माण कर रहे है उसके लिए सास्कृतिक क्रान्ति को व्यापक वनाने की जरूरत है। जीवन का यह भी तकाज़ा है कि हम पति और पत्नी, माता-पिता और वच्चो के वीच के पारिवारिक सवंधो तथा नयी पीढ़ी के पालन-पोषण जैसे महत्वपूर्ण प्रश्नो को हल करे। ये ऐसे प्रश्न है जो युवको के मस्तिष्को को आन्दोलित करते रहते है। वे सिर्फ साम्यवादी सासारिक दृष्टिकोण के आधार पर ही हल किये जा सकते है और तभी जव मनुष्य साम्यवादी नैतिकता के मूलभूत सिद्धान्तो के अनुसार काम करता है। सम्प्रति जो क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए है उन्हे देखते हुए हम कह सकते है कि हम वहुत से प्रश्नो को एक नये ढग पर, हल करते है। इस ढग का प्रयोग हम पुराने ज़माने में नही कर सकते थे। यहा लोगो को नये नये रास्ते निकालने चाहिए। यहा वड़ी वड़ी गम्भीर कठिनाइयां है जिनमें से मुख्य यह है कि प्राय पुराने मत नये नये छद्मवेशो में पहने रहते है। हमे चाहिए कि हम परिवार और पालन-पोपण के सवंध में कूपमडूको जैसे विचारो और कूपमडूको की नैतिकता से सावधान रहे।

हमें चाहिए कि अपने अतीत को याद करे। पचहत्तर वर्प पहले हमारे यहा भूदासत्व की प्रथा थी। ज़मीदार अपने भूदासो के स्वामी थे, उन्हे वेच सकते थे और "आर्थिक कारणो से" उनका विवाह कर सकते थे। पारिवारिक जीवन का आधार था गुलामी के कानून—वच्चे मा-वाप की सम्पत्ति थे, पत्नी पति की जायदाद थी। पारस्परिक प्रेम अथवा सहानुभूति जैसी कोई चीज़ न थी। गोर्की ने कृषक परिवार के जीवन की विभीपिकाओ का शायद सर्वोत्तम चित्रण किया है। अपनी एक कहानी में उन्होंने लिखा है कि ७५ वर्ष पूर्व खेरसन गुवेर्निया में स्थित कन्दीवा ग्राम के निवासी एक किसान को अपनी पत्नी पर अत्याचार करते हुए चुपचाप देखते भर रहे थे। यह उस समय की नैतिकता थी।

१८६०-७० में भूदासत्व की प्रथा समाप्त कर दी गई और उनका स्थान पूंजीवादी व्यवस्था ने ले लिया। लेकिन महिलाओं के प्रति लोगों के रुख को बदलने में बहुत समय लगा।

पूंजीवादी व्यवस्था के अधीन अनिवार्य किस्म का विवाह कम प्रचलित है। वह तो रोजगार की वस्तु बना रहता है। 'सुविधा वाले विवाह' पनपते रहते है—एक धनी व्यक्ति अथवा धनी स्त्री के साथ, किसी पदधारी पुरुष अथवा किसी मंत्री की लडकी के साथ विवाह करने में फायदे रहते है। कभी कभी इन सौदो के पीछे धन की इच्छा कम रहती है, फिर भी ये होते हैं सौदे ही. गृहिणी की अथवा जीविकोपार्जक की प्राप्ति इत्यादि इत्यादि।

यह बिल्कुल स्वाभाविक है कि इस प्रकार के व्यापारी ढग के सौदे वाले तथा सुविधा वाले विवाह का परिणाम यह होता है कि पति और पत्नी के बीच झूठे और कुटिल सबध स्थापित हो जाते है जिसका नतीजा यह होता है कि एक दूसरे के बीच अविश्वास और छल-कपट की भावनाए पैदा हो जाती है। सुविधा के विवाह के पहले प्राय प्रेम व्यापार देखने को मिलता है। इन व्यवस्थाओ पर आधारित पारिवारिक जीवन सुखद नही होता। कभी कभी पति और पत्नी "एक दूसरे के अन्यन्न हो जाते है" परन्तु अधिकाश मामलों में उनके अवैध व्यवहार बराबर चलते रहते है। पुरुष वेश्याओ के पास जाते है जो गरीबी के कारण अपने शरीर बेचती है। सुविधा वाले विवाहो में छल-कपट, निष्ठाहीनता, असभ्यता और व्यभिचार का निश्चित रूप से बोलबाला रहता है। इस क्षेत्र मे सब से ज्यादा हानि होती है स्वभावतया स्त्रियो को।

'व्यापारिक ढग के' विवाहो की नकारात्मक विशेषताए खास तौर पर मामूली बूर्जवाओ के समाज में देखने को मिलती है।

मार्क्स और एगेल्स ने लिखा था कि नये वैवाहिक सबध केवल सर्वहारा वर्ग द्वारा ही सुखद बनाये जा सकते है। ऐसी दशा में विवाह सुविधा के लिए नही होगा अपितु उनका आधार होगा—परस्पर आकर्षण,

प्रेम, विश्वास और मत की एकता। सोवियत कानून ने स्त्री को वैवाहिक सवधो के पुराने एव असह्य स्वरूपों से मुक्त कर दिया है।

लेकिन अतीत के कई अवशेष अब भी मिलते हैं। हर जगह छोटे छोटे वूर्जवाओ की मन प्रवृत्ति नयी दशाओ में वदली हुई, छद्मवेश धारण करती हुई और अपने को अनुकूलित करती हुई दिखाई पडती है।

यह विचार आज भी पनप रहा है कि स्त्री एक 'खिलौना' है। कोर्टशिप, व्यभिचार, स्त्रियो के प्रति गैर-जिम्मेदाराना रुख ये सारी बाते अब भी तरुण कम्यूनिस्ट लीग के सदस्यो तक में पाई जाती है। "कुछ मनोरजन कर लेना अच्छा है परन्तु विवाह के लिए जल्दी ठीक नही।" और यदि लडकी गर्भवती हो जाय तो यही लोग कहते है. "तो इससे क्या? वह गर्भ गिरवा सकती है।" यह स्त्रियो के प्रति पुरानी धारणा है, जिसके अनुसार स्त्री को मनुष्य नही, खिलौना समझा जाता था।

प्राय. इस वूर्जवा जैसे व्यवहार का श्रमिको पर कुप्रभाव पडता है। लोग पुरानी निर्धनता और परिवार के उन पुराने सवधो की रूक्षता से वचना चाहते है जिनपर दासत्व की छाप अब तक देखी जा सकती है। वे अधिक जागरूक नही रहते और उस सकीर्णता की ओर भी ध्यान नही देते जिससे निरतर मोर्चा लेते रहना जरूरी है।

जिस समय देहातो के सामाजिक जीवन से विच्छिन्न छोटी छोटी वैयक्तिक अर्थ-व्यवस्थाए प्रचलित थी, उस समय अतीत के अवशेष वने रहे और उन्हे नष्ट होने में काफ़ी समय लगा। कृषि के समूहीकरण और श्रम के पुनस्सघटन के फलस्वरूप नारी को स्वतत्रता मिली और सामूहिक कृषक के रूप में काम करने वाली नारी ने शक्ति का रूप ग्रहण किया। फलत. नीति-नियमो में, नर-नारी के संवधो में और पारिवारिक सवधो में वडे वडे परिवर्तन देखने को मिले।

सम्प्रति हमारे देश में समाजवादी निर्माण पूरी गति से चल रहा है, हर घंटे श्रमिक जनता की जागरूकता में वृद्धि हो रही है; पार्टी, तरुण

कम्यूनिस्ट लीग, ट्रेड-यूनियनें और सोवियतें अपना ध्यान जनता के सास्कृतिक उत्थान की ओर दे रही है। समस्त जीवन का नवनिर्माण करने के लिए भौतिक दशाओ का निर्माण किया जा रहा है (नये नये मकान, ढेरो सार्वजनिक खान-पान-घर, शिशु-गृहो, किडरगार्टनो, क्लबो, पार्को इत्यादि की बढती हुई सख्या)। हम तो यह भी कह सकते है कि इन नये जीवन के लिए एक नयी पोशाक बनाई जा रही है। ऐसी दशाओ में पारस्परिक विश्वास, विचारो के सवहन, अनुरूपता और उस स्वाभाविक आकर्षण के आधार पर, जो बढ कर असीम प्रेम का रूप ले लेता है, पारिवारिक सबधो के नये स्वरूप निश्चय ही दिन प्रतिदिन सुदृढ बनेंगे।

अन्त में मै बच्चो के पालन-पोषण के बारे में कुछ कहूगी।

नारी या तो मा है या होने वाली मा। उसमें मातृत्व की जन्मजात प्रवृत्तिया बडी सुदृढ होती है। ये प्रवृत्तिया एक बडी शक्ति है और मा को आनन्द से भर देने में पूर्णत समर्थ।

हम माताओ की इज्जत करते है। मा एक जन्मजात शिक्षिका है। वह बच्चो पर और खास तौर से नन्हे-मुन्नो पर बडा गहरा प्रभाव डालती है। हम अच्छी तरह जानते है कि बच्चे को आरम्भिक वर्षो में जो लालन-पालन मिलता है वह बडे होने पर उसके चरित्र को कितना अधिक प्रभावित करता है। अतएव महत्वपूर्ण बात यह है कि बच्चे का पालन-पोषण किस ढग से हो।

किसी लडकी को ले लीजिये। उसका पालन-पोषण कई प्रकार से हो सकता है—गुलाम के रूप में, मामूली बूर्जवा व्यक्तिवादी के रूप में जिसे अपने इर्द-गिर्द के जीवन में कोई भी रुचि नही किन्तु जिसे रुचि है अपनी बातो में, अपने मामलो में, सामूहिक व्यक्ति के रूप में, समाजवाद के सक्रिय निर्माता के रूप में, ऐसे व्यक्ति के रूप में जिसे सामूहिक श्रम से बडे बडे उद्देश्यो के लिए लडने वाले सघर्ष में आनन्द आता है, कम्युनिस्ट के रूप में।

ये सारी बाते स्वयं माता पर और उसके विचारो पर निर्भर है

हमारे किंडरगार्टनो और स्कूलो को उन आदर्श सस्थाओ के रूप में कार्य करना चाहिए जो इस बात का परिचय दे सके कि नये मनुष्य और समाजवाद के निर्माता के रूप में बच्चो का पालन-पोषण कैसे हो। किंडरगार्टन और स्कूलो तथा उन परिवारो में, जहा माताए समाजवाद की भक्त है, बच्चो के पालन-पोषण के परिणामस्वरूप एक अद्भुत पीढी का जन्म होगा। लीग की महिला सदस्यो और सामान्यतया तरुण कम्यूनिस्ट लीग को इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए।

स्कूल और पोलीटेक्निकल शिक्षा

स्कूलों में लेनिन और लेनिनवाद का अध्ययन

('प्राव्दा', २१ मार्च, १९२५)

क्या स्कूलों में लेनिन का अध्ययन किया जाना चाहिए? बेशक। लेनिन का हमारे 'बीते हुए कल', 'आज' तथा 'आने वाले कल' से, सुखद भविष्य के लिए हमारे संघर्षों से और सर्वसाधारण के संघर्षों से इतना घनिष्ठ संबंध है कि वे हमारे ही जीवन के एक अंग बन गये हैं। ऐसी दशा में अगर हमारे स्कूली बच्चों को यह न मालूम हो सका कि वे कैसे रहते थे, क्या करते थे तो निश्चय ही यह एक बड़ी अद्भुत और अग्राह्य-सी बात होगी।

परन्तु क्या उनके संबंध में वैसा ही अध्ययन होना चाहिए जैसा कि प्रायः किया जाता है? नहीं।

कुछ लोग पूरी निष्ठा के साथ ऐसा कहते हैं कि उन बच्चों को भी लेनिनवाद की शिक्षा मिलनी चाहिए जिन्होंने अभी स्कूल जाना आरम्भ ही नहीं किया। लेकिन चूंकि यह सामान्य बुद्धि में जमने वाली बात नहीं है, अतएव इस बात के प्रयास किये जा रहे हैं कि लेनिन को छोटे छोटे बच्चों के लिए अलग से अनुकूलित किया जाय। उनका चित्रण एक ऐसे सदय पितामह के रूप में किया जाता है जो अपने बच्चों की पीठ ठोकता हुआ उन्हें अच्छे बनने के लिए उत्साहित करता है। कभी कभी उन्हें ऐसी बालिकाओं से घिरा हुआ भी चित्रित किया जाता है जो उन्हें फूलों के गुच्छे भेंट करती हैं। इस प्रकार बच्चे समझने लगते हैं कि लेनिन [illegible]

स्वभाव वाला उदारवादी साधारण वूर्जवा था। उसके चित्र वच्चो द्वारा तैयार किये गये चौखटो में जड़े जाते हैं, उनपर फूल मालाएं पहनाई जाती हैं और वे साधारण वूर्जवा नैतिकता के एक प्रतीक वन जाते है. "तुम्हारा पतलून फटा है, इस चित्र में लेनिन को देखो कितने साफ-सुथरे है, तुम उन जैसा वनना चाहते हो न, चाहते हो न?" इत्यादि, इत्यादि।

ऐसी ऊल-जलूल वाते कहने से तो यही अच्छा है कि लेनिन के वारे में कुछ न कहा जाय। मैं जानती हू कि ऐसी वाते प्राय. सद्भावना के साथ कही जाती हैं, लेकिन इससे वच्चों को, वडे होकर, यह समझने में कठिनाई होगी कि लेनिन सचमुच कैसे थे।

यही वात प्रारम्भिक स्कूल के वच्चो पर भी लागू होती है। हा, इतना और वढा दिया जाता है कि लेनिन को अच्छे अक मिलते थे और वच्चो के लिए उनका आदेश था—पढो, पढो और पढो। कहा जाता है कि वच्चे सिर्फ लेनिन के वचपन में ही दिलचस्पी लेते हैं और सामान्यत यह वचपन वहुत कुछ 'शिक्षणशास्त्रीय' रंगो से चित्रित किया जाता है

जो वच्चे कुछ सयाने होते हैं उनसे कहा जाता है कि वे "लेनिनवाद का अध्ययन करे" और "लेनिन के आदेशो को पूरा करे।" लेनिनवाद क्या है और उसका उन्हे क्यो अध्ययन करना चाहिए इसे वच्चे नही समझते। उनके लिए लेनिनवाद एक खाली किन्तु गूजता हुआ शब्द है। उन्हे यह भी पता नही कि लेनिन के आदेश क्या है और उनका मतलव क्या है। वे तो यही समझते है कि यह आदेश सदाचरण सवंधी कोई नियम होगें।

वड़ी कक्षाओ में लेनिनवाद की शिक्षा 'उचित ढग' से दी जाती है। एक योजना के अनुसार वच्चे लेनिन के संघर्षपूर्ण भौतिकवाद और साम्राज्यवाद-विरोधी संघर्ष के लिए किये जाने वाले तात्कालिक कार्यों के सवंध में उद्धरण पढ़ते है और मूल विपयो का निर्वाचन करते है, आदि, आदि।

फिर 'लेनिन मण्डल' भी है जिनमें 'दस्तकारियो' का विशेष स्थान रहता है। इन मण्डलो के सदस्य चित्रकारी, कसीदाकारी और नक्काशी करते है। मण्डलो के सचालको का कहना है कि "लोग लेनिन से सबधित हर चीज़ की ओर आकृष्ट हो और उसपर उनकी नजर दूर से ही पड जाय"। लेकिन मण्डल पुस्तकालय हो, उद्धरणो की प्रदर्शनी हो या सग्रहालय हो इस सबध में बराबर तर्क चला करते है।

जिस लेनिन ने किसानो और मजदूरो की भलाई के लिए चलने वाले सघर्ष में अपना तन-मन-धन लगा दिया था, जिस लेनिन ने हर मजदूर और किसान नर-नारी, हर निपढ और दलित व्यक्ति के दुखो और उसकी गरीबी को दूर करने के लिए सब कुछ किया था—स्कूलो में बच्चो को उसी महामानव का वास्तविक ज्ञान यदा-कदा ही कराया जाता है। बच्चे उस लेनिन के बारे में प्राय कुछ भी नही जानते जो बराबर श्रमिक जनता के उद्धार के बारे में ही सोचता रहा, जिसने जनता को संघटित करने, उसमे जिन्दगी फूकने और सघर्ष के समय उसका नेतृत्व करने के लिए सभी सम्भव उपाय किये। ये बच्चे विचारक, सघटनकर्ता अथवा नेता लेनिन के बारे मे प्राय कुछ भी नही जानते।

बच्चो के लिए लेनिन का जो जीवनवृत्त लिखा गया है वह निष्प्राण है।

बच्चो को उस जीवन्त लेनिन का ज्ञान कराया जाना चाहिए जिसने अथक परिश्रम किया है, जिसने सघर्ष के समय कभी घुटने नही टेके, जो दुनिया के सर्वहारा वर्ग का और किसान-मजदूरो का नेता है।

जो लोग जनता को समझते है, जो उनके सुख-दुख में भाग लेते है, जो उन्हे सघटित करने और उनमे जागरूकता पैदा करने के लिए परिश्रम करते है—मै समझती हू वही लोग बच्चो को लेनिन के बारे मे जरूरी और महत्व की बाते बता सकते है।

ऐसे लोग निश्चय ही हमारे बीच मौजूद हैं।

हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि स्कूल बच्चो का लेनिन विषयक ज्ञान बढ़ाने में सहायक बने न कि बाधक।

व्यावसायिक तथा पोलीटेक्निकल शिक्षा में अन्तर

('हमारे बच्चे' पत्रिका, अंक ५, १६३०)

व्यावसायिक तथा पोलीटेक्निकल शिक्षा में क्या अन्तर है इसे सर्वोत्तम ढग से एक उदाहरण द्वारा समझाया जा सकता है। हम सूती वस्त्र उद्योग को ले ले। इसमें अनेक पेशे है बुनाई, कताई, रगाई इत्यादि। अच्छा बुनकर होने के लिए यह ज़रूरी है कि वह नवीनतम डिजाइन के करघे का इस्तेमाल जानता हो, उसके एक एक पेंच से वाकिफ हो, कच्चे माल की विशेषताओ से परिचित हो और अनुभवी हो। सूती वस्त्र की मिलो में मशीनो की व्यवस्था होने से पूर्व श्रमिको को एक लम्बी अवधि के लिए ट्रेनिंग लेनी पडती थी और अपने काम में कुशल बनने के निमित्त वर्षो काम करना होता था।

और वे अपने कामो में कुशलता प्राप्त कैसे करते थे?

होता यह था कि शिशिक्षु को महीनो तक के लिए किसी कुशल श्रमिक के साथ 'बाध' दिया जाता था। यह शिशिक्षु काम देखता और उसकी सहायता करता, सूत तैयार करता और दौड दौड कर उसका काम कर दिया करता। अन्तत. कुशल श्रमिक उसे करघे पर बिठाल देता और उसपर काम करते करते शिशिक्षु उसे सीख लेता। शिशिक्षुओ से बडी सहायता मिल जाती थी और यही कारण था कि कुशल बुनकर वैयक्तिक ट्रेनिग की इस पद्धति के हामी थे।

मशीनो का प्रचलन हो जाने से काम की रूपरेखा ही बदल गई। लेकिन कुशल श्रमिको का अब भी महत्व है यद्यपि इस जमाने की कुशलता

पहले से बहुत भिन्न है। अब बुनकर के लिए करघे के कल-पुर्जों की जानकारी, कई कई करघों को एक साथ चलाने की क्षमता, लीवरों को जल्दी जल्दी स्विच करने, बटन दबाने और ऐसे अन्य काम करने की योग्यता होना अपेक्षित है जिनमे अभी तक मशीनों की व्यवस्था नहीं की गई है।

वैयक्तिक शिशिक्षुता भी सम्प्रति एक भिन्न प्रकार की है। दौड़ दौड़ कर श्रमिक के लिए काम करने या हाथों से करघा आदि चलाने का समय लद गया। अब बुनकर का काम अधिक जिम्मेदारी का हो चुका है और उसे किसी शिशिक्षु को नहीं सौंपा जा सकता। वैयक्तिक शिशिक्षुता अन्तिम सांसे ले रही है। उसका स्थान व्यावसायिक स्कूलों ने ले लिया है।

यदि व्यावसायिक स्कूलों में काफी साज़-सामान होगा तो वहा शिशिक्षु को कुशलतापूर्वक यंत्र चलाने की शिक्षा मिल सकेगी। ऐसे स्कूलों का औचित्य इसी में है कि वहा काफी साज़-सामान की व्यवस्था की जाय। और इसके लिए बहुत अधिक धन की जरूरत है। इस तरह के व्यावसायिक स्कूल बहुत थोड़े है और उनमे से जो अच्छे स्कूल है उनसे निकलने वाले श्रमिक उच्च कोटि की अर्हता प्राप्त श्रमिक होते है।

यह याद रहना चाहिए कि समय के साथ साथ टेक्नोलाजी मे भी विकास हो रहा है। मनुष्य किसी कला को सीखने में समय लगाता है, शक्ति लगाता है और फिर उसे मालूम होता है कि अमुक अमुक नया आविष्कार हो जाने के कारण उसकी सारी मेहनत बेकार हो गई। उसके काम का स्थान धीरे धीरे मशीन लेती जा रही है। उसकी अर्हताए नहीं के बराबर रह गई है। फिर भी, किसी पिछड़े हुए देश मे, जहा शारीरिक श्रम का अब भी महत्व है, जहा औद्योगिक आधुनिकीकरण की गति शिथिल है, व्यावसायिक स्कूलों और वैयक्तिक शिशिक्षुता का अब भी बोलबाला है।

जिस देश मे औद्योगीकरण की गति तेज़ है उसके लिए एक अन्य चीज की भी ज़रूरत है—यानी इस वात की कि शिशिक्षुओ को उत्पादन सवधी समस्त कार्यों, टेक्निकल विकास और हर मशीन को चला सकने का ज्ञान हो। इसके लिए मनुष्य को चाहिए कि उसे काम करने का अनुभव हो, कच्चे माल का ज्ञान हो, आदि आदि। जिस व्यक्ति को ये सारी वाते सिखाई गई है वह किन्ही भी परिवर्तनो के होते हुए भी काम कर लेगा और एक अर्ह श्रमिक होगा—'अर्ह' शव्द के नये अर्थ में, पुराने में नही।

फैक्ट्री-ट्रेनिग का एक सप्तवर्षीय स्कूल क्या शिक्षा देगा?

यह स्कूल अपने प्रशिक्षार्थियो को हाथ या मशीन से वुनाई या कताई करना नही सिखायेगा अपितु वे सारी वाते सिखायेगा जो किसी मिल में काम करने के लिए उसे जाननी चाहिए। पहले, स्कूल उसे इस विषय मे वतायेगा कि सूती वस्त्र उद्योग का सारी दुनिया की अर्थ-व्यवस्था में और हमारे देश की अर्थ-व्यवस्था में क्या महत्व है। वह उसे वतायेगा कि हमारा सूती वस्त्र उद्योग किस प्रकार विकसित होगा। वह सीखेगा कि सूती वस्त्र के हमारे केन्द्र कहा कहा है, आदि। फिर वह यह सीखेगा कि मिलो में कौन कौनसे कच्चे मालो का प्रयोग किया जाता है. फ़्लेक्स, कपास, ऊन, रेशम, कृत्रिम रेशम, केन्दूर आदि, ये कच्चे माल कहा कहा पाये जाते है और निकट भविष्य में इन क्षेत्रो का विकास कैसे होगा। उसे इन कच्चे मालो की विशेषताएं वताई जायेंगी और उनकी खेती तथा संग्रहण के विकसित तरीको का ज्ञान कराया जायेगा। तत्पश्चात् उसे मिल की संरचना, उसके समस्त विभागो, उत्पादन की भिन्न भिन्न शाखाओ और उनके लिए अपेक्षित योग्यताओ का परिचय कराया जायगा। मशीने कैसे वनाई जाती है, इन मशीनो के डिजाइन कैसे तैयार किये जाय, सूती वस्त्रोत्पादन में विकास और सुधार कैसे किये जा सकते है आदि वाते भी वह सीखेगा। खास खास कारखानो में जाकर वह भिन्न

भिन्न प्रकार के करघों से परिचय प्राप्त करेगा, उनपर काम करना सीखेगा और इस प्रकार उसे पता चल जायेगा कि आधुनिक मशीनें पुरानी मशीनों से कहीं अच्छी हैं, कहीं समुन्नत। वह उनकी देखरेख करना और किसी भी मशीन पर काम करना सीखेगा। अन्ततः वह किसी भी मशीन से—हाथ से चलने वाली से लेकर बिजली से चलने वाली तक—काम लेने के अनेक तरीकों का भी ज्ञान प्राप्त करेगा।

स्कूल अपने विद्यार्थियों में उत्पादन के प्रति रुचि और अधिक से अधिक उत्पादन बढ़ाने की इच्छा पैदा करेगा। दूसरी ओर, फैक्ट्री ट्रेनिंग स्कूल अपने विद्यार्थियों को फैक्ट्रियों और प्लान्टों के श्रम-संघटनों के बारे में बतायेगा और तदर्थ वैयक्तिक और सामूहिक श्रम-संघटन की शिक्षा देगा। वह उसे श्रम और स्वच्छता-सफाई की आवश्यक दशाएं पैदा करने की शिक्षा देगा, उसे बतायेगा कि किसी उद्यम में, विशेष रूप से किसी सूती वस्त्र मिल में श्रम सुरक्षा और सेफ्टी इंजीनियरिंग के मूलभूत सिद्धान्त क्या हैं। अन्त में, फैक्ट्री ट्रेनिंग स्कूल उसे देश-विदेश के श्रम-आन्दोलन और ट्रेड-यूनियन आन्दोलन और दुनिया भर के श्रमिकों, विशेष रूप से सूती वस्त्रोद्योग के श्रमिकों द्वारा किये गये संघर्ष का इतिहास बतायेगा।

इस प्रकार विद्यार्थी को जो ज्ञान प्राप्त होगा वह संकुचित व्यावसायिक ज्ञान न रह कर, आने वाले कल के लिए भी उपयोगी सिद्ध होगा। पोलीटेक्निकल शिक्षा संबंधी अपने वृहद् ज्ञान और काम करने की आदतों को लेकर जब वह किसी फैक्ट्री में जायेगा तब वह कोई ऐसा नया रंगरूट नहीं होगा जो सहायक की जगह बाधक बनता हो। वह एक परिपक्व और कुशल श्रमिक होगा जिसे सिर्फ अल्पकालीन विशेषज्ञ-पाठ्यक्रम की ही जरूरत होगी।

पोलीटेक्निकल स्कूलों के लिए होने वाले संघर्षों में लेनिन का योग

(‘कोमुनिस्तीचेस्कोये वोस्पितानिये’ पत्रिका, अंक ६, १६३२)

व्लादीमिर इल्यीच ने नयी पीढ़ी के भरण-पोपण पर विशेप ध्यान दिया था। उनका ख्याल था कि स्कूल वे साधन हैं जो वर्गहीन समाज का निर्माण कर सकते हैं और नयी पीढी में साम्यवाद की भावना भर सकते हैं। वे उन लब्धप्रतिष्ठ शिक्षाशास्त्री के पुत्र थे जो प्रारम्भिक स्कूलो को एक सामूहिक संस्था का रूप देने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहे और जिन्होने अपना सारा समय उसके विकास में ही लगा दिया। स्वय व्लादीमिर इल्यीच ने मार्क्स और एंगेल्स के उस समस्त साहित्य का बडे ध्यानपूर्वक अध्ययन किया जिसमें उन्होने स्कूल के बारे में और शिक्षा को काम के साथ सम्बद्ध करने के बारे में प्रकाश डाला था। १८६७ में जब मार्क्सवाद रूस में लोगो का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट कर रहा था और उन नरोदनिको के विरुद्ध एक ज़बरदस्त सघर्प चल रहा था, जिन्होने समाजवादी विकास का पूर्णत. गलत अर्थ लगाया था, उस समय लेनिन ने ‘नरोदनिको की खरगोशी योजनाओ के रत्न-कण’ शीर्पक एक लेख में अपने विचार व्यक्त किये थे। नरोदनिक युझाकोव ने किसानो के बच्चो को शिक्षित करने की एक योजना बनाई थी। उसका विचार था कि खर्च की स्वयं व्यवस्था करके गावो में पाठशालाएं खोली जाय, जिनके पास अपने फार्म हो, धनी किसान अपने बच्चो की पढाई का खर्च अदा करें और गरीब किसानो के बच्चे अपनी शिक्षा और रहन-सहन का खर्च उठाने के लिए काम करे। पाठ्यक्रम और शिक्षा की भावना ज़ारकालीन पाठशालाओ जैसी ही होनी थी। इस योजना से लेनिन को बहुत अधिक क्रोध आ गया। युझाकोव का ख्याल था कि—बिना किसी संघर्ष के और वर्ग-भेद तथा निरकुश शासन को बनाये रखते हुए—गावो

में इस प्रकार की पाठशालाएं खोलना पूर्णत संभव है। सेंसर के कारण लेनिन को गुप्त तरीकों, लाक्षणिक व्यजनाओं और सकेतो का सहारा लेना पडा था, लेकिन उन्होंने वे सारी बाते कह डाली जो वे कहना चाहते थे, और 'योजना' के खोखलेपन और उसकी अनर्गलता को प्रमाणित कर दिया था। उन्होंने यह दिखा दिया था कि युझाकोव रूसी यथार्थता और रूसी पद्धति पर आधारित वर्ग-विशेपता से पूर्णत अनभिज्ञ है और यह भी सिद्ध कर दिया था कि इस योजना में भू-दासत्व की भावना है, क्योकि इससे तरुण लोग जमीन से बध जायेंगे और फार्मो के ऐसे मजदूर बन कर रह जायेंगे, जिन्हे स्कूल प्रशासन की स्पष्ट अनुमति के बिना २५ वर्ष की अवस्था में भी विवाह करने का अधिकार न होगा। इस योजना के स्थान पर लेनिन ने एक ऐसी अनिवार्य सार्वभौमिक श्रमिक स्कूल की योजना प्रस्तावित की जो विद्यार्थियो मे गभीर प्रकार के ज्ञान का प्रसार करे और जिसमें सभी विद्यार्थी मिल कर काम करें।

इसके बाद एक लम्बे अरसे तक लेनिन ने इस विषय पर कुछ नहीं लिखा लेकिन उन्होंने हमेशा ही बाल-श्रम पर विशेप ध्यान दिया और इस बात पर जोर दिया कि बाल-श्रम की सुरक्षा और बच्चो को राजनैतिक क्रिया-कलापो में डालना बडा जरूरी है।

फिर विश्व-युद्ध शुरु हुआ। लेनिन ने मानव-जीवन के इतिहास में होने वाले क्रान्तिकारी परिवर्तनो का पूर्वानुमान कर के और वर्तमान पीढी का ख्याल कर के फिर अपना ध्यान शिक्षा के प्रश्न पर लगाया। ग्रनात विश्वकोश के 'समाजवाद' विभाग के लिए लिखे गये 'कार्ल मार्क्स' शीर्षक अपने लेख में लेनिन ने शिक्षा को कार्यो के साथ सबद्ध करने के प्रश्न पर मार्क्स के उद्धरण दिये थे। व्लादीमिर इल्यीच ने मुझे यह सलाह दी थी कि मै एक पुस्तक लिखूं जिसमें इस बात का उल्लेख हो कि औद्योगिक दृष्टि से विकसित देशो में यह समस्या किस रूप में पाई जाती है। परिणामत मैंने 'जन-शिक्षा और लोकतन्त्र' शीर्षक पुस्तक लिखी।

लेनिन ने इसे बड़े ध्यान से पढ़ा और इसे प्रकाशित करने के सबध में आवश्यक कार्यवाही भी की। युद्ध के वर्षो में जब हम विदेशो में रह रहे थे उस समय उन्होने इस बात पर ज़ोर दिया था कि युवको को वर्ग-सघर्ष में और गृह-युद्ध मे भाग लेना जरूरी है। उन्होंने यह भी कहा था कि १५ वर्ष से ऊपर के सभी तरुणो को सर्वहारा मिलीशिया के कार्यों में मदद करनी चाहिए।

१९१७ में पार्टी के कार्यक्रम का मसविदा तैयार करते समय लेनिन ने स्कूल सबधी अनुच्छेद इन शब्दो में प्रस्तुत किया था यह ज़रूरी है कि हमारे यहा "१६ वर्ष से कम के लड़के-लडकियो के लिए नि शुल्क और अनिवार्य, सामान्य तथा पोलीटेक्निकल (औद्योगिक उत्पादन की सभी प्रमुख शाखाओ में सैद्धान्तिक और व्यावहारिक) शिक्षा दी जाय तथा उस शिक्षा का बच्चो के सामाजिक उत्पादन कार्यों से संबध हो।" उन्होंने इस सामाजिक उत्पादन कार्य की अनिवार्यता पर विशेष ज़ोर दिया था।

सोवियत शासन की स्थापना के आरम्भ के तुरन्त ही बाद इल्यीच ने इस बात पर ज़ोर दिया था कि जन कमिसेरियत पोलीटेक्निकल स्कूलों की स्थापना करे। यद्यपि हमारी आर्थिक दशा काफी बिगडी हुई थी फिर भी हमने अपना काम शुरू किया। यह काम हमें बिल्कुल शुरू से ही आरम्भ करना पड़ा था। शुरू शुरू में यह अधिकाशतया एक प्रयोगात्मक कार्य था। 'पोलीटेक्निकल' शिक्षा की दशा हीन दिखाई पड़ रही थी और वह मुख्यतया स्व-सेवा, बढईगिरी, सिलाई तथा जिल्दसाजी के कारखानो में काम करने तक ही सीमित थी। लेनिन की इच्छा थी कि स्कूल विद्युतकरण की शिक्षा दें। यह शिक्षा कैसे दी जानी चाहिए इसकी भी उन्होंने एक योजना तैयार कर ली थी। यह बात दिसम्बर १९२० की है।

व्लादीमिर इल्यीच ने अनुभव किया था कि स्कूलो में पोलीटेक्निकल शिक्षा की गति बहुत धीमी है। शिक्षा के जन कमिसेरियत में कुछ लोग

ऐसे थे जो तरुणो के लिए व्यावसायिक स्कूलो की व्यवस्था चाहते थे और जिनका कहना था कि पोलीटेक्निकल शिक्षा बेकार है और हमें मोनोटेक्निकल शिक्षा की जरूरत है। उन्होने यह विचार भी व्यक्त किये थे कि पोलीटेक्निकल शिक्षा हर जगह नही दी जा सकती। देहातो में इसकी कोई जरूरत नही। इसकी व्यवस्था सिर्फ बडे बड़े नगरो में होनी चाहिए। उक्रइन में पोलीटेक्निकल स्कूलो का विचार पूर्णत विकृत रूप ले चुका था। लेनिन ने एक पार्टी मीटिंग बुलाने पर जोर दिया जिसमें मुझसे पोलीटेक्निकल शिक्षा पर रिपोर्ट देने की आशा की जाती थी। मैंने इल्यीच को अपनी रिपोर्ट की थीसिस दिखाई। उन्होने इधर-उधर कुछ बाते लिखी और ये शब्द भी टाक दिये "प्राइवेट। मसविदा। इसे सार्वजनिक रूप न दिया जाय। मैं इसपर विचार करूगा।" अब मैंने अपनी ओर से इन थीसिसो को सार्वजनिक रूप दे दिया है। तब से बहुत वर्ष बीत चुके है लेकिन पोलीटेक्निकल स्कूल की समस्या अब भी गभीर बनी हुई है। अब मैंने यह विचार किया है कि जो चीज उस समय सार्वजनिक रूप से सामने न लाई जा सकी थी उसे अब लाया जाय। आखिर हम इल्यीच की आलेख्य टिप्पणियो का अध्ययन कर रहे हैं। तब मेरी थीसिसो का कोई इस्तेमाल नहीं किया गया था। मैं बीमार पड गई थी और इसी लिए पार्टी की मीटिंग में मैंने रिपोर्ट भी नही दी थी। इल्यीच की टिप्पणियो से क्या पता चलता है? यही कि वे इस बात पर जोर देना चाहते थे कि पोलीटेक्निकल शिक्षा सिद्धान्त की बात है। व्यक्तिगत रूप से इल्यीच इसे बहुत महत्वपूर्ण समझते थे। उनका विश्वास था कि पोलीटेक्निकल स्कूल एक वर्गहीन समाज की स्थापना में सहायक होगे। वे चाहते थे कि मैं अपनी थीसिसो में इसी बात पर जोर दू। उनका यह भी विचार था कि पोलीटेक्निकल शिक्षा को अविलम्ब चालू कर देना चाहिए। मेरी थीसिसो में व्यावसायिक शिक्षा के समर्थको को कुछ रियायतें देने का उल्लेख था। मैं समझती हू, मैंने लिखा था (मेरी थीसिस मेरे

पास नही है) कि माध्यमिक स्कूलो को पुन संघटित व्यावसायिक स्कूलो में विलीन कर दिया जाय, लेकिन इल्यीच ने इसमें इतना और जोड दिया था कि इस विलीनीकरण का प्रभाव "सारे माध्यमिक स्कूलो पर नही अपितु १३, १४ वर्ष और उससे ऊपर के विद्यार्थियो पर ही पडना चाहिए, **और अध्यापको के निर्णय और आदेशों के अनुसार!**" पार्टी मीटिंग ने यह उम्र १५ वर्ष निश्चित की थी। 'शिक्षा के जन कमिसेरियत के कार्य' शीर्षक अपने लेख में लेनिन ने लिखा था, "हम (सामान्य पोलीटेक्निकल शिक्षा से व्यावसायिक पोलीटेक्निकल शिक्षा के लिए) आयु प्रतिवन्ध को १७ से घटा कर **अस्थायी रूप से** १५ वर्ष कर देने के लिए वाध्य है। '**पार्टी को चाहिए**' कि वह इस व्यवस्था को 'अपवाद के रूप में' समझे. . एक व्यावहारिक आवश्यकता, एक ऐसे अस्थायी उपाय के रूप में समझे जो '**देश की गरीबी और तबाही के कारण**'* आवश्यक हो गया हो।"

व्यावसायिक स्कूलो में माध्यमिक स्कूलो के ऊंचे दरजो को विलीन कर देने के वारे में जो वात लेनिन ने कही थी वह प्रायः सात दरजो वाले स्कूलो पर लागू होती है। व्यावसायिक स्कूलो के सवध में लेनिन का मत था कि उन्हे पोलीटेक्निकल स्कूलो का रूप देना चाहिए न कि दस्तकारी वाले स्कूलो का। इन स्कूलो को सामान्य एवं पोलीटेक्निकल शिक्षा देनी चाहिए। यही वात फैक्ट्री ट्रेनिग स्कूलो और टेक्निकल कालेजो पर घटित होती है, इस वात को नही भूलना चाहिए। लेनिन ने यह भी कहा था कि इस वात को भी पूर्णत. निश्चित कर लेने की जरूरत है कि हमारी दशाओ में स्कूलो को पोलीटेक्निकल रूप कैसे दिया जाय। लेनिन इन्स्टीट्यूट के अभिलेखालय में पोलीटेक्निकल शिक्षा के सवध में

---

*व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी सस्करण, खंड ३२, पृष्ठ १०२।

लेनिन की एक टिप्पणी है (स० ३९४६)। उन्होंने लिखा था, 'इतना और बढ़ा दिया जाय (१) युवकों और प्रौढ़ों की पोलीटेक्निकल शिक्षा के संबंध में, (२) स्कूल में बच्चों की पहलकदमी के संबंध में।

"प्रौढ़ों के लिए—व्यावसायिक शिक्षा का विकास जो इस प्रकार हो कि वह अन्ततः पोलीटेक्निकल शिक्षा का रूप ले ले।"

अभिलेखालय से इस बात का पता नहीं चल पाता कि यह बात लेनिन ने कब और क्यों लिखी थी। लेकिन हमारे लिए यह बात बड़ी ज़रूरी है।

फर्वरी १९२१ में प्रकाशित 'शिक्षा के जन कमिसेरियत के कार्य' शीर्षक लेनिन के लेख और उन्हीं द्वारा तैयार किये गये 'शिक्षा के जन कमिसेरियत के कम्यूनिस्ट कार्यकर्ताओं के नाम केन्द्रीय कमेटी के आदेशपत्रों' में कितनी ही बातों का पता चलेगा। आदेशपत्रों में कहा गया था कि स्कूलों में पोलीटेक्निकल शिक्षा देना और व्यावसायिक-टेक्निकल शिक्षा को पोलीटेक्निकल शिक्षा के साथ संबद्ध करना बहुत ज़रूरी है, कि शिक्षा के जन कमिसेरियत के कालेजियम को पहले तो मुख्य जैसे स्कूलों के पाठ्यक्रमों की और फिर कोर्सों, लेक्चरों, पढ़ाई, बातचीत और व्यावहारिक कार्यों की योजनाओं को निर्धारित और स्वीकार करना चाहिए। आदेशपत्रों में यह भी कहा गया था कि टेक्नोलाजी और शास्त्रीय कृषि कला के सभी उपयुक्त विशेषज्ञों को व्यावसायिक-टेक्निकल और पोलीटेक्निकल स्कूलों में काम करने के लिए चुनना चाहिए और इस प्रयोजन के लिए हर उस औद्योगिक और कृषि-संस्था का उपयोग होना चाहिए जो भली भांति संघटित है।

दिसम्बर १९२१ में सोवियतों की नवीं कांग्रेस में लेनिन ने इस बात पर ज़ोर दिया था कि स्थानीय और जनतंत्रीय दोनों ही क्षेत्रों में स्कूल के काम को आवश्यक आर्थिक कामों के साथ संबद्ध कर दिया जाय।

लेनिन की घोपणाओ में पोलीटेक्निकल स्कूल वनाने के निश्चित निर्देश मिलते है। पाच वर्षो तक उन्होने स्वयं इस व्यवस्था का निर्देशन किया था। पिछले कुछ वर्षो से यह कार्य उन्ही के निर्देशानुसार चल रहे है।

हमने इस काम को सुगम वनाने के निमित्त कुछ सामान्य पूर्वापेक्षाए वना ली है, जिनमें से सव से महत्वपूर्ण ये है हमारी औद्योगिक सफलताएं, हमारे देश का औद्योगीकरण और हमारी कृपि-व्यवस्था का एक नया स्वरूप। आर्थिक नियोजन भी एक वडी महत्वपूर्ण चीज़ है क्योकि इससे हमारा पोलीटेक्निकल दृप्टिकोण व्यापक वनता है और यह भी पता चलता है कि उत्पादन की भिन्न भिन्न शाखाए किस प्रकार परस्पर सवद्ध है। औद्योगिक तथा कृपि कैडर की ट्रेनिग तेजी से दी जा रही है। समाजवादी प्रतिस्पर्द्धा आन्दोलन के फलस्वरूप श्रम के प्रति जनता का रुख चेतनाशील वनता जा रहा है और साथ ही अनुशासन की भावना में भी वृद्धि हो रही है। सारे वच्चो के लिए प्रारम्भिक स्कूली शिक्षा अनिवार्य कर दी गई है और शीघ्र ही हमारे यहा स्कूल में सात वर्षो की शिक्षा भी अनिवार्य हो जायेगी। हमने तरुण कम्यूनिस्ट लीग के सदस्यो और तरुण पायोनियरो की एक विशाल सेना तैयार की है। वे स्कूलो की मदद करते है। फैक्ट्रिया और प्लान्ट हमारे स्कूलो के सरक्षक है। पार्टी, स्कूलो में पोलीटेक्निकल शिक्षा पर विशेप वल देती है।

सम्प्रति वड़े पैमाने पर एक ऐसा सघर्प चल रहा है जिसका उद्देश्य है अच्छी किस्म का शिक्षण देना। ऊपर जिन वातो का उल्लेख हुआ है उनका भी उद्देश्य पोलीटेक्निकल शिक्षा की समस्याओ में सुविधाएं पैदा करना है। किन्तु अभी तक हमारे स्कूलो ने लेनिन के आदेशो का पालन नही किया है, अभी उन्हे इस दिशा में वहुत कुछ करना है। हम अभी तक जो कुछ कर चुके है उससे हमें अपनी वहुतेरी गलतिया दूर करने में सहायता मिलेगी। हम जानते हैं कि हमने अपने स्कूलो में पोलीटेक्निकल शिक्षा का आरम्भ स्वसेवा के आवार पर किया था। परन्तु इससे हमें

बहुत कम लाभ हुआ। हम यह भी जानते हैं कि उच्चतर सांस्कृतिक स्तर के लिए भी संघर्ष चल रहा है। स्कूल इस दिशा में अलग नहीं रह सकते, उन्हें बच्चों को वह ज्ञान और वह योग्यता प्रदान करनी ही होगी जो जीवन के अभिनवीकरण के लिए आवश्यक है। हम जानते हैं कि हमारा पोलीटेक्निकल स्कूल साधारण व्यावसायिक स्कूल मात्र नहीं बन जाना चाहिए। साथ ही हम यह भी जानते हैं कि आधुनिक टेक्नोलाजी में दक्षता प्राप्त करने के लिए निश्चित प्रारम्भिक न्यूनतम ज्ञान की ज़रूरत है। हम शिक्षा के उस चतुर्दिक व्यवसायीपन के विरुद्ध हैं जो प्राय पोलीटेक्निकल शिक्षा के स्थान पर थोपा गया था। हम बालकों के उत्पादनशील श्रम के पक्ष में हैं लेकिन उनके अध्ययन को काट-छांट कर न्यूनतम बना दिया जाय इसके पक्ष में नहीं। पिछले एक वर्ष से केन्द्रीय समिति के ५ सितम्बर १९३१ के एक निर्णय के अनुसार इस अतिरेक के विरुद्ध बराबर संघर्ष हो रहा है।

पोलीटेक्निकल स्कूलों का निर्माण करने की दिशा में हमने बहुत कुछ सीख लिया है, लेकिन इसके पहले कि उन्हें सचमुच पोलीटेक्निकल बनाया जाय हमें बहुत कुछ सीखना होगा। हम इन स्कूलों का बड़ी तीव्र गति से निर्माण कर रहे हैं और निश्चय ही इन्हें वह स्वरूप दे सकेंगे जिसका स्वप्न लेनिन ने देखा था।

पेशे का चुनाव

('कोम्सोमोल्स्काया प्राव्दा', २६ जून, १९३६)

पेशे का स्वतन्त्र चुनाव बहुत महत्वपूर्ण है। जब मनुष्य उस काम को प्यार करता है जिसे वह करता है तो उसे उसमें आनन्द और सन्तोष मिलता है, उसमें वह दिलचस्पी लेता है और, बिना छाती पर बोझ डाले हुए, उत्पादन में निरन्तर वृद्धि करता है।

भूदासत्व के ज़माने में पेशे का चुनाव इस बात पर निर्भर था कि चुनने वाला किस वर्ग का है। किसान के पल्ले शारीरिक मेहनत ही पड़ती थी और मेहनत ली जाती थी "डंडे के ज़ोर से"। मेहनत एक अभिशाप थी। एक पुरानी कथा के अनुसार एक बार ईश्वर ने आदम से कहा था: "तू अपने माथे का पसीना बहा बहा कर रोटी कमायेगा।" मध्य युग में यह बात स्पष्ट देखने को मिलती है कि कितने अधिक लोगो को असह्य दशाओ में गुलामी करनी पड़ती थी।

फ्रांसीसी बूर्जवाई क्रान्ति ने जनता को आज़ाद किया। अगर जनता को यह वैधानिक आज़ादी न मिली होती तो पूजीवाद असभव हो गया होता। उन दिनो के क्रान्तिवादियो ने सोचा था कि यह श्रमिको के पूर्णोद्धार का प्रभात है। उदाहरणार्थ, रूसो ने बड़े ज़ोर के साथ पेशे के चुनाव की स्वतंत्रता की बात कही थी लेकिन नेक्रासोव का कहना था कि "मनुष्य ने सामन्तवादी जंजीरो की जगह उतनी ही कसी हुई दूसरी ज़जीरे पहन रखी है"। सामन्तवादी पद्धति के स्थान पर पूजीवाद ने पैर जमाये और "किराये की गुलामी" की प्रथा आरम्भ हुई तथा पेशे का चुनाव करने की आज़ादी एक विशेष वर्ग के लोगो को, एक परिमित मात्रा में, दी गई।

समाज के वर्णो में विभक्त हो जाने के स्थान पर ऐसी वर्ग-विषमता का उदय हुआ जिससे पेशे के स्वतन्त्र चुनाव में बाधा पड़ी। कानून के अनुसार मनुष्य इस बात के लिए स्वतंत्र था कि वह अपनी इच्छानुसार पेशा चुन ले, लेकिन वास्तविकता यह थी कि इस मार्ग में अनेक बाधाएं थी और सब से बडी बाधा थी जन-शिक्षा की पूजीवादी प्रणाली की। टेक्निकल विकास और उद्योगो में सामूहिक कार्यो के लिए एक निश्चित हद तक साक्षर होना आवश्यक था। यही कारण है कि कुछ पूजीवादी देशो में काफी समय पहले से ही अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था रही है। यह शिक्षा धार्मिक अन्धविश्वासो और बूर्जवा नैतिकता के कारण

दूषित बनी रही और अतीत और वर्तमान का एक विकृत रूप प्रस्तुत करती रही।

इस व्यवस्था के अधीन प्राथमिक शिक्षा से माध्यमिक शिक्षा की ओर बढ़ना आसान काम नहीं क्योंकि प्राथमिक और माध्यमिक स्कूलों के पाठ्यक्रम के बीच एक खाई है। माध्यमिक स्कूलों में लोगों को राज्य-व्यवस्था की और इस बात की शिक्षा मिलती है कि वे शासन चलाने वालों की सेवा करें। इन स्कूलों के विद्यार्थी सामान्यतया साधारण बूर्जवाओं–ग़रीबी में दिन काटने वाले कुलीन, छोटे और मध्यम श्रेणी के व्यापारी, अधिकारी, धनी किसान आदि–के बच्चे हैं।

माध्यमिक स्कूल भी भिन्न भिन्न प्रकार के होते हैं। ये स्कूल अपने छात्रों में अधिकाधिक ज्ञान का प्रसार करते हैं और उन्हें 'बुद्धिजीवी के कामों' के लिए तैयार करते हैं। और चूंकि माध्यमिक स्कूलों ने इन तथाकथित 'बुद्धिजीवी के कामों' के लिए रास्ता तैयार किया था अतएव छोटे-मोटे बूर्जवाओं ने वहां अपने बच्चों को पढ़ाने के निमित्त यथासम्भव सभी कुछ किया। इन माध्यमिक स्कूलों में पढ़कर विद्यार्थी एक तो कठोर मेहनत से बच जाता था और दूसरे "मैं भी कुछ हूं" ऐसा समझने लगता था। यहां शिक्षा प्राप्त कर चुकने के बाद विद्यार्थी उच्च शिक्षा के स्कूलों में प्रवेश पा सकता था जहां से उच्च स्तर के विशेषज्ञों को स्नातकों का प्रमाणपत्र मिल जाता था, और इसी लिए इन विशेषज्ञों को अच्छी तनख्वाहें मिलती थीं। भावी 'उद्योग सचालकों' और 'राज्य के नेताओं' के लिए कुछ खास और विशेषाधिकार प्राप्त स्कूल थे (जैसे लीसियम, प्रकृति के मध्य लगने वाले माध्यमिक स्कूल, आदि)।

जन-शिक्षा की समस्त प्रणाली का उद्देश्य पूंजीवाद को सुदृढ़ रखना था। पेशे को स्वतन्त्र रूप से चुनना एक समस्या बन रही थी। साम्राज्यवादी युद्ध के दौरान में शिक्षण विज्ञान सम्बन्धी जर्मनी की पत्र-पत्रिकाओं में, सब से अधिक प्रतिभाशाली और योग्य व्यक्तियों को उत्साहित करने और

तरक़्क़ी देने की जरूरत के विषय में एक ज़ोरदार वहस चली थी। मगर सच्ची वात यह थी कि सवाल हर व्यक्ति को अपनी अपनी योग्यताओ का प्रदर्शन करने का मौका देने का न था अपितु सव से अधिक प्रतिभाशाली व्यक्तियो का इसलिए निर्वाचन करने का था कि वे पूजी की सेवा कर सके और पूजीवादी व्यवस्था के संरक्षक और शोषको के सेवक वने रहे।

सोवियत सरकार को ज़ारो से उत्तराधिकार में शिक्षा की यही पूजीवादी पद्धति मिली थी, जिसमे सामन्तवाद, अज्ञान और गुलामी का पुट था।

सोवियत सरकार ने श्रमिको मे ज्ञान का प्रसार करने के निमित्त आरम्भ से ही यथासम्भव सभी कुछ किया—वर्ग-भेदों को दूर करने और जन-शिक्षा की सम्पूर्ण प्रणाली का पुनस्संघटन करने के लिए कोशिशें की। ऐसा करने के निमित्त सरकार ने ज्ञान-भाडार में से सिर्फ वे ही कण चुने जो जनता के सांस्कृतिक उत्थान के लिए ज़रूरी थे।

उसने एक एकीकृत शिक्षा-प्रणाली को जन्म दिया और पाठ्यक्रम में से सारी पुरानी वाहियात वाते निकाल दी। उसने श्रमिको की फैकल्टिया वनाईं और माध्यमिक स्कूलो तथा उच्च शिक्षा के इन्स्टीट्यूटो में प्रवेश करने वाले श्रमिको और किसानो को सभी किस्म की सुविधाए दी। जन-शिक्षा की पूरी प्रणाली का पुनस्संघटन कार्य उस समय हाथ में लिया गया जव गृह-युद्ध चल रहा था और सामाजिक संरचना का नये सिरे से पुनर्निर्माण हो रहा था। उस समय छोटी से छोटी सफलताओ को प्राप्त करना, अथवा सार्वभौम प्राथमिक शिक्षा का सघटन करना कितना अधिक दुःसाध्य था इसे समझ सकना मुश्किल नही। हमारे संघर्ष में सास्कृतिक कार्य सव से महत्वपूर्ण कार्यो में से एक समझा जाता था। सोवियत शासन की स्थापना के वाद के पिछले वीस वर्षो की जन-शिक्षा का इतिहास इस संघर्ष का एक व्यौरेवार चित्र प्रस्तुत करता है।

हमारे देश की तो इतनी कायापलट हो चुकी है कि अब वह पहचाना तक नहीं जाता। भारी उद्योगों में विकास तथा कृषि के सामूहीकरण एवं यन्त्रीकरण ने नगरों और गावों को एक दूसरे के निकट ला कर खडा किया है, जनता का बौद्धिक विकास किया है और उसकी जागरूकता में वृद्धि की है। जीवन समृद्ध हो गया है, टेक्निकल और वैज्ञानिक विकास शारीरिक श्रम और मानसिक कार्यों के बीच की खाई को पाट रहा है और वे पुरानी बाधाए निर्मूल की जा चुकी है जो जनता के ज्ञानार्जन के मार्ग को अवरुद्ध कर रही थी।

हमने सोवियत संघ में वे सारी बातें पैदा कर ली है जो पेशे का स्वतन्त्र रूप से चुनाव करने के लिए आवश्यक है। परन्तु इसके यह माने नहीं कि हम सांस्कृतिक क्षेत्र मे किये जाने वाले अपने कामों में ढिलाई आने दें।

हमें यह न भूलना चाहिए कि निरक्षरता और अर्द्ध-साक्षरता के अवशेष पेशे के स्वतन्त्र चुनाव में बहुत अधिक बाधा पहुचाते है।

हमें यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि हमारी बढ़ती हुई पीढ़ी के लिए कम उम्र से, स्कूल मे और उसके बाहर सामान्य शिक्षा देने और पोलीटेक्निकल दृष्टिकोण को व्यापक बनाने की जरूरत है। हमें यह ध्यान भी रखना चाहिए कि सामान्य शिक्षा और पोलीटेक्निकल शिक्षा के संबध में अपनाया जाने वाला सकीर्ण दृष्टिकोण पेशे के चुनाव की स्वतन्त्रता को परिमित करता है और उसे आकस्मिक बनाता है।

हमें चाहिए कि हम प्राथमिक, माध्यमिक और उच्च स्तरों के बीच पाये जाने वाले अवरोधों के अवशेषों को समाप्त करें उनके पाठ्यक्रम की अच्छी तरह जाच करें और उन सभी गैरजरूरी छोटी छोटी चीजों को दूर कर दें जो विज्ञान के मूलभूत तत्त्वों पर अतिभारी हो रही थी। हमें इस बात का प्रयत्न करना चाहिए कि सिद्धान्त और व्यवहार एक दूसरे के और भी निकट आयें।

हमें शारीरिक श्रम के प्रति लोगो के पुराने रुख के और इस विचार के खिलाफ संघर्ष करना चाहिए कि श्रम लाखो व्यक्तियो के लिए एक अभिशाप है। हमें कुछ लोगो के उच्च शिक्षा के इन्स्टीट्यूटो में घुस कर "मै भी कुछ हू" बनने, इंजीनियर बनने, जैसी लालसापूर्ण कोशिशो के विरुद्ध भी संघर्ष करना है। कभी कभी इन लालसाओ में फैक्ट्री श्रमिक के प्रति पुराने रुख का, शारीरिक श्रम करने वालो को हीन दृष्टि से देखने के रुख का, प्रतिविम्ब मिलता है। इन पूर्वसस्कारो को शीघ्र से शीघ्र दूर करने में स्तखानोव आन्दोलन* हमारी सहायता करेगा।

हमें अपने बच्चों के स्वास्थ्य का निर्माण करने के लिए सभी कुछ करना चाहिए और इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वे ठीक से खायें-पियें, अच्छी तरह सोयें और खुली हवा में काफी समय व्यतीत करे। हमें उनके शरीर-संवर्द्धन पर ध्यान देना चाहिए, उनकी दृष्ट और श्रव्य स्मृति का विकास करना चाहिए और काम करने के लिए अपेक्षित आदतें डालने में उनकी मदद करनी चाहिए।

दस्तकारी और कारीगरी के ज़माने में पेशे का चुनाव प्राय. माता-पिता के पेशो पर निर्भर रहता था। तव काम करने के अभ्यास से श्रम के स्तर का पता चलता था और इसे प्राप्त करने के लिए छोटी ही उम्र से काम करना ज़रूरी होता था। छोटी उम्र में पेशे का चुनाव एक प्रथा थी। वस्तुतः दस्तकारी में संकीर्ण टेक्निकल ढग की आदतो का स्थान बड़ा महत्वपूर्ण होता था। उन दशाओ में कुशल कारीगर होने में वरसो लगते थे और इसी लिए शिशिक्षुता जीवन के आरम्भ काल में शुरू हो कर दीर्घ काल तक चलती रहती थी। दस्तकारी और कारीगरी की एक विशेपता कम

---

*स्तखानोव आन्दोलन—श्रम का उत्पादन वढाने के लिए सन् १९३६ में चलाया गया सामूहिक आन्दोलन। इस आन्दोलन का नाम उसके प्रवर्तक अ० स्तखानोव के नाम पर पड़ा।—सं०

उम्र में पेशे का चुनाव करना, अथवा इस चुनाव का अभाव थी। बच्चो का पेशा उनके माता-पिता द्वारा चुना जाता था।

आधुनिक टेक्नोलाजी ने शिशिक्षुता के स्वरूप में महान परिवर्तन उपस्थित कर दिया है। व्यवसाय सीखने वाले के लिए अब प्रारम्भिक टेक्निकल ट्रेनिग से अधिक शिक्षा प्राप्त करना आवश्यक हो गया है। उसे न केवल यह जानना चाहिए कि लेथ मशीन कैसे चलाई जाती है अपितु उससे यथासम्भव अधिक से अधिक क्षमता के साथ काम भी लेना चाहिए और उत्पादन प्रक्रियाओ से भी भली भाति अवगत होना चाहिए। यह सिर्फ आकस्मिक घटना ही नही कि अधिकाश युवक स्तखानोवाइट फैक्ट्री स्कूलो से निकलते है।

हमारे माध्यमिक स्कूलो को चाहिए कि वे विद्यार्थियो में काम करने की ऐसी आदते डाले जो आधुनिक टेक्नोलाजी के लिए उपयोगी सिद्ध हो और इस प्रकार उन्हे कई कई पेशो के लिए एक साथ तैयार करे। पेशो का चुनाव करने में जल्दवाज़ी से काम नही लेना चाहिए क्योकि इसके माने होगे चुनाव की स्वतत्रता को वाधित करना। लेनिन ने चेतावनी दी थी कि व्यवसाय को छुटपन में ही नही चुनना चाहिए।

कई पेशे ऐसे हैं जिनके लिए ख़ास गुणो की ज़रूरत होती है—तेज़ कान, तेज़ आखें, सुविकसित स्पर्श-अनुभूति, सुप्रशिक्षित स्नायु-केन्द्र, इत्यादि। सामाजिक सरचना पेशो की मुख्य निश्चायक है और अकेली समाजवादी पद्धति ही एक ऐसी पद्धति है जो जनता को चुनाव की स्वतत्रता देती है।

अन्त में मैं दो शब्द 'प्रतिभाशाली' वच्चो के सबंध में भी कहूगी। अन्य वच्चो की तरह उन्हें भी सामान्य शिक्षा का अधिकार मिलना चाहिए। हमें चाहिए कि हम ऐसी व्यवस्था करे कि वे साधारण सोवियत स्कूलो में अपना सर्वाधिक विकास कर सके। हमें इस वात का भी ध्यान रखना चाहिए कि जीवन के आरम्भिक वर्षों में विशेषज्ञता प्राप्त कर लेने का परिणाम यह होगा कि वच्चे भविष्य में अपनी योग्यताओ का व्यापक

उपयोग न कर सकेंगे। एक उदाहरण लीजिये। किसी वच्चे की दृश्य-स्मृति वड़ी प्रखर है और वह अच्छे रेखा-चित्र वनाता है। उसे एक विशेप स्कूल में भेजा जाता है जहां उसे ड्राइंग सिखाई जाती है परन्तु कोई भी उसकी इस प्रतिभा में विकास नही करता। कोई उसे कम्यूनिस्ट ढंग नही वताता, कोई उसका पालन-पोपण सच्चे कम्यूनिस्ट के रूप में, क्रियाशील सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में नही करता और वह एक प्रतिभाशाली कलाकार के रूप में वडा होता है। वह जड जीवन का सुन्दर चित्रकार है मगर यह नही जानता कि आधुनिक सामाजिक विकासो का, विना किसी भोंड़ेपन के, कैसे चित्रण किया जाय और उसके चित्र विना शव्दो का सहारा लिये हुए कैसे मुखर हो, कैसे सजीव लगें।

माध्यमिक और विशेपज्ञ स्कूल दोनो ही उसका पालन-पोषण एक कम्यूनिस्ट की भाति करे क्योंकि एक यही तरीका है जिससे वह अपनी प्रतिभा का वास्तविक उपयोग कर सकता है।

स्कूली बच्चों को लेनिन के बारे में क्या और कैसे बताया जाय

('उचीतेलस्काया गजेता', २२ जनवरी, १९३८)

कुछ लोगो का ख्याल है कि वच्चो को केवल लेनिन के वचपन के वारे में वताया जाय क्योकि इसी में उनकी दिलचस्पी हो सकती है। यह वात गलत है। हमारे वच्चे लेनिन के वारे में सभी कुछ जानना चाहते है। लेनिन संग्रहालय के गाइड उन्हे वहुत कुछ वता सकते हैं।

वेशक, वच्चो को लेनिन के वचपन के वारे में वताना चाहिए। मगर सवाल यह है कि कैसे वताया जाय। अगर यही कहा जाय, जैसा कभी रिवाज था भी, कि लेनिन एक अच्छा, विनम्र, शान्त लड़का था, खूव पढ़ता था, हमेशा दर्जे में अव्वल रहता था तो उचित नहीं होगा।

कुछ लोगो ने तो इल्यीच को एक अद्‌भुत प्रतिभाशाली बच्चे के रूप में चित्रित किया है।

इल्यीच के बचपन का वर्णन दूसरे ही ढग से करना चाहिए। बच्चो को लेनिन के पिता के बारे में बताना चाहिए कि वे एक गरीब परिवार में पैदा हुए थे और प्राथमिक स्कूलो के डाइरेक्टर थे। यह याद रखना चाहिए कि वह जमाना सकट का जमाना था। उस समय किसानो की दशा बडी खराब थी, गावो में अज्ञान का बोलबाला था, हर चीज में भूदासत्व का प्रतिबिम्ब था। ब्लादीमिर इल्यीच के पिता, इल्या निकोलायेविच, भूदासत्व की प्रथा से घृणा करते थे। वे सुखद जीवन के स्वप्न देख रहे थे। उन्होने किसानो के बच्चो के लिए स्कूलो की व्यवस्था करने के निमित्त यथासम्भव सभी प्रयास किये और एतदर्थ अपना सारा जीवन लगा दिया। इल्यीच ने किसानो की दुर्दशा की कहानिया अपनी आया से सुनी थी जिसे वे बहुत प्यार करते और जिसका चश्मा वे बडी सावधानी से धो-पोछ कर रखा करते थे। जब उनके पिता दूसरे अध्यापको से बातचीत करते थे तो इल्यीच उनकी बातो को बडे ध्यान से सुनते। इल्या निकोलायेविच नेक्रासोव और 'ईस्क्रा' कवियो के भक्त थे क्योकि ये तत्कालीन शासन पद्धति और बुद्धिजीवियो की आलोचना करते थे। बालको को यह भी बताना चाहिए कि उन दिनो बच्चो की पुस्तको में क्या क्या लिखा जाता था—'चचा टाम की कोठरी', अमेरिका, नीग्रो गुलामी को समाप्त करने के लिए दक्षिण के विरुद्ध उत्तर द्वारा छेडा गया युद्ध और फिर इस बात का वर्णन कि ज़ारो द्वारा किया गया गैर-रूसियो का दमन अमेरिकी गृह-युद्ध की पृष्ठभूमि पर कितना स्पष्ट दिखाई दे रहा था। इल्या निकोलायेविच को चुवाश, मोर्दवीनियाई बच्चो और उनकी शिक्षा की चिन्ता थी। स्कूल में इल्यीच दूसरे जातियो के विद्यार्थियो के साथ बडी सहानुभूति का व्यवहार करते। बच्चो को पोलैंड के विप्लव और इस बात की जानकारी कराना भी आवश्यक है कि ज़ार सरकार ने पोलिश विप्लवियो को किस

प्रकार दवाया था। वच्चो को सन् १८८१ की घटनाएं वताई जायं, जव अलेक्सान्द्र द्वितीय की हत्या की गई थी, और यह भी वताया जाय कि इल्यीच ने अपने वडे भाई और वहन की वाते कैसे गौर से सुनी थी, कैसे उन्होने एक क्रान्तिवादी वनने का निश्चय किया था, जव उनके प्यारे वडे भाई को गिरफ्तार किया गया तथा फासी पर चढाया गया तो उन्हे कितनी पीड़ा हुई थी और कैसे उन्होने समझा था कि उन्हे एक दूसरा रास्ता, यानी श्रमिक वर्ग के जन सघर्ष का रास्ता, पकडना चाहिए।

वच्चो को जानना चाहिए कि क्रान्तिवादी वनने के लिए इल्यीच ने कैसे काम किया था, अपने हर खाली क्षण में श्रमिक वर्ग संघर्ष और क्रान्ति सववी कौन कौनसी पुस्तके पढी थी और अपने प्रिय खेल स्केटिग को और लैटिन को किस प्रकार ताक पर रख दिया था। उन्हे वताया जाय कि इल्यीच का, जो अपने युग के एक महान विचारक, क्रान्तिवादी और तीक्ष्ण अन्तर्दृष्टि वाले व्यक्ति थे, पालन-पोषण कैसे हुआ था और वे कैसे वडे हुए थे।

हमें वच्चो को इल्यीच की मां के वारे में भी वताना चाहिए कि वे अपने पति के लिए कितनी चिन्तित रहती थी, कैसे उनके काम और विश्राम के लिए आवश्यक सावन जुटाती थी, किस प्रकार अपने वच्चो की देखरेख करती थी, किस योग्यता के साथ उन्होने अपने परिवार को एक टीम का सा रूप दे रखा था और किस प्रकार संगीत ने वच्चो का पालन-पोषण करने में उनकी सहायता की थी। जेनदार्मो (राजनीतिक पुलिस) के साथ उनकी वातचीत, अपने प्रिय पुत्र की फासी के कुछ ही दिन पहले उससे उनकी मुलाकात, उनका साहस और उनके वच्चो का उनके प्रति गहरा आदर-भाव आदि वाते भी अगर वच्चो को वताई जाय तो ज्यादा अच्छा होगा।

इल्यीच में उनकी सघटनात्मक क्षमता का विकास उनके वचपन से ही दिखाई पड़ने लगा था—वे खेल-कूद का प्रवन्ध करते थे, छोटे छोटे वच्चो के साथ खेलते थे और पाठशाला में अपने सहपाठियो की मदद करते

थे। हमें उन दिनों की पुरानी पाठशालाओं का वर्णन करना चाहिए और 'रूढिवादिता' के प्रति इल्यीच की घृणा और जीवन से विच्छिन्न रहने वाले विज्ञान के प्रति उनके आलोचनात्मक पक्ष के बारे में बताना चाहिए।

इल्यीच के बचपन की इस पृष्ठभूमि में बच्चे उनके बाद के वर्षों के क्रिया-कलापों, मार्क्स और एंगेल्स का अध्ययन करने के उनके ढंग तथा कज़ान के मार्क्सवादी मंडलों, विद्यार्थी आन्दोलन और समारा मंडलों में किये गये कार्यों में उनके योग के बारे में बहुत कुछ समझ सकेंगे।

हमें चाहिए कि जब हम पीटर्सबर्ग में सामाजिक-जनवादी संघटन के संस्थापक के रूप में इल्यीच का और मार्क्सवादी मंडलों में किये गये उनके कार्यों का चित्रण करें तो हमें विस्तार के साथ श्रम आन्दोलन के महत्व पर और साथ ही अन्य कई बातों पर भी विचार करना चाहिए—जैसे, सिर्फ श्रमिक वर्ग को ही क्रान्तिवादी आन्दोलन का नेतृत्व क्यों करना था, मार्क्स और एंगेल्स को उसमें इतनी श्रद्धा क्यों थी और इल्यीच को उसकी विजय का इतना विश्वास क्यों था। यहां हमें समाजवाद की भी चर्चा करनी चाहिए।

फिर हमें यह भी बताना चाहिए कि इल्यीच ने जेल में अध्ययन कैसे किया और संघटनात्मक कार्य कैसे सम्पन्न किये। उनके निर्वासन संबंधी अपनी कहानियों में हमें इस बात की चर्चा कम करनी चाहिए कि वे शिकार कैसे करते थे या स्केटिंग कैसे करते थे, हां यह चर्चा अधिक होनी चाहिए कि वे किसानों के साथ क्या क्या बातचीत करते थे और दूसरे साथियों को पत्रों में क्या क्या लिखा करते थे।

उनके वैदेशिक जीवन का चित्रण करने की दृष्टि से यह जरूरी है कि बच्चों को राष्ट्रव्यापी अवैध रूसी अखबार का महत्व समझाया जाय। यह अखबार श्रमिकों को पूरी सच्चाई का दर्शन कराता था, अन्तर्राष्ट्रीय श्रम आन्दोलन के बारे में लिखता था, अन्तर्राष्ट्रीय संघ की चर्चा करता था और श्रम आन्दोलन की विजय में विश्वास रखने वाले बोल्शेवीकों और

उसमें कोई विश्वास न रखने वाले तथा इस आन्दोलन के प्रति गद्दारी करने वाले मेन्शेवीको के बारे में बहुत कुछ जानकारी देता था। यहा इन मतभेदो के ब्यौरो में जाने की कोई ज़रूरत नही।

हमें १९०५ के वर्ष की, प्रतिक्रिया के वर्षो की, रूसी प्रवासियो की, विजय में आस्था की, १९१४ की लड़ाई की, अक्तूबर क्रान्ति की और गृह-युद्ध की भी चर्चा करनी चाहिए। फिर हमें ज़मीदारो और पूजीपतियो के विरुद्ध हुए सघर्ष के बारे में, देश के आर्थिक और सास्कृतिक विकास के बारे में, श्रमिको और किसानो के बीच के सबधो के बारे में, बुद्धिजीवी वर्ग के श्रेष्ठतर अंश को सोवियतो के पक्ष मे लाने के बारे में और अन्त में इल्यीच की मृत्यु और सोवियत शासन की बीसवी वर्षगाठ के बारे में भी चर्चा करनी चाहिए।

हमें चाहिए कि हम सब से अधिक ज़रूरी, सब से अधिक महत्वपूर्ण और सब से अधिक मूलभूत बातो के बारे में ही बातचीत करे। नारे कम हो तथा सरल और सुबोध कहानियो का बाहुल्य हो।

बेशक, हमें बच्चो की उम्र और शिक्षा-दीक्षा का ध्यान रखना चाहिए। हमें प्राथमिक स्कूल के बच्चो के साथ एक ढंग से और उच्च कक्षाओ के विद्यार्थियो के साथ दूसरे ढंग से बातचीत करनी चाहिए। लेकिन दोनो ही के सामने हमें लेनिन की एक सच्ची तस्वीर रखनी चाहिए—वे सभी प्रकार के दमन और शोषण के विरुद्ध मोर्चा लेने वाले, समस्त श्रमिक जनता के लिए समृद्ध, स्वस्थ, सांस्कृतिक और आनन्दमय जीवन की कामना करने वाले अर्थात् समाजवाद के लिए लडने वाले, व्यक्ति थे। इसमें कोई सन्देह नही कि बच्चे इसे समझेंगे।

हमें लेनिन को एक ऐसे सुधारक के रूप में नही चित्रित करना चाहिए जो बच्चो से कहा करता हो: "अध्ययन, अध्ययन और अध्ययन बहुत ज़रूरी है" (यहां यह उल्लेखनीय है कि लेनिन ने यह बात प्रौढो के लिए कही थी)। बच्चो को यह धारणा कभी नही होनी चाहिए कि

इल्यीच का प्रेम उनके लिए आमोद-प्रमोद की व्यवस्था – नये वर्ष के प्रीति-भोज, सौगात, आदि – तक ही सीमित था। वे नये वर्ष के प्रीति-भोज के विरुद्ध न थे। उन्होने तो खुद ही १९१८ में वच्चो के एक नये वर्ष के प्रीति-भोज के लिए उपहार भेजे थे क्योकि उन दिनो वच्चो को खाने को वहुत कम मिलता था, क्योकि उन्होने मिठाई की शक्ल तक न देखी थी और, जैसा कि वन-स्कूल के, जहा प्रीति-भोज हुआ था, एक छोटे-से लडके ने मुझे वताया था, वे "पानी में तले हुए आलू" खाते थे। गोर्कि* की नये वर्ष की पार्टी इल्यीच के कहने से नही हुई थी। उन्हे तो वहा लाया भर गया था यद्यपि उस समय वे वीमार थे।

लेनिन को वच्चो मे वातचीत करना वड़ा प्रिय था। उन्हे उनके खाने-पीने और तन्दुरुस्ती की चिन्ता थी। वे इस वात का ध्यान रखते थे कि जरूरतमद माता-पिताओ को वच्चो के कपडे और जूते मिलते रहे। वे वाल-गृहो और वाल-श्रम-सुरक्षा और वच्चो की सार्वजनिक रूप से देखरेख की व्यवस्था करने की ओर विशेप ध्यान देते थे। खुद एक अध्यापक और प्राथमिक स्कूलो के डाइरेक्टर के पुत्र होने के कारण वे यही चाहते रहे कि सभी वच्चो को शिक्षा मिले और वच्चो के एक वास्तविक सोवियत स्कूल की स्थापना की जाय। मार्क्स और एगेल्स ने स्कूलो और वच्चो के पालन-पोपण के सवध में जो भी लिखा था उसका इल्यीच ने अध्ययन और नये, समाजवादी स्कूल के निर्माण का समर्थन किया। वे खुद एक परम्परागत पाठशाला के, एक पुराने माध्यमिक स्कूल के विद्यार्थी थे और वहा की तोता-रटन्त वाली पढाई-लिखाई, अनुशासन और जीवन से उसकी विच्छिन्नता से घृणा करते थे। इस पुराने स्कूल में जो शिक्षा दी जाती थी उसका

---

* मास्को से लगभग २० मील दूर स्थित एक स्थान जहा व्ला० इ० लेनिन ने अपने जीवन के अन्तिम वर्षो में काम और विश्राम किया था।

९/१० भाग अनावश्यक होता था और बाकी १/१० भाग विकृत। उनका कहना था कि सोवियत स्कूल में सिर्फ वही बातें सिखाई जायं जो सब से अधिक ज़रूरी हों, सब से अधिक उपयोगी हों और मौलिक हों; साथ ही यह स्कूल सिद्धान्त को व्यवहार के साथ सबद्ध करे और विद्यार्थियों को मानसिक और शारीरिक दोनों ही कार्यों के लिए तैयार करे। उन्होंने इस बात पर ज़ोर दिया था कि सोवियत स्कूलों को चाहिए कि वे जीवन की गति के साथ, समाजवादी निर्माण के साथ साथ कदम बढ़ायें। इल्यीच चाहते थे कि बच्चों को एक ऐसे सुव्यवस्थित समुदाय का अग बना दिया जाय जो सामाजिक कार्यों में भी भाग लेता हो। उन्होंने इन सब के बारे में १९२० में, तरुण कम्यूनिस्ट लीग की तीसरी काग्रेस में कहा था। उच्च कक्षाओं के समस्त विद्यार्थियों को, तरुण पायोनियर के सभी नेताओं को और तरुण कम्यूनिस्ट लीग के कार्यकर्ताओं को इस भाषण का अध्ययन करना चाहिए, यही सोच कर नहीं कि "इसका अध्ययन किया ही जाना है" अपितु यह सोच कर कि यह हमारे कार्यों का पथ-प्रदर्शक है।

हमें चाहिए कि हम सभी उम्रों के स्कूली बच्चों से कहें कि इल्यीच चाहते थे कि बच्चे बडे हो कर जागरूक कम्यूनिस्ट बनें, अपने पिताओं द्वारा आरम्भ किये गये कार्यों को जारी रखें और हाथों में हथियार लेकर उन कार्यों की रक्षा करें।

स्वाध्याय

स्वाध्याय का संघटन

('स्वाध्याय का संघटन' शीर्षक पुस्तिका से उद्धृत, १९२२)

अक्तूबर समाजवादी क्रान्ति ने मेहनतकशो —श्रमिको और किसानो —के समक्ष ऐसे बहुत-से अवसर प्रस्तुत किये जब कि वे अपने जीवन का पुनर्निर्माण कर सकते थे। श्रमिक ने अपने को अपने उद्यम का मालिक समझा, किसान को जमीन मिली और उसके सपने साकार हुए। इन सब बातो ने मेहनतकशो में क्रियाशीलता का सचार किया, उनमें उत्साह भरा।

लेकिन शीघ्र ही उन्हे मालूम हो गया कि वे एक प्रकार से अशक्त-से है, क्योंकि उनमें प्रारम्भिक ज्ञान का अभाव था। युगो युगो से ग्राम-क्षेत्रो में जो विच्छिन्नता आ गई थी वह युद्ध के कारण दूर हो गई और किसान ने मानव-मात्र के रहन-सहन का ढग अपनी आखो से देखा। उसने विज्ञान के चमत्कार देखे और यह सीखा कि ज्ञानार्जन के द्वारा ही मिट्टी में जीवन डाला जा सकता है, और उसकी अद्‌भुत शक्ति और सपदा का दोहन किया जा सकता है। श्रमिक इसे पहले से ही जानता था।

मेहनतकशो को अपने ही भाग्य का विधाता बना कर क्रान्ति ने उनमें यह आकाक्षा जागृत की कि वे विज्ञान का उपयोग अपने फायदे के लिए करे।

इस आकाक्षा के परिणामस्वरूप श्रमिक और किसान दोनो ही इस बात को अच्छी तरह समझ गये कि ज्ञान के क्षेत्र में हम शून्य है और किसी तरह हमें ज्ञान प्राप्त करना चाहिए।

सोवियत सरकार ने अध्ययन करने की उनकी इस आकांक्षा के प्रति सहानुभूति प्रकट की।

ज़ारशाही शासन के अन्तर्गत पाठशाला-इतर शिक्षा का सघटन बड़ी कंजूसी के साथ किया गया था। सोवियत सरकार प्रौढो के मध्य काम-काज की व्यवस्था करने के लिए विशेष ध्यान दे रही है, और एतदर्थ जितनी धनराशि की ज़रूरत होती है उसे खर्च करने में किसी प्रकार की कंजूसी नही करती।

निरक्षरता के विरुद्ध सघर्ष शुरू हो गया है। गावो में हमने लगभग ८०,००० वाचनालयो और लगभग ३०,००० पुस्तकालयो की स्थापना की है। इनके अतिरिक्त अनेकानेक सोवियत-पार्टी-स्कूल, क्लब आदि खोले गये है, पत्र-पत्रिकाओं का पूर्णोपयोग और कला-कृतियो का प्रचार किया गया है। शिक्षा प्रसार आन्दोलन चलाया गया है और भिन्न भिन्न प्रकार के अध्ययन पाठ्यक्रमो की व्यवस्था की गयी है।

सोवियत शासन को स्थापित हुए पाच वर्ष हो चुके हैं। तब से अब तक जनता में ज्ञान का प्रसार करने की दिशा में राजनीतिक शिक्षा-संस्थाओ ने बहुत योग दिया है।

लाल सेना सस्कृति विषयक कार्यो का दूसरा बडा केन्द्र है।

सभी युवको को लाल सेना में दो वर्ष तक नौकरी करनी पडती है। ये साल बेकार नहीं जाते। लाल सेना के लोगो के लिए, भिन्न भिन्न शिक्षा-स्तरो वाले अनेक स्कूल है, पुस्तकालय है और क्लब हैं (सम्प्रति* लाल सेना क्लबों की संख्या १,२०० से अधिक है जिनमें ६,२०० राजनीतिक, शिक्षा संबंधी, कृषि विषयक तथा अन्य मडल है जिनके सदस्यो की कुल संख्या १,३०,००० से अधिक है)।

---

*अर्थात् १९२२ में।—स० कृ०

ट्रेड-यूनियनो, महिला विभाग* तथा युवक लीग ने भी बड़े बड़े काम किये है।

स्कूलो में प्रवेश तथा छात्रवृत्ति सवधी विशेप सुविधाए दी गई है ताकि यथासभव अधिक से अधिक किसान और मजदूर उच्च शिक्षा-सस्थाओ में आसानी से प्रवेश पा सके। माध्यमिक स्कूलो में श्रमिको तथा किसानो के बच्चो की भर्ती के कायदे आसान कर दिये गये है। विश्वविद्यालयो तथा उच्च शिक्षा की अन्य सस्थाओ के लिए श्रमिको तथा किसानो को प्रशिक्षित बनाने के उद्देश्य से विशेप स्कूलो—श्रमिक फैकल्टियो—की स्थापना की गई है।

किन्तु ये सब कार्य श्रमिक जनता की शिक्षा संबधी मागो के लिए काफी नही है। रूस में, आगामी बहुत काल तक स्वाध्याय का कार्य अत्यधिक महत्वपूर्ण बना रहेगा।

स्वाध्याय तभी लाभप्रद सिद्ध हो सकता है जब लोगो को यह मालूम हो कि क्या पढा जाय और कैसे पढा जाय और अध्ययन की सर्वोत्तम ढग से कैसे व्यवस्था की जाय।

हम बराबर इस बात का अनुभव करते रहते है कि जब श्रमिक अपनी मशीनो पर से और किसान जुताई से निकल कर अध्ययन आरम्भ करता है तो वह कितना नि सहाय होता है।

ये किसान और ये श्रमिक नही जानते कि क्या करे, क्या पढें, कैसे पढें। उनमे उन प्रारम्भिक आदतो का अभाव मिलता है जो किताबो का अध्ययन करने के लिए आवश्यक समझी जाती है। प्राय मनुष्य को पढना तक नही आता और वह ले बैठता है मार्क्स की 'पूजी', नतीजा

---

*कम्यूनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति में, सितम्बर १९१९ में, महिला श्रमिको एवं किसानो के मध्य कार्य विभागो की स्थापना की गई थी। बाद में यह विभाग पार्टी के समस्त स्थानीय सघटनो में खोले गये।

यह होता है कि आखिर में उसे पता चलता है कि वह पुस्तक उसके पल्ले नही पडी।

जिन लोगों में शक्ति और संयम की कमी होती है वे शीघ्र ही निराश हो बैठते हैं। उन्हें पढ़ाई-लिखाई बहुत अखरती है और वे उसे ताक़ पर रख देते हैं। और पढाई अखरती इसलिए है कि उनमें मार्क्स जैसे विषय में पटुता ग्रहण करने का न तो अनुभव होता है और न ज्ञान ही। लेकिन फिर भी वे यह विषय ले बैठते है। यह तो ऐसा ही है जैसे कोई व्यक्ति खाली हाथों भालू का शिकार करने चल दे।

अधिक साहसी और संयमी लोग जिस काम के पीछे पड़ जाते है उसे पूरा कर लेते हैं। लेकिन इस क्रिया में प्रायः उन्हें जरूरत से ज्यादा मेहनत करनी पड़ती है और इस काम में वे अपनी बहुत-सी शक्ति बरबाद कर देते है।

हमारे देश में श्रम-संघटन और उत्पादन संबंधी प्रचार के बारे में बहुत कुछ कहा और लिखा जा रहा है। किन्तु इन सब के माने है— उत्पादन का संघटन।

फ्रेडरिक टेलर तथा दूसरे इंजीनियरो और विशेषज्ञो ने शारीरिक श्रम के संघटन सबंधी प्रश्न का सविस्तर विश्लेषण किया है। फैक्ट्रियो और प्लान्टो में श्रम-सघटन कैसे किया जाय, कारखानों में लेथ मशीनें कैसे लगाई जायं, औज़ारो का वितरण कैसे हो, श्रम विभाजन के क्या तरीके हो, निर्देश कैसे जारी किये जायं और किये गये कार्यो का तखमीना कैसे लगाया जाय इन सब विषयो की ढेरों पुस्तके मौजूद हैं। इन समस्त विषयो पर मुख्यतः एक ही उद्देश्य से विचार किया गया है— समय और शक्ति को नष्ट होने से कैसे बचाया जाय।

श्रम का निपुणता के साथ संघटन करने की दृष्टि से सर्वोत्तम और सब से योग्य श्रमिक वह है जो अपने काम को कुशलतापूर्वक, तेज़ी से और कम से कम समय तथा शक्ति व्यय कर के संपन्न करे।

लेकिन जव कि शारीरिक कार्यों की दशा में हम समुचित श्रम-सघटन के महत्व पर ज़ोर देते है, तो मानसिक कार्यों की दशा में इन स्वस्पष्ट विधि की अवहेलना करते हैं। यह ऐसा सत्य है जो विद्यार्थियो तथा उन लोगो के लिए अत्यावश्यक है जो स्वाध्याय के माध्यम से अपने ज्ञान की वृद्धि करने के लिए मजबूर हो।

अध्ययन के लिए सामग्री का चुनाव

मानव-ज्ञान की परिधि बहुत विशाल है। पिछली कई शताब्दियो में लोगो ने प्रकृति और समाज के सबंध में जो ज्ञान प्राप्त किया है उसे देख कर सहसा विश्वास नही होता। दुनिया में ऐसा एक भी व्यक्ति नही जो इस सारे ज्ञान को अकेले अपने में समेट ले। इस समस्त ज्ञान की प्राप्ति के लिए उसे दस ज़िन्दगिया वितानी होंगी और वे भी काफी न होगी। परन्तु मनुष्य के लिए हर चीज़ जानना आवश्यक भी तो नहीं। मानव-ज्ञान की समष्टि में से उसके लिए इतना ही काफी है कि वह सव से ज़रूरी चीज़ें चुन ले अर्थात् ऐसा ज्ञानार्जन करे जो उसे मज़बूत वनाता हो, जो उसे प्रकृति और विकासो पर अधिकार देता हो, जो उसे प्रकृति की शक्तियो और सपदा का इस्तेमाल करना सिखाता हो और इस वात की शिक्षा देता हो कि मानव-समाज के जीवन को कैसे वदला जाय। इसलिए केवल ऐसे ही विषय चुनने चाहिए जो मनुष्य के लिए सव से अधिक महत्व के हो।

हम सामाजिक क्रान्ति के युग में रह रहे है, ऐसे युग में रह रहे है जव पूजीवाद की पुरानी प्रणाली नष्ट हो रही है, मृत हो रही है और उसके स्थान पर एक नयी, कम्यूनिस्ट प्रणाली जन्म ले रही है। पूजीवाद का आधार शोषण और दमन है। इसने एक ऐसे साम्राज्यवादी युद्ध की आग धधकाई है जिसने सारी दुनिया को हिला कर रख दिया है। इस युद्ध और उसकी विभीषिकाओ ने पूजीवाद का झूठा आदर्शात्मक आवरण

उतार फेंका और सारी जनता को दिखा दिया कि पूजीवाद की प्रणाली का आधार अन्याय है, अनौचित्य है। श्रमिक जनता के मस्तिष्क बराबर काम कर रहे हैं और सामाजिक जीवन के नये नये स्वरूपो की खोज में लगे है। रूस ने एक नये जीवन का निर्माण शुरू कर दिया है मगर इस मार्ग में अनेक बाधाएं है, अनेक कठिनाइया है। स्वभावतया लोग सामयिक समस्याओ में रुचि ले रहे हैं और उन्हे समझना चाहते है, उनका अर्थ ग्रहण करना चाहते हैं।

इसमें कोई दो मत नही हो सकते कि सामयिक घटनाओ की जानकारी अनिवार्य है। जो लोग यह जानकारी प्राप्त करना चाहते है उन्हे अखबार पढना चाहिए। 'प्राव्दा' जैसे कुछ अखबार ऐसी नयी नयी बाते देते है जो पाठक के लिए आवश्यक होती है। इन्हे पढ कर वह बहुत कुछ समझता है। अखबार मस्तिष्क को एक विशेष दिशा में काम करने के लिए मजबूर करता है, किसी विशेष बात की ओर उसका ध्यान आकृष्ट करता है और समस्या को हल करने का रास्ता बताता है। सक्षेप में अखबार एक प्रतिभाशाली और विद्वान भाषणकर्ता तथा व्याख्याता का कार्य करता है अर्थात् लोगो के दिमागो को ठीक ठीक रास्ता दिखाता है और महत्वपूर्ण समस्याएं उनके सामने पेश कर देता है। लेकिन अखबार पढने के साथ साथ यह भी जरूरी है कि किसी विशेष समस्या को हल करने के लिए तत्संबंधी आवश्यक साहित्य भी पढा जाय। यदि मनुष्य पूंजीवादी प्रणाली की जटिल व्यवस्था को नही समझता तो वह इस प्रणाली के विभिन्न पहलुओ को भी समझने की आशा नही कर सकता। इसलिए यदि कोई व्यक्ति वर्तमान स्थिति को समझना चाहता है तो उसे चाहिए कि वह पूजीवादी प्रणाली का, उसकी संरचना का और पूंजीवादी अर्थ-व्यवस्था तथा उसकी आदर्शवादिता का परस्पर संबंध समझे। इसके अतिरिक्त उसे पूजीवादी समाज में जन्म लेने वाली और पनपने वाली

पूजीवाद विरोधी शक्तियो का भी अच्छा ज्ञान होना चाहिए। सामयिक घटनाओ को समझने का यही आधार है।

एक अन्य और वहुत कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न यह है—मानव समाज किस दिशा में वढ रहा है? यह एक मूलभूत और वडा जरूरी सवाल है। कम्यूनिस्टो का कहना है कि विकास सिद्धान्तो को देखते हुए पूजीवादी समाज साम्यवाद की ओर वढ रहा है। मानव समाज किधर जा रहा है इसे समझने के लिए सामाजिक विकास के सिद्धान्तो का अध्ययन आवश्यक है। आदिकालीन सस्कृति में उन सिद्धान्तो का वहुत स्पष्ट और सरल प्रतिपादन हुआ है और इसी लिए उसका अध्ययन करना जरूरी है। लेकिन आदिकालीन सस्कृति का अध्ययन ही तो काफी नही। मनुष्य को यह भी जानना होगा कि समाज का विकास कैसे हुआ, वाद के इतिहास में इन सिद्धान्तो ने समाज पर क्या प्रभाव डाला और पूजीवादी समाज में वे किस प्रकार काम कर रहे है। इस सारे अध्ययन के वाद ही यह पता चलेगा कि समाज किस दिशा मे वढ रहा है।

समाज से सवद्ध प्रश्नो के साथ साथ प्राकृतिक विकास सवधी प्रश्न भी उठते है। मनुष्य मानवसमाज और प्राणिमसार दोनो ही का एक सदस्य है और इसी लिए उसपर मनुष्य और सामाजिक जीवन ही अपना प्रभाव नही डालते अपितु प्रकृति और उसके कार्य भी उसे प्रभावित करते है।

फलत हमें प्रकृति और उसके समस्त विविध रूपो तथा सजीव और निर्जीव प्रकृति के सिद्धान्तो का अध्ययन करना होगा। प्रकृति विज्ञान ने प्रकृति सवधी अध्ययन के लिए एक निश्चित रास्ता दिखाया है—प्रकृति को भली भाति देखो-भालो, अपने निष्कर्ष निकालो और उन निष्कर्षो की परीक्षा करो। इस प्रकार मनुष्य ने इस विधि का उपयोग किया, धीरे धीरे प्रकृति के स्वरूपो और उसकी शक्तियो का अध्ययन किया, एतद्-सवधी अनुभव प्राप्त किये, अपने अनुभवो को एक व्यवस्थित रूप दिया

और इन सब के परिणामस्वरूप इस क्षेत्र मे इतना आवश्यक ज्ञान प्राप्त किया कि वह प्रकृति की उन समस्त संपदाओ और शक्तियो का इस्तेमाल करने में समर्थ हो गया जो मानव-ससार के लिए उपयोगी है। मनुष्य ने प्रकृति-विज्ञान के क्षेत्र में जो ज्ञान प्राप्त किया है उसकी जानकारी वहुत ज़रूरी है, क्योंकि इससे स्पष्ट पता लगेगा कि मनुष्य प्रकृति पर धीरे धीरे कितनी विजय प्राप्त कर चुका है।

प्राकृतिक विज्ञान का एक दूसरा पहलू भी है जो खास तौर से दिलचस्प है। हम विकास की दृष्टि से सामाजिक जीवन का अध्ययन करते हैं। यह भी एक तरीका है प्राकृतिक विज्ञान का अध्ययन करने का। अगर मनुष्य को यह जानना है कि प्रकृति में उसका क्या स्थान है, उसे क्या करना है, अगर वह अपने को पृथ्वी का ही प्राणी समझना चाहता है, तो उसे पृथ्वी तथा मानव के जीवन का उद्भव और पृथ्वी पर वसने वाले प्राणियो और पौधो के विभिन्न वर्गों का अध्ययन करना होगा। निश्चय ही विज्ञान की अन्तिम सफलताओ से परिचय प्राप्त करना ज़रूरी है। लेकिन इतना ही काफी नहीं। इसके अलावा मनुष्य को यह जानना भी ज़रूरी है कि ये सफलताए कैसे मिली और किन किन उपकरणो तथा तथ्यो ने उनमें अपना योग दिया। ज़रूरत इस वात की है कि मनुष्य को सुनी-सुनाई वातो का नही अपितु अपने अनुभवो का सहारा लेना चाहिए। वहुत पुराने ज़माने में कभी लोगो ने पृथ्वी तथा उसपर रहने वाले प्राणियो तथा मनुष्य के उद्भव के सवंध में न जाने कितनी कपोलकल्पित गाथाएं गढ़ ली थी। ये गाथाएं आज भी वैसी ही चली आ रही हैं, यद्यपि पर्यवेक्षणो, अनुसधानो और तथ्यो ने उन्हे झूठा सिद्ध कर दिया है।

कुछ लोगो को यह कहने की धुन-सी पड गई है कि पुस्तक श्रम का एक उपकरण है, अपने सासारिक दृष्टिकोण को व्यापक वनाने का साधन नही। इन लोगो का कहना है कि, "पुस्तक उत्पादन संवधी कार्य

के लिए है, ज्ञानार्जन के लिए नही, और न 'सम्यक् सासारिक दृष्टिकोण के विकास' के लिए ही, जैसा कि पहले कहा गया था। हमारा यही उद्देश्य होना चाहिए।" उनका कहना है कि "हमें चाहिए कि पुस्तक को हथौडे और हसिये की सेविका बनायें।"

ये शब्द अनर्गल है। "पुस्तक उत्पादन संबंधी कार्य के लिए है, ज्ञानार्जन के लिए नही" के क्या माने है? आखिर ये शब्द किस अर्थ के द्योतक है? पुस्तक की उपयोगिता सक्षेप में यही है कि ज्ञान प्राप्त हो। इससे काम का उत्पादन अधिक होगा। और फिर यह कहा जाता है कि "पुस्तक उत्पादन सबधी कार्य के लिए है न कि 'सम्यक् सासारिक दृष्टिकोण के विकास के लिए' जैसा कि पहले कहा गया था।" फिर गलत। सासारिक दृष्टिकोण क्या है? मूलभूत प्रश्नो के इस या उन हल से ही तो वातावरण और प्रकृति के प्रति हमारा रुख निश्चित होता है। क्या हम मूलभूत प्रश्नो को बिना हल किये हुए ही छोड सकते है? नही सकते। क्योकि अगर छोडे तो हम जीवन के सबध में कुछ न समझ सकेगे, कोरे रह जायेगे। यह 'सम्यक्' सासारिक दृष्टिकोण क्या? यही तो वह सुविचारित बात है, जो सभी मूलभूत प्रश्नो के उत्तर देती है— ऐसे उत्तर जो एक दूसरे का खडन नही करते बल्कि उनमें सामजस्य स्थापित करते है। यदि आदमी सभी प्रभुत्व प्रश्नो पर स्वय विचार करे और अपने से विरोध न करे, तो यह बात अच्छी होगी या बुरी? बेशक अच्छी, यदि उसने उन प्रश्नो को ठीक ठीक हल किया है।

ऐसा व्यक्ति जानता है कि उसे क्या करना चाहिए और क्यो। ऐसे व्यक्ति को हम "वर्ग-चेतन मनुष्य" कह सकते है। यह विश्वास करने का आधार है कि वर्ग-चेतन मनुष्य के कार्य अधिक उत्पादनशील होगे बनिस्बत उस व्यक्ति के जो कुछ नही जानता। फलत यह नही समझना चाहिए कि सम्यक् सासारिक दृष्टिकोण अपनाना अवैध और अनाधुनिक है। कुछ भी हो कम्यूनिस्ट प्रयत्न करता है कि वह एक अच्छा

मार्क्सवादी बने। वह भौतिकवादी सासारिक दृष्टिकोण का समर्थक है। उसे विश्वास है कि इससे उसे अधिक द्रुत गति से और अधिक क्षमता के साथ काम करने में मदद मिलेगी।

आवश्यक सामग्री का अध्ययन कैसे किया जाय

यदि कोई व्यक्ति स्वाध्याय आरम्भ करना चाहता है तो उसके लिए यह जानना बड़ा आवश्यक है कि क्या शुरू किया जाय और कैसे शुरू किया जाय। स्वभावतया ऐसे व्यक्ति को वे ही पुस्तके उठानी चाहिए जिन्हे वह समझ सके, विषय और भाषा दोनो ही दृष्टि से। जो व्यक्ति साधारण गणित नही जानता वह उच्च गणित शास्त्र कैसे समझ सकता है; ठीक वैसे ही जैसे उस व्यक्ति को हेगेल समझ में नही आ सकता जो दर्शन शास्त्र में कोरा है। लेकिन फिर इतना ही काफी नही है। यदि कोई व्यक्ति किसी ऐसे विषय की पुस्तक उठा लेता है जिसमें उसकी कोई रुचि नही, जिसका संबंध वह अपने ज्ञान-भांडार अथवा खुद जीवन से नही जोड़ सकता, तो ऐसी पुस्तक उसके लिए तनिक भी उपादेय न सिद्ध होगी। अगर पुस्तक का विषय परिचित है, अगर उसमें उसे अपने अभिलषित प्रश्नो का उत्तर मिल जाता है तो बात अलग है।

एक उदाहरण लीजिये। यह घटना कोई तीस वर्ष पहले स्वयं मेरे ही जीवन में घटी थी। यद्यपि मैंने पाठशाला की पढ़ाई समाप्त कर ली थी, फिर भी राजनीतिक अर्थशास्त्र नामक विषय का नाम तक न सुना था (उन दिनो यह कोई असाधारण बात नही समझी जाती थी)।

एक दिन मेरी एक सहेली ने मुझे इवान्युकोव की राजनीतिक अर्थशास्त्र पुस्तक ला दी और मुझसे अनुरोध किया कि मैं उसे पढ़ू। विषय और भाषा दोनों ही दृष्टि से यह एक सर्वमान्य पुस्तक थी। मैंने उसे पढना शुरू कर दिया और घोट गई। इसमें मेरा काफी समय लगा। मैंने उसे समाप्त कर लिया लेकिन उससे मैंने पाया कुछ नहीं। कुछ

महीनो वाद जब मै मंडल की बैठको में भाग लेने जाने लगी तो मुझे अनुभव हुआ कि राजनीतिक अर्थशास्त्र का जानना जरूरी क्यो है। मैंने मार्क्स पढ़ना शुरू किया। उसमें मुझे मजा आया और 'पूजी' का पहला भाग मैंने बडी जल्दी समाप्त कर दिया। इससे मैंने बहुत कुछ सीखा समझा था। मेरे लिए एक पतली और लोकप्रिय पुस्तक का समझना एक मोटी वैज्ञानिक पुस्तक से अधिक दु साध्य सिद्ध हुआ।

अपने विषय का विशेषज्ञ प्रतिभाशाली लेक्चरर या अध्यापक अच्छी तरह जानता है कि अपने विषय में दूसरो की रुचि कैसे पैदा की जाय, उनके विचारो को अपेक्षित दिशा में कैसे मोडा जाय, सबद्ध प्रश्न पर उनकी अभिरुचि किस प्रकार केन्द्रित की जाय। बेशक वह कभी कभी विषय की गहराई में नही उतरता लेकिन अगर श्रोताओ को सोच-विचार की ओर अग्रसर कर सका और उनकी उत्सुकता बढा सका तो वह निश्चय ही अमूल्य समझा जायेगा। पुराने जमाने में भाषा-विज्ञान के अध्यापक साहित्य का उपयोग इसलिए करते थे कि उनके शिष्य विषयो पर सोचना-समझना और प्रकाश डालना सीख सके। भाषण-कर्ता यही काम सभाओ में कर सकता है। उत्सुकता और दिलचस्पी पैदा करने के लिए जरूरत है अपने साथियो से बातचीत करने की और अपनी समस्याओ पर मिल-जुल कर विचार विनिमय करने की। यही कारण है कि सामूहिक, वर्गीय या मडलीय कार्य बडा मूल्यवान है। इससे मनुष्य को प्रेरणा मिलती है, सोचने-विचारने की शक्ति मिलती है।

दिलचस्पी के सवाल पर हम कुछ और विस्तार के साथ विचार करेगें।

भिन्न भिन्न लोगो की दिलचस्पिया भी भिन्न भिन्न होती है। कुछ की दिलचस्पी सामाजिक कार्यों में होती है, कुछ की टेक्नोलाजी मे और कुछ की कला में, आदि आदि। किसी को कुछ पढने के लिए मजबूर करना और अपने मन की चीज–ऐसी चीज जिसमें वह खो जाय–पढना

ये दो अलग अलग चीजें है। दोनो मे जमीन आसमान का फर्क है। इन दोनो प्रकार के अध्ययन से जो परिणाम उपलव्व होते है वे एक दूसरे से विल्कुल निराले होते है, एक पूरव एक पश्चिम। उदाहरणार्थ, हमारा अनुभव है कि जव वच्चे का दिमाग किसी एक चीज में व्यस्त रहता है तो दूसरी चीज समझ सकना उसके लिए टेढी खीर वन जाता है। "विश्वास करो या न करो, विश्वास करो या न करो, पुश्किन को दूसरी वार मिला जीरो ही।"

पुश्किन लीसीयम में पढने मे इतना फिसड्डी क्यो था? क्या इसलिए कि वह निकम्मा था, काहिल था। नही, विल्कुल नही। फिसड्डी इसलिए था कि उसे जो कुछ सीखना चाहिए था वह उसे नही सिखाया गया था, फिसड्डी इसलिए था कि उसकी दिलचस्पी काव्य के क्षेत्र मे थी। इन पक्तियो ने कवि की मानसिक स्थिति का उल्लेख किया है जव वह अपनी रुचि के विपय से परे रहता है और फिर जव उसकी रुचि सवधित विपय मे पैदा हो जाती है

कभी घडी ऐसी आती है—
जगती की इस दौडधूप की सुधवुध खो कर कवि की आत्मा
सो जाती है।
नीद कि क्या तोडे से टूटे—
गीत कलपते हो तो कलपें, वीणा भले हाथ से छूटे।
कवि नगण्य से भी नगण्य समझा जाता है—
क्योकि आत्म-ज्ञापन का कौतुक उसे नही विल्कुल भाता है।
पर भावुक-मन, नाम 'अलौकिक' का सुनते ही चौक-चिहुककर,
निद्रा तज कर वडी कला से जग जाता है—
फिर तो श्रेष्ठजनो में भी वह श्रेष्ठ शिरोमणि कहलाता है।*

---

*पुश्किन रचित 'कवि' से। —स०

पुश्किन ने अलंकारिक भाषा में 'अलौकिक' शब्द का प्रयोग किया है परन्तु वास्तव में उसका अर्थ है दिलचस्पी।

पुश्किन ने कवि के लिए जिस आध्यात्मिक मानसिक स्थिति का उल्लेख किया है उसका प्रयोग किसी भी ऐसे व्यक्ति के लिए हो सकता है जो किसी निश्चित विषय में स्पष्ट, गहरी और एकरस दिलचस्पी लेता हो। उदाहरणार्थ, किसी ऐसे चिकित्सक को ले लीजिये जो अपने पेशे के पीछे दीवाना हो। इस क्षेत्र के बाहर उसकी आत्मा प्राय 'सुषुप्तावस्था' में मिलेगी—उसके इर्द-गिर्द क्या कुछ हो रहा है इसकी उसे कोई चिन्ता नही, कोई परवाह नही। लेकिन जैसे ही बात उसकी विशेषज्ञता पर आकर अटकेगी कि वह "चौंक-चिहुककर, निद्रा तज कर बडी कला से जग जाता है।" यदि आप ध्यान से लोगो को देखें तो आपको लगेगा कि उनमें से अधिकाश ऐसे है जो किसी न किसी चीज़ में विशेष रुचि लेते है। कुछ लोगो की दिलचस्पी ठोस विषयो मे होती है जैसे मानव समाज का पुनर्निर्माण, तो कुछ की आग बुझाने वाले कामो मे और कुछ की अपने बच्चो में, आदि आदि। प्राय इस दिलचस्पी का कारण है और वह यह कि उनपर किसी चीज़ का प्रभाव बडा गहरा पडा है, प्राय बहुत काल से पडता रहा है। मै एक विशेषज्ञ आग बुझाने वाले को जानती हू। जब वह दस वर्ष का था तो उसने कही आग लगती हुई देखी। इसका उसपर बडा गहरा असर हुआ। जब घर लौटा तो बडा उत्तेजित था। ऐसा कोई भी न था जिससे उसने आग का जिक्र न किया हो। आग बुझाने वाले ने अपने काम में जिस साहस का परिचय दिया था उसका उसपर खास असर पडा था। उसकी कल्पना भी जीवित हो उठी और उसने उस दृश्य का एक चित्र बना डाला जिसमें उसने अतिरंजित रंग भर दिये। फिर उसकी बडी-सी जिन्दगी उसके सामने आई—पाठशाला के लम्बे लम्बे, किन्तु नीरस वर्ष, एक साधारण कर्मचारी की जिन्दगी और वह पेशा जिसमें वह हार्दिक रुचि लेता था। उसने सद

छोटे-से नगर के फायर-ब्रिगेड में स्वयसेवक के रूप में काम किया था।

पुश्किन के जिन्दगी भर के कार्यो का आधार था उसकी पुरानी आया की काव्यात्मक अप्सरा-कथाए जिन्होंने उसे बहुत अधिक प्रभावित किया था।

जब कभी हम अपनी विशेष रुचि के स्रोत का पता लगाते है तो हम उसे अपनी प्राचीनता में, कभी कभी तो अतीत के गर्भ में, पाते है, किसी ऐसे अनुभव के रूप में जिसका संबंध मनुष्य की भावनाओ से हो।

दिलचस्पी ही हमारा ध्यान किसी विषय पर केन्द्रित करती है। ध्यान देने की यह प्रक्रिया प्रेरित भी हो सकती है और अप्रेरित भी। पहली दशा में वह स्थायी नही रहता। हमें बार बार उसकी आवृत्ति करनी होती है। अप्रेरित ध्यान के लिए हमारी मन शक्ति के प्रयासो की आवश्यकता नही। उसमें योही पूर्णता और गहराई होती है। जो विद्यार्थी इतिहास में दिलचस्पी नही लेता उसे अध्यापक के स्पष्टीकरणो पर अपना ध्यान एकाग्र करना दुष्कर प्रतीत होता है। उसके विचार उडे उडे फिरते है, केन्द्रित नही हो पाते। वह अपने विषय पर एकाग्र नही हो पाता। फलत वह बार बार अपना ध्यान अपने विषय की ओर आकृष्ट करता है और इसमें उसे काफी प्रयास करने पडते है।

यदि दूसरी ओर विद्यार्थी की रुचि इतिहास में है तो वह बिना किसी प्रयास के अपने अध्यापक की बात समझ लेता है। जो व्यक्ति किसी एक ही विषय पर जितने ही अधिक काल तक अपना ध्यान केन्द्रित करेगा उसमें वह उतनी ही आसानी से पटुता भी प्राप्त कर लेगा। जिस व्यक्ति को पर्याप्त ज्ञान नही होता और जो विषय को आसानी से नही समझ सकता वह एक ही विषय पर अधिक समय तक एकाग्र नही रह सकता। इसी लिए उस विषय में उसकी दिलचस्पी अन्तत॰ समाप्त

हो जाती है। बुद्धि-कौशल इस बात में है कि मनुष्य, अपने अध्ययन और समस्याओ के प्रति मौलिक दृष्टिकोण अपनाते हुए, उसी विषय पर बार बार अपना ध्यान केन्द्रित करे।

जिन तथ्यो और विषयो पर मनुष्य को अपना ध्यान केन्द्रित करना पड़ता है वे उसे खूब याद रहते है। प्रसिद्ध वैज्ञानिक पस्तेर को माइक्रोबायोलाजी से संबद्ध न जाने कितने तथ्य और छोटे ब्यौरे याद थे। लेकिन उसे 'ऍंगेलस' प्रार्थना याद न रह सकी जिसे वह अपनी पत्नी के साथ रोज़ पढता था। रुचि के विषय में प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक विलियम जेम्स लिखता है—

"बहुतो की स्मृति बडी तेज़ होती है लेकिन उन्ही विषयो मे जिनमें उनकी रुचि होती है। खेलकूद में भाग लेने वाला विद्यार्थी किताबो के मामले में तो कोरा रहेगा लेकिन भिन्न भिन्न खेलो में किसने कौनसा रिकार्ड तोडा आदि बाते उससे सुन कर आप आश्चर्यचकित हो जायेंगे। खेलकूद की सूचनाओ के बारे में उसे आप चलता-फिरता कोश ही समझिये। कारण स्पष्ट है। उसके दिमाग में ये बाते बार बार उठती है। वह उनकी तुलना करता है और माला के रूप में उन्हे सजाता है। यह उसके लिए ऊबड-खाबड तथ्य नही अपितु धारणा-पद्धति है। इसी लिए ये बाते उनके दिमाग में जम जाती है। यही कारण है कि व्यापारी की ज़बान पर भाव और राजनीतिज्ञ की ज़बान पर दूसरे राजनीतिज्ञो के भाषण और वोट देने के परिणाम रहते है। इन्हे देख सुन कर दूसरो को आश्चर्य होता है। लेकिन इसका कारण स्पष्ट है। ये बाते उनके दिमाग में इतनी बार उठती है, वे इनपर इतना सोच-विचार करते है कि वे उनके दिमाग़ में जम जाती है।

"हो सकता है कि डारविन और स्पेन्सर जैसे लोगो ने, अपनी पुस्तको में, तथ्यो को याद रखने के संबंध में जिस महा-स्मृति का परिचय दिया है वह उनके मस्तिष्क के सामान्य ग्रहण-शक्ति के

अननुरूप नही। यदि कोई व्यक्ति अपने जीवन के प्रारम्भिक काल से ही क्रम-विकास के सिद्धान्त को सत्यापित करने का काम हाथ में ले ले तो उससे सवधित तथ्य शीघ्र ही उसके मस्तिष्क में ऐसे चिपक जायेंगे जैसे लताग्रो में अगूर के गुच्छे।

"तथ्य सिद्धान्त-पक्ष के अनुसार ही आपस मे सम्वद्ध रहेगे, और मस्तिष्क जितना उनका फर्क समझ पायेगा, उतनी ही उसकी जानकारी वढेगी। हो सकता है कि सिद्धान्त निरूपक की स्मृति कमजोर हो और इसलिए वह अव्यवहृत तथ्यो पर ध्यान न दे और सुनते ही उन्हे भूल जाय। किसी क्षेत्र में उसका अज्ञान उतना ही व्यापक और विराट हो सकता है जितना कि किसी विपय में उसका ज्ञान, उसका पाडित्य। लेकिन फिर दोनो ही साथ साथ रह सकते है और इस सारे मकडी के जाले के वीच लुक-छिप सकते है।" ('मनोविज्ञान के सिद्धान्त'–लेखक विलियम जेम्स।)

दिलचस्पी के कारण ध्यान आकृष्ट होता है और ध्यान देने से चीज दिमाग में वैठती है, याद रहती है।

ऊपर जो कुछ कहा गया है उससे पता चलेगा कि दिलचस्पी का एक विशेप स्थान है। यही कारण है कि जव सामग्री का चुनाव किया जाय तो इस वात का ध्यान रखा जाय कि वही सामग्री ली जाय जिसमें उसे रुचि हो, जो उसे सव से अच्छी लगती हो। इस दृष्टि से कुछ लोग सामाजिक क्रियाशीलता पसन्द करेगे, कुछ टेक्नोलाजी, कुछ कला, आदि।

अध्ययन के आधार के रूप में ज्ञान के किसी विशिष्ट विपय को चुन लेने का मतलव यह नही है कि वह दूसरे विपयो पर ध्यान ही न दे। नही, ऐसा नही होना चाहिए। प्रश्न सिर्फ यही है कि दूसरे विपयों को वह उठाये कैसे।

उदाहरणार्थ, आपके दो विद्यार्थी है–एक की रुचि टेक्नोलाजी में है तो दूसरे की सामाजिक विज्ञान में। मान लो दोनो ही को विजली

जैसे विषय का अध्ययन करना पड़ता है। तो दोनों ही इसका अध्ययन अपने अपने ढग से करेंगे। टेक्नीशियन इसका अध्ययन इस दृष्टि से करेगा कि रूसी सोवियत संघात्मक समाजवादी जनतन्त्र में विद्युतकरण के लिए कौन कौनसी टेक्निकल सुविधाए जरूरी है। उसका अध्ययन एक इसी दृष्टिकोण के इर्द-गिर्द रहेगा। लेकिन आवश्यक सुविधाओ की योजना तैयार करने में उसे सामाजिक दशाओ की ओर भी ध्यान देना होगा क्योंकि वे इन सुविधाओ के निर्माण में सहायक होंगी। अतएव वह यहा अपनी विशेष रुचि के कारण सामाजिक दशाओ का समुचित अध्ययन करेगा।

सामाजिक विज्ञान में रुचि रखने वाला इस समस्या को एक दूसरे ही दृष्टिकोण से देखेगा। बिजली सोवियत प्रणाली की भौतिक बुनियाद के रूप में अपरिहार्य है। लेकिन यह निश्चित करने के लिए कि रूसी सोवियत संघात्मक समाजवादी जनतन्त्र में विद्युत की व्यवस्था करना सम्भव है या नही उसे बिजली, बिजली की साधन-सामग्री आदि का परिचय प्राप्त करना होगा।

हमारे देश में विद्युतकरण पर एक बडी लोकप्रिय पुस्तक लिखी गई है, जो एक अच्छी पाठ्यपुस्तक का भी काम दे सकती है। पुस्तक के लेखक कोई विद्युत इजीनियर नही वस्तुत सामाजिक कार्यकर्ता है (इ० इ० स्तेपानोव)। इस उदाहरण से स्पष्ट पता चलता है कि रुचि केवल यही निर्धारित नही करती कि अर्जित ज्ञान कितना है अपितु यह भी कि उस ज्ञान तक पहुचा कैसे जाय, उस ज्ञान तक, जिसके इर्द-गिर्द दूसरे सारे ज्ञान चक्कर लगाते है।

"हर नया विचार, हर नया ज्ञान उन विचारो और उन ज्ञान से संबद्ध, 'समाविष्ट' होना चाहिए," जैसा कि मनोवैज्ञानिक कहते है, "जो विद्यार्थी का अपना है। नये को चाहिए कि वह पुराने को साथ रहे।'

विलियम जेम्स का कथन है कि "नये को पुराने के साथ समाविष्ट कर सकने, हमारी धारणाओ की सुपरिचित शृंखलाओ के प्रत्येक आकस्मिक

अतिक्रमक का मुकावला कर सकने, और उसे रूप वदले हुए पुराने मित्र की तरह पहचान लेने से अधिक आनन्ददायक और कोई चीज़ नही। नये का इस प्रकार सफलतापूर्वक आत्मसात करना वस्तुतः वौद्धिक लालसा का ही एक स्वरूप है। आत्मसात के पूर्व, नये का पुराने के साथ सवध विस्मयकारक है। हमें उन वस्तुओ के संबंध में न तो उत्सुकता ही होती है और न विस्मय ही जो हमसे इतनी दूर हो कि उन्हें समझने के लिए न तो कोई धारणाएं ही हो और न उनकी नाप-तौल के लिए कोई मानदंड ही।"

डार्विन का उदाहरण देते हुए जेम्स का कथन है कि जब फीजियनो ने छोटी छोटी नावे देखी तो उन्हे वडा आश्चर्य हुआ लेकिन वडे जहाज़ देख कर उन्हे कोई आश्चर्य न हुआ।

किसी विपय में थोडी-सी जानकारी तद्विषयक उसकी ज्ञानपिपासा को उद्दीप्त करती है। जेम्स का कथन है कि "शिक्षण का एक वडा सिद्धान्त यह है कि हर नये ज्ञान को पहले से चली आती हुई उत्सुकता के साथ संवद्ध किया जाय अर्थात् उसका समावेश किसी ऐसे विपय में किया जाय जिसकी जानकारी पहले से ही हो। इसी लिए यह लाभप्रद समझा जाता है कि दूरस्थ और अपरिचित चीज़ो की तुलना निकटस्थ चीज़ों से की जाय, ज्ञात चीज़ो के उदाहरण से अज्ञात का स्पष्टीकरण हो और सारे *शिक्षण* को *विद्यार्थी* के *निजी* अनुभवो से सवद्ध किया जाय।

"यदि किसी अध्यापक को सूर्य से पृथ्वी तक की दूरी समझानी हो तो वह यह प्रश्न करे—'अगर सूरज पर से कोई व्यक्ति सीधे तुमपर तोप का गोला चलाये तो तुम क्या करोगे?' 'रास्ते से हट जाऊगा,' जवाव होगा। 'इसकी कोई ज़रूरत नही,' अध्यापक समझायेगा, 'वस अपने कमरे में जाओ, सोते रहो और फिर उठो और तव तक इन्तज़ार करते रहो जव तक कि तुम अपनी नौकरी में स्थायी नही कर दिये जाते

यानी पहले कोई व्यवसाय सीखो और इतने वडे हो जाओ जितना मैं हू, तव कही तोप का वह गोला नजदीक आयेगा और तुम्हे कूद कर एक तरफ हट जाना पडेगा। तो इतनी दूरी है सूरज से पृथ्वी तक की।'" ('मनोविज्ञान के सिद्धान्त', लेखक विलियम जेम्स।)

अध्ययन के लिए आवश्यक सामग्री चुनने में मनुष्य को चाहिए कि वह पहले से ही ज्ञात विषय के साथ नवार्जित ज्ञान का सवध स्थापित करे और उसपर भरोसा रखे। प्रश्न यह नही कि विभिन्न विज्ञानो का ऊपरी ज्ञान प्राप्त किया जाय और आदमी चलता-फिरता कोश वन जाय। जरूरत इस वात की है कि मनुष्य के पास जो भी ज्ञान पहले से है उसी को धीरे धीरे सपूर्ण वनाया जाय और नवार्जित ज्ञान को पूर्वज्ञात विषयो से सवद्ध किया जाय। अतएव, प्रश्न आधारस्वरूप किसी विषय में दिलचस्पी लेने और उस ज्ञान में निरतर वृद्धि करने का है।

ज्ञान प्राप्त करना ही महत्वपूर्ण नही, महत्वपूर्ण यह है कि उसे सम्यक् रूप से क्रमवद्ध किया जाय।

इस स्थिति में 'शिक्षा' शब्द का अर्थ है कि मनुष्य अपनी धारणाओ के केन्द्र के चारो ओर उन नयी नयी धारणाओ का जाल-सा विने जो उस केन्द्र से सवद्ध हो, जुडी हो।

किसान और श्रमिक दोनो ही अपने अपने ढग से ज्ञानार्जन करेंगे क्योंकि उनके जीवन के अनुभव और ज्ञान के क्षेत्र भिन्न भिन्न हैं।

जव भिन्न भिन्न पाठ्यक्रम और प्रौढ स्कूलो के विषयक्रम निर्धारित किये जाते है तो उपर्युक्त वातों पर प्राय ध्यान नही दिया जाता और इस वात पर भी ध्यान नही दिया जाता कि विद्यार्थियो के स्तर भिन्न भिन्न होगे। सवाल ज्ञान के परिमाण का नही, इस वात का है कि वह ज्ञान किस क्रम में और किस रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

किसी विषय में निपुणता प्राप्त करने के लिए मुख्य आधार है पुस्तक। समसामयिक जीवन और समसामयिक सस्कृति में इसका वडा महत्वपूर्ण

स्थान है। "मानव सस्कृति पूर्वजो से उतरती है और उनके समस्त अनुभव, ज्ञान और आविष्कारो के सग्रह-रूप का प्रतिनिधित्व करती है। अगर ऐसा न होता और प्रत्येक पीढी को सब कुछ आरम्भ से ही शुरू करना पडा होता तो मनुष्य अपनी आदिकालीन स्थिति में ही होता, उससे आगे न गया होता। पुस्तक की सहायता से अनुभव और ज्ञान का प्रसार होता है। पुस्तक ही ज्ञान को संग्रहीत और पीढी दर पीढी सक्रामित करती है। और हर पीढी इस ज्ञान को समृद्ध बनाती है, इसका प्रसार करती है और मनुष्य उन्नति के मार्ग पर बढता चला जाता है।" (आ० आ० पोक्रोव्स्की—'पुस्तकालय के काम'।)

इसलिए यह सीखना अनिवार्य है कि पुस्तक का उपयोग कैसे किया जाय। यह भी आवश्यक है कि एकाग्रचित्त से, मन ही मन, अधिक और तेज़ पढने की आदत डाली जाय।

लेकिन यही काफी नही है। यह भी जरूरी है कि जो कुछ पढा जाय उसे समझा भी जाय। यह एक कठिन कार्य है क्योंकि इसके लिए अपेक्षित है पाडित्य, व्यापक दृष्टिकोण तथा शब्दो और धारणाओ का एक अच्छा सग्रह।

मनुष्य जितना ही परिपक्व होगा उतना ही वह उन सारी बातो को समझेगा जिन्हे वह पढता है। यह जानना भी बहुत जरूरी है कि वह क्या समझता है क्या नही, इसका भी फर्क समझ ले और जो स्थल उसे स्पष्ट नही है उनका विश्लेषण करे। इसके लिए एक सुगम रास्ता यह है कि ऐसे स्थलो को बार बार पढा जाय, उनमें निहित विचारो, भावो और दुर्बोध्य शब्दो पर मनन किया जाय और विषय समझने के लिए राजनीतिक कोश, विश्वकोश, पाठ्यपुस्तको और लोकप्रिय पुस्तको आदि का प्रयोग किया जाय। जब शब्द का अर्थ स्पष्ट हो जाय तो उस सारे वाक्य को लिख लिया जाय और रट लिया जाय जिसमें वह शब्द आता है। फिर उस शब्द का प्रयोग करते हुए वैसे ही कुछ वाक्य सोचे जायं। मतलब

यह कि मनुष्य को चाहिए कि वह इस क्षेत्र में बच्चों की नकल करे। मुझे एक छ वर्षीय बालिका की याद है जिसने जीवन में 'तत्काल' शब्द पहले-पहल सुना था। अगले आधे घटे में उसने भिन्न भिन्न प्रसगो मे यह शब्द दस-बारह बार दोहराया। बेशक, उसकी यह क्रिया अचेतन रूप से हो रही थी। किसी प्रौढ अथवा युवक को, जरूरत पडने पर, नये नये शब्दो का स्वत इस्तेमाल करने के लिए यही प्रणाली अपनानी चाहिए। मुख्य बात यह है कि शब्द के सम्यक् अर्थ तथा उसके भावा और मतलब इत्यादि के सूक्ष्म अतर को समझा जाय और इस बात के प्रति सावधानी बरती जाय कि कही इसका गलत इस्तेमाल न हो जाय।

अपरिचित शब्दो और व्यजनाओ के अर्थ को समझने आदि का स्वाभाविक परिणाम यह होता है कि पाठक का ध्यान पुस्तक के मूल विचार से दूर जा गिरता है। इस कठिनाई को दूर करने के लिए यह जरूरी है कि शीघ्र से शीघ्र साहित्यिक भाषा में निपुणता प्राप्त की जाय और उसे, स्वत, इस्तेमाल करने का ढग सीखा जाय।

क्या क्या पढा जा चुका है इसपर मनन करना भी आवश्यक है और इसके लिए एक निश्चित प्रणाली अपनाई जानी चाहिए।

सर्वप्रथम, पुस्तक समाप्त कर चुकने के बाद, लेखक का तात्पर्य, उसका प्रधान विचार और उन तर्कों को समझना चाहिए जिन्हे वह अपने विचारो की पुष्टि में प्रस्तुत करता है (आरम्भ में हर अध्याय के साथ साथ ही ऐसा करना ठीक रहेगा।)। लेखक के विचार किस दिशा में काम करते रहे हैं इसे समझना बडा जरूरी है। किताबो को सचेत पढते रहने की पहली शर्त है उन्हे ठीक ठीक समझना।

लेखक क्या कहना चाहता है इसे समझना कभी कभी कठिन होता है। इसलिए प्राय पुस्तक को दुबारा और तिबारा तक पढना जरूरी हो जाता है। क्या पढा गया है उसका विश्लेषण करते समय यह जरूरी नही

कि पाठक हर शब्द या छोटी छोटी बात याद रखे। इससे नुक़सान ज्यादा होगा फायदा कम। चाहिए तो यह कि ज़रूरी और मुख्य बाते चुन ली जायं और यह देखा जाय कि उनकी पुष्टि में शेष सामग्री ने कितना योग दिया है। कभी कभी अपने मुख्य विचारो को स्पष्ट करने की दृष्टि से लेखक कुछ तथ्य देता है या अपने समर्थन में तर्क उपस्थित करता है। सबसे अच्छा तो यह होगा कि पुस्तक समाप्त कर लेने के बाद लिखित रूप में उसकी रूपरेखा तैयार की जाय। लेकिन इस सब के लिए काफी अभ्यास की ज़रूरत है।

फिर पाठक को चाहिए कि वह पुस्तक के विषय को पचाये। यदि मुख्य विचार का समर्थन तथ्यो द्वारा किया गया है तो यह देखना ज़रूरी है कि (१) ये तथ्य ठीक ठीक प्रस्तुत किये गये है या नही, (२) वे तर्कसंगत है या नही। पाठक को चाहिए कि वह समान तथ्यो पर अथवा ऐसे तथ्यो पर मनन करे जो प्रस्तुत किये गये तथ्यो के बिल्कुल विपरीत हो। जब लेखक अपने विचारो के समर्थन में कोई तर्क रखता है तो पाठक को उसी जैसा कोई दूसरा तर्क रखना चाहिए, फिर दोनो की तुलना करके यह निश्चय करना चाहिए कि दोनो में से कौन अधिक अच्छा है। पाठक को इस बात पर भी विचार करना चाहिए कि इस सवाल का कोई दूसरा पहलू भी है या नही। यह सब कर चुकने के पश्चात् पाठक को यह निश्चय करना चाहिए कि वह लेखक से सहमत है या नहीं और अगर नही सहमत है तो किन किन बातो में।

पुस्तक पढते समय पाठक को सभी अपेक्षित चीजें लिख लेनी और याद कर लेनी चाहिए—तारीखें, नाम और आकड़े। कभी कभी तो इन आकड़ो के आधार पर एक रूपरेखा बना ली जानी चाहिए ताकि जो कुछ उसने पढ़ा है उसका स्पष्ट चित्र उसके सामने आ जाये। पाठक को जो विचार और भावाभिव्यक्तियां पसन्द आयें उन्हें अलग लिख लेना बड़ा ज़रूरी है। लेकिन लम्बे लम्बे उद्धरण न उतारे जायं क्योंकि उन्हे समझना

पुस्तक समझने की तरह ही कठिन है। केवल सब से आवश्यक चीज़ें लिखनी चाहिए, प्रबन्धो के रूप में और एक दूसरे से अलग अलग। लिखावट साफ हो, पठनीय हो।

मोटी मोटी कापिया, जिनमें वह ऐसे लम्बे लम्बे उद्धरण उतारता है, जिन्हे देख कर खुद उसे ही उनके सिर पैर का पता न चला सके, कोई खास उपयोगी नही होतीं। इसके विपरीत जिन कापियो में सक्षिप्त, सारवान् और स्पष्ट लिखित उद्धरण होते है, वे निश्चय ही बडी उपयोगी होती हैं, क्योकि इन्हे देख कर उसे तुरन्त याद आ जाती है कि उसने क्या क्या पढा है और फिर उसके दिमाग में तुरन्त ही सारे आकडे और अन्य सामग्री घूम जाती है। यह तरीका है उद्धरण लिखने का। शुरू में मनुष्य को बिना अपना समय बचाये हुए इसका अभ्यास करना चाहिए। एतदर्थ आरम्भ में उसे छोटे छोटे लेख उठाने चाहिए और इस प्रकार मेहनत बचाने वाले ढग से यह काम करने की आदत डालनी चाहिए।

बेशक, कुछ दशाओ में लम्बे लम्बे उद्धरण लिखना उपयोगी है। यदि पुस्तक विशेप रूप से रोचक और महत्वपूर्ण है तो पाठक को लम्बे लम्बे सक्षेप लिखने और बडे बडे उद्धरण उतारने में सकोच नही करना चाहिए और इसपर जो समय लगा है उसकी शिकायत नहीं करनी चाहिए। ऐसा तब करना चाहिए जब, उदाहरणार्थ, पाठक किसी रिपोर्ट या लेख में पुस्तक का हवाला देना चाहता हो।

ऐसे पाठक के लिए, जिसने लेखन कला या साहित्यिक भाषा की कला में पटुता नहीं प्राप्त की है, लम्बे लम्बे उद्धरण उतारना उपयोगी सिद्ध होगा। ऐसी दशा में नकल करना अधिक श्रेयस्कर है। अच्छा तो यह होगा कि पाठक ने जो कुछ पढा है वह उससे सबद्ध रुचिकर चीज़ो की ही नकल करे। दूसरी चीज़ो की नकल करने से इस प्रकार की नकल अधिक उपयोगी है।

किन्तु नियमत , सक्षिप्त, सारवान् और छोटे छोटे उद्धरण उतारना बेहतर है।

और इसलिए, पहला काम यह है कि पाठक जो कुछ पढ रहा है उसे ठीक से समझे और उसमें पटुता प्राप्त करे।

दूसरा यह कि जो कुछ पढा गया है उसपर मनन किया जाय।

तीसरा यह कि आवश्यक उद्धरणो को उतार लिया जाय।

और अन्त में, यह निश्चय किया जाय कि किताव से कोई नया ज्ञान प्राप्त हुआ है या नही, वह ज्ञान आवश्यक और उपयोगी है या नही, इससे पाठक को पर्यवेक्षण की अथवा काम करने के नये नये तरीको की जानकारी हुई है या नही, इससे उसमें किन्ही विशेष मानसिक स्थितियों और आकाक्षाओ का विकास हुआ है या नही।

इस प्रकार हम पुस्तक पढने के सबध में एक योजना बना सकते है।

बेशक, इस योजना में रद्दोबदल हो सकते है और भिन्न प्रकार से प्रश्न बनाये जा सकते है। उदाहरणार्थ, गणित अथवा प्राकृतिक विज्ञान के अध्ययन में सभवत इस योजना का आशिक रूप से उपयोग किया जा सकता है। जरूरत एक निश्चित योजना बनाने की है क्योकि तभी हमारा काम अधिक फलदायक सिद्ध हो सकेगा। किसी भी काम में निश्चित प्रणाली का विशेष महत्व होता है। इसके परिणामस्वरूप पाठक प्राय. वे चीजें देखता है जिन्हे दूसरे नही देख पाते। उदाहरणार्थ, हम जानते है कि जब नैपोलियन अपनी सेनाओ की देखभाल करता था तब उसकी निगाह सैनिको की वर्दियो के छोटे से छोटे उन भद्देपनो पर भी पहुंच जाती थी जो अफसरो को सर खपाने के बाद भी नही दिखाई पडते थे। उत्तर बहुत आसान है, सेनाओ की देखभाल की प्रणाली नैपोलियन की अपनी थी, निश्चित थी। उसकी निगाह त्रुटियो पर ही पडती थी।

आइये हम एक ही विषय पर भिन्न भिन्न विशेषज्ञो की प्रतिक्रिया का अध्ययन करे। उदाहरणार्थ, कलाकार जब किसी पौधे को देखता है तो

उसके सामने उसका रग, उसकी चमक-दमक और उसका रूप-सौष्ठव होता है। वह बिल्कुल भूल जाता है कि फूल में कितना पराग है, कितनी पखुडिया हैं और वे किस प्रकार बटी हुई हैं। यह बात उसकी पर्यवेक्षण प्रणाली का अग नही है। इसके विपरीत वनस्पतिशास्त्री पहले उसकी पत्तिया देखेगा, फूलो की पखुडिया आदि देखेगा और इस बात पर बिल्कुल ध्यान न देगा कि फूल में कितनी चमक है और वह इस या उस पृष्ठभूमि में कैसा लगता है। यही बात पढने के सबध में है। सबसे जरूरी चीज है कि विषय को कैसे उठाया जाय। इससे पाठक को इस अन्तर का भी पता चलता है कि अगर उसने पुस्तक किसी दूसरे ही दृष्टिकोण से उठाई होती तो कौनसी चीज़ उससे चूक जाती। धीरे धीरे उसे विशेष ढग से किताब पढने की आदत पड जाती है।

पुस्तको से हमें ज्ञान की प्राप्ति होती है और दूसरो के अनुभवो का परिचय मिलता है लेकिन हम इसी ज्ञान का और अधिक रसास्वादन कर सकते है जब हम स्वय अपने अनुभवो से उसे परखे। यह पढना कि "तूफान के समय समुद्र कितना शानदार, कितना विराट लगता है, एक बात है और अपनी आखो से यही दृश्य देखना दूसरी। इसी प्रकार हम यह भी पढते हैं कि मशीनो से उत्पादन में लगने वाले समय की बचत होती है, लेकिन इसकी सच्चाई वे ही समझ सकते है जिन्होने सामानो को पहले अपने हाथो से तैयार किया हो और फिर मशीनो से। आख या कान जैसे किसी अग की शल्य-चिकित्सा के बारे मे पढना बिल्कुल वैसा ही नही है जैसा कि अपने हाथो मे शल्य-कर्म करना।

यही कारण है कि अनुभवी मनुष्य, जिसने लोगो को और उनके रीति-रिवाजो को देखा है, उस व्यक्ति की अपेक्षा प्राय अधिक जानता है जिसने उनके बारे में पढा भर है, काफी नजदीक से उन्हे देखा नही। इसलिए हम 'अनुभवी' डाक्टरो, 'अनुभवी' अध्यापको आदि की [illegible] करते है और इसमे कोई तत्व होता है।

मध्य युग में वड़े वडे दिलचस्प और शिक्षात्मक रीति-रिवाज थे। शिशिक्षु पाठ्यक्रम समाप्त करते ही कारीगर नहीं वन जाता। पहले उसे एक निश्चित समय तक के लिए यात्रा करनी पडती है, दूसरे नगरो में भ्रमण करना पड़ता है, भिन्न भिन्न कारीगरो के अधीन काम करना होता है और यह देखना होता है कि उसके सहयोगी कैसे रहते थे और दूसरी जगहो में कैसे काम करते थे।

यही कारण है कि जो व्यक्ति स्वशिक्षा में लगा हुआ है उसके लिए पुस्तको से प्राप्त ज्ञान को अपने निजी पर्यवेक्षणो और अनुभवो की कसौटी पर परखना वहुत ज़रूरी है।

इस सवंध में विशेप रूप से आवश्यक वाते है कृपि सग्रहालयो, नुमाइशो, आदर्श खेतो तथा फैक्ट्रियो में जा कर वहुत कुछ खुद अपनी आखो से देखना। हमें सैर-सपाटो से भी काफी फायदा उठाना चाहिए। हा, देखना सिर्फ यही है कि वे एक व्यापारिक ढग से आयोजित किये जायं और महज़ मनोरंजक यात्राएं वन कर ही न रह जायं। जो कुछ हम देखें लिख ले, योजनाए वनायें (अगर हमें योजनाए वनानी आती हो), अपने ऊपर पड़ने वाले प्रभावो को अकित करे। हमें यात्राए करने, नये नये स्थानो और लोगो को देखने-भालने और उनके रहन-सहन तथा काम आदि करने के ढंग को देखने-समझने के हर अवसर का सदुपयोग करना चाहिए। साधारण से साधारण जीवन तक भी पर्यवेक्षण और अध्ययन के लिए काफी सामग्री प्रस्तुत कर सकता है। वस ज़रूरत इस वात की है कि हम जो कुछ देखना चाहते है उसकी एक योजना पहले से तैयार करे और फिर उसके अनुसार चल कर अपेक्षित निष्कर्ष खुद निकाले।

यदि यह कार्य सामूहिक रूप से किया जाय तो अधिक सजीव भी होगा और अधिक लाभप्रद भी। इससे लाभ यह होगा कि इस प्रकार के कामो में भाग लेने वाले व्यक्ति अपने अपने पर्यवेक्षणो पर विचार-विनिमय कर सकेगे और चूकि हर व्यक्ति चीज़ो को खुद अपने ढंग से देखता है,

दूसरे से भिन्न दृष्टिकोण से, अतएव इस विचार-विनिमय से जो परिणाम निकलेगा उससे विषय का पूरा पूरा अध्ययन किया जा सकेगा, खासकर इस कारण कि जब एक ही चीज़ को बहुत से लोग देखते हैं तो वे उन बातों को भी देख लेते हैं जिन्हें एक पर्यवेक्षक चूक सकता है।

समय और शक्ति की बचत करो

अमरीकी लोग व्यवहारिक व्यक्ति हैं। वे हमेशा कहा करते हैं "समय ही धन है।" उनके पास हाई स्कूलों और कालेजों में अध्ययन के संघटन के संबंध में बहुत बडा साहित्य है—दुर्भाग्यवश हम रूसी इस प्रकार के साहित्य से प्राय अपरिचित हैं—जिसमें वे युवक अमरीकियों को यह दिखाते हैं कि शक्ति को कैसे बचाना चाहिए और सफलता के लक्ष्य तक पहुंचने का आसान रास्ता क्या है। अमरीकियों को यह सब खूब सिखाया जाता है और हमें भी वही बात सीखनी चाहिए।

सम्प्रति, शक्ति और समय बरबाद करने का हमें कोई अधिकार नहीं।

हम दो प्रकार की सामाजिक पद्धतियों के बीच रह रहे हैं पुरानी पूंजीवादी पद्धति अन्तिम सासें ले रही है और नयी कम्यूनिस्ट पद्धति पनप रही है। इन दिनों हम अपने बाप-दादाओं की तरह नहीं रह सकते। हर दिन कोई नयी चीज़ लाता है। इसलिए हमें चाहिए कि हम उसे खुद अपनी आंखों से देखें, उसे परखें और फिर उसके संबंध में अपने निश्चय करें। लेकिन यह सब ठीक ठीक कर सकने के लिए हमें बहुत कुछ जानना-समझना होगा।

यही बात सामान्यतया श्रमिक वर्ग पर और विशेषतया हर श्रमिक पर लागू होती है। अब काहिली के साथ, आराम के साथ काम करने का वक्त नहीं। हमें चाहिए कि हम यथासम्भव अधिक से अधिक पढ़ें, लिखें, अध्ययन करें।

रूस कभी एक अपेक्षाकृत पिछड़ा हुआ देश था। भाग्य से हमें ही सब से पहले सामाजिक क्रान्ति का झंडा ऊंचा करने का मौका मिला। हमने उसे इन पाच सालो तक ऊंचा रखा है। यदि रूस को विश्वक्रान्ति के गढ के रूप में वने रहना है तो यह जरूरी है कि वह अपने भौतिक आधारो को मजबूत करे। ऐसा करने के लिए यहा के निवासियो को कमर कस कर अध्ययन करना होगा और तदर्थ समय और शक्ति की सबसे अधिक वचत करनी होगी।

युवक श्रमिको और किसानो से जीवन की माग है कि वे यह वचत करे। श्रमिक और किसान अपना अधिकाश समय मेहनत में लगाते है। वे अपने खाली समय में ही स्वाध्ययन कर सकते है और खाली समय उनके पास वहुत कम रहता है।

और इसलिए उस ऐतिहासिक युग की, जिसमें हम रह रहे है, रूस की विशेप स्थिति की और विद्यार्थियो के एक वडे भाग की रहन-सहन की दशाओ की यह मांग है कि हम अपने समय और शक्ति में अधिक से अधिक वचत करे। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए निम्नलिखित वाते अपरिहार्य है:

(क) अपने समय को ठीक ठीक ढंग से विनियमित करना;

(ख) अधिक से अधिक अनुकूल कार्य दशाओ का सृजन करना;

(ग) पुस्तको का अध्ययन करने के लिए अपेक्षित आदते डालना;

(घ) अध्ययन के लिए सम्यक् सामग्री चुनना;

(ङ) काम का विधिवत् वितरण करना;

(च) समय और शक्ति की वचत करने की दृष्टि से सामूहिक कार्यो के स्वरूपो को निश्चित करना;

(छ) आवश्यक साधन और सहायक सामग्री का प्रवन्ध करना;

क. पहले-पहल हम समय को विनियमित करने के संवंध में कुछ कहेगे।

यह स्पष्ट है कि यदि हमें अपने समय का लाभप्रद रीति से उपयोग करना है तो हमारे लिए यह जानना जरूरी है कि हम उसे ठीक ठीक किस प्रकार विनियमित करे। सामान्यतया हम अपने समय का इस्तेमाल करते कैसे है?

हम नियमित घटो में काम करते है सिर्फ फैक्ट्रियो मे या फिर दफ्तरो में। बाकी समय हम किसी न किसी प्रकार गुजार देते है,— दोस्तो से गप्पें लडाते हैं, बिस्तरे में पडे पडे वाहियात उपन्यास पढते हैं, आदि आदि। और रात को पता चलता है कि हमने अपना कितना समय बरबाद कर डाला। और तब हम कोई उपयोगी पुस्तक उठाते है लेकिन तभी हमें लगता है कि हम पूरी तरह थक चुके है और किसी काम के नही रहे। जगने के लिए हम धुआधार सिगरटें पीते हैं, किताब एक तरफ रख देते है और किसी न किसी दोस्त के साथ सुबह तक गप लडाते हैं या फिर बहस में पड़ जाते है। और सुबह जब उठते है तो आखो मे खुमारी होती है और शरीर में भारीपन।

विदेशी समय का मूल्य समझते है। वैज्ञानिक, लेखक तथा प्रोफेसर जल्दी सोते और जल्दी उठते है, और सुबह का जब ताजा होते है सब काम करते है, दूसरो के घर गप लडाने यथासम्भव कम से कम जाते है। वे समय का बडी कठोरता के साथ बाधते है। नियम से उठते है, काम करते है, भोजन करते है, आराम करते है और निश्चित समय तक सोते रहते है। इस व्यवस्था से उनकी कार्यक्षमता काफी बढ जाती है।

प्रसिद्ध वैज्ञानिको और लेखको ने अपने समय को कैसे विनियमित किया था इस बात की जानकारी सचमुच बडी दिलचस्प सिद्ध होगी।

उदाहरणार्थ, हम लेव तोलस्तोय को ले सकते है। उन्होंने उपन्यास लिखे, कहानिया लिखी यानी ऐसी ऐसी रचनाए की जो इतना अधिक लेखक की मानसिक स्थिति पर निर्भर होती है। लेकिन फिर भी उनका जीवन बडा नियमित था। प्रातःकाल वह सख्त मेहनत करते। कोई भी ...

बार लिखते, फिर उसी को दुबारा लिखते, फिर तिबारा। लेखक साधु-सन्यासियो की तरह नही रह सकता। उसे तो लोगो के पास उठना बैठना चाहिए, उनके जीवन का निकट से अध्ययन करना चाहिए। तोलस्तोय ने इस प्रयोजन के लिए भी समय निर्धारित कर रखा था, पढने के लिए भी, और दूसरी चीज़ो के लिए भी।

सेर्गेयेन्को ने 'तोलस्तोय कैसे रहते और काम करते है' शीर्षक अपनी पुस्तक में तोलस्तोय के जीवन के इसी पक्ष का सुन्दर चित्रण किया है।

एमिल जोला ने भी उपर्युक्त पद्धति ही अपनाई थी। इस लेखक ने अनेकानेक उपन्यास लिखे जिनमें उसने पूजीवादी समाज के विभिन्न वर्गों का चित्रण किया है। ज़ोला प्रात काल छ बजे उठता और तोलस्तोय की ही भाति प्रात काल लिखता तथा अपना बाकी समय उस सामाजिक सरचना का अध्ययन करने में व्यतीत करता जिसके बारे में वह लिखता था।

बडे बडे सगीतज्ञो, उदाहरणार्थ, बीथोवन की जीवनकथा ले लीजिये और आपको पता चलेगा कि इस सगीतज्ञ का अधिकाश समय पियानो-वादन में व्यतीत होता था। उसने अपने समय को बडी कठोरता के साथ बाट रखा था।

प्रकृतिवादी, डाक्टर, और वैज्ञानिक अपने समय के साथ दूसरो से कही अधिक सख्त है। ये लोग अपनी अपनी प्रयोगशालाओ में यन्त्रो और माइक्रास्कोप के साथ काम करते है या शरीरशास्त्रीय अनुसन्धानो में लगे रहते है। इस दृष्टि से एडिसन, पस्तेर तथा अन्य विद्वानो के बारे मे जानकारी प्राप्त करना भी आवश्यक है।

प्रसिद्ध शल्य-चिकित्सक कोचर ने भी दिन-प्रति-दिन का एक निश्चित कार्यक्रम बना रखा था। इस कार्यक्रम के अनुसार वह उस समय भी काम करता रहा जब वह बूढा हो चुका था। वह हमेशा निश्चित समय पर सोने जाता और शल्य-कर्म आदि के लिए अपने हाथो को मज़बूत बनाने के निमित्त टेनिस खेलता था।

एसे ही दूसरे उदाहरण भी हैं। मतलब यह कि जो सफलता प्राप्त करना चाहे उसे बडी होशियारी के साथ अपने समय को बचाना और व्यवस्थित करना होगा।

ख. बिना समय और शक्ति का अपव्यय किये हुए सम्यक् रूप से काम करने के लिए जिस दूसरी चीज की जरूरत है वह है अधिक से अधिक अनुकूल कार्य-दशाओं का सृजन करना।

ताजा और स्वस्थ रहना सब से जरूरी है। थकने के बाद आदमी जो काम करता है वह एक तो अधिक अच्छा नहीं होता और दूसरे धीरे धीरे होता है। बेशक, काम के लिए सब से उपयुक्त समय है प्रातःकाल। इस समय साधारण मनुष्य सर्वोत्तम ढंग से काम कर सकता है। स्वाभाविक है कि अगर आप प्रातःकाल ही अपने काम पर चल देते हैं तो आपके लिए अध्ययनार्थ सुबह का वक्त निकालना मुश्किल होगा, लेकिन अगर आप १०, ११ बजे काम पर जाते हैं तो सुबह के घंटों का जरूर उपयोग कर लेना चाहिए। बहुत देर से सोना सारी खराबियों की जड़ है। यह आदत दूर करनी चाहिए। सायंकालीन अध्ययन थका डालता है। जागने के लिए मनुष्य को तेज चाय पीनी पड़ती है, सिगरेटों के दम लगाने पड़ते हैं या फिर तर्क-वितर्क में उलझना पड़ता है। परिणाम यह होता है कि मनुष्य जल्दी ही थक जाता है और उसकी कार्य-क्षमता गिरती जाती है।

दूसरी शर्त है ताजी हवा। दिमाग तभी ठीक से और मेहनत से साथ काम करेगा जब दिल ठीक ठीक काम करे और दिल के लिए जरूरी है ताजी हवा। कमरा बहुत गर्म न हो। उसमें घुटन न हो। काम करने के पहले खिडकी खोल देना जरूरी है ताकि ताजी हवा कमरे में भर जाय। जिस कमरे में सिगरेटों का धुआ या कोयले की गैस होगी वहां काम करना बहुत कठिन है।

एक अन्य उपयोगी बात है—काम के समय ऐसी कोई चीज न हो जिससे मनुष्य का ध्यान बटता हो। जब शोरगुल हो रहा हो, —

आपके आस-पास लोग बातचीत में उलझे हो और जब आपसे बराबर छोटे-मोटे प्रश्न किये जा रहे हो तो आप नही पढ सकते। दूसरो की शान्ति में बाधा न पडे, शोरगुल न किया जाय, जब कोई पढ रहा हो तो सीटी न बजाई जाय या बातचीत न की जाय। ये सारी बाते सीखनी चाहिए। पुस्तकालय या क्लब में अध्ययन करने का अभ्यस्त होना चाहिए। पुस्तकालयो में पाठक का ध्यान बटाने के लिए ऐसी कोई बात नही होती। इसके अतिरिक्त पुस्तकालयों में आपको विश्वकोश, सदर्भ-ग्रथ, नक्शे, पाठ्यपुस्तके और गम्भीर अध्ययन के लिए जरूरी दूसरी सारी चीजें मिल सकती है।

यह ठीक है कि कभी कभी लोग शोरगुल के बीच भी पढ सकते है लेकिन तभी जब वे पढ़ाई में इतने मशगूल होते है कि उन्हे दीनो-दुनिया की सुध-बुध नही रहती। यूनानी ज्यामितिशास्त्री आर्कमिडीज़ अपने सामने रखी हुई रूपरेखाओ में इतना खोया हुआ था कि जब दुश्मन का एक सिपाही उसके घर में घुस आया तो उसकी ज़बान से सिर्फ यही निकला था: "मेरे वृत्तो को मत छुओ।" लेकिन हर शख्स तो अपने अध्ययन में इतना खो नही सकता कि उसे दीनो-दुनिया की खबर न रहे और वह अपने इर्द-गिर्द होने वाली बातो पर ध्यान न दे। इसी लिए यह ज़रूरी है कि उसकी पढ़ाई-लिखाई में खलल न पहुचाया जाय। यहा यह उल्लेखनीय है कि अगर विद्यार्थी सफलता प्राप्त करना चाहता है तो दूसरी बाते उसे बाधा न पहुंचायें नही तो वह येवगेनी ओनेगिन की भांति हो जायेगा जिसके बारे में पुश्किन ने लिखा है—

"पढ रहा था आख से वह
दूर थे उसके विचार"

यही कारण है कि अध्ययन के लिए सर्वोत्तम समय है प्रात काल। उस समय पिछले दिन की सारी छापें प्राय मिट चुकती है और शान्ति

भग करने के लिए नयी छापो का अभाव रहता है। अगर यह शान्ति उपलब्ध न हो और पढने में मन न लगे तो फिर जरूरी है कि मूड बनाने के लिए काम किया जाय। ऐसे में कमरे में तेजी के साथ टहलिये, चहल-कदमी कीजिये, कोई सुन्दर-सी धुन गुनगुनाइये, अपने किसी चहेते लेखक के दो-एक पृष्ठ पढ डालिये या फिर ऐसा ही कोई दूसरा काम कीजिये।

ग. सफलता प्राप्त करने की दृष्टि से आवश्यक है पुस्तकों का **अध्ययन करने के लिए अपेक्षित आदतें डालना।**

इन आदतो में है—लिखने-पढने, हिसाब-किताब तथा तर्क समझ सकने, आदि की योग्यता।

पाठक को चाहिए कि तेज पढे और मन ही मन पढे, मुख्य वातो को सक्षेप में नोट करता रहे और पुस्तक को एक विशेष उद्देश्य से उठाये। आखिर ऐसी आदते डालने की जरूरत ही क्या? जरूरत इसलिए है कि समय और शक्ति का अपव्यय किये विना काम किया जा सके।

आदत का लाभ यह है कि दिमाग पर जोर नहीं पडता। पशुओं को देखिये। उनकी कितनी ही क्रियाए यन्त्रवत् चलती है। क्यों नहीं मनुष्य के स्नायु-मडल में यन्त्रवत् क्रियाए नहीं होने लगी। प्रौढ यन्त्रवत् वहुत अधिक काम कर सकते है और इसका एक ही कारण है उनका अभ्यस्त कार्य। यदि अभ्यास ने मनुष्य को पूर्ण वनाने, और आदत ने स्नायु तथा मासपेशियो के श्रम में वचत करने मे मदद न दी होती तो उसकी दशा सचमुच वड़ी शोचनीय होती। डाक्टर माड्सले का कथन है, "अगर कई वार कर चुकने के वाद भी काम आसान न जान पडे, अगर हर बार ऐसे काम के लिए चेतनशीलता और एकाग्रता की उतनी ही जरूरत हो तो यह स्पष्ट है कि जीवन भर की क्रियाशीलता एक-दो कामों तक ही सीमित रह जायेगी, और मनुष्य का विकास न हो सकेगा। ऐसा भी

होता है जव आदमी कपडे पहनने-उतारने मे ही सारा दिन विता डाले
वह अपने शरीर की देख-रेख में ही सारी शक्ति लगा देगा, सारा ध्य
उधर ही केन्द्रित कर देगा। उसके लिए प्रति वार हाथ धोना या व
लगाना उतना ही कठिन होता है जितना कि किसी वच्चे के लिए पह
वार। नतीजा यह होगा कि वह थक कर चूर हो जायेगा.. ह
यन्त्रवत् होने वाले गौण कार्यो में अपेक्षाकृत कम थकान आती है–इ
तरीके से मनुष्य की इच्छा विना, उसके शरीर के अगमात्र काम करते है, लेकि
मन स्थिति का चेतनाशील प्रयास शीघ्र ही उसे थका डालेगा।
('मनोविज्ञान के सिद्धान्त', ले० विलियम जेम्स।)

हमें मालूम है कि निरक्षर प्रौढ के लिए हिज्जे और अर्द्ध-साक्ष
व्यक्ति के लिए अपना नाम लिखना कितना कठिन है तथा इसका अभ्या
करने में उसे कितना समय लगाना और कितनी मेहनत करनी पड
है। यह स्पष्ट है कि वह अपना सारा ध्यान इन्ही कार्यो में लगाता
और इसी लिए वह अपनी पढाई की ओर एकाग्र नही हो पाता। उस
सारी शक्ति टेक्नीक की पटुता प्राप्त करने में ही खर्च हो जाती है। इ
लिए यह आवश्यक है कि ऐसे व्यक्ति में अच्छी आदते पड़ें और वह अप
आप काम करना सीखे।

घ. समय और शक्ति की वचत करने की दृष्टि से क्या क्या साम
चुनना चाहिए इसके वारे में हम पहले ही कह चुके है। जो कुछ ह
पहले कह चुके है उसे थोड़े-से शब्दो में फिर कह देना आवश्यक है।

हमें वही विषय उठाने चाहिए जिनमें हमारी पहुंच हो सकती हो
सर्वसाधारण की भाषा में लिखी गई पुस्तके पढिये न कि वे विशेष पुस्त
जिनके लिए विशेष ट्रेनिग की जरूरत हो। अगर हम विशेष पुस्तके पढ
ही चाहे तो पहले हमें उसके लिए अपेक्षित ज्ञान प्राप्त करना चाहिए
किसी ऐसी चीज को उठाना जो हमारे पल्ले नही पड़ सकती महज सम

मानव-ज्ञान अपरिमित है। उसमें से हमें वही चुनना चाहिए जो हमारे लिए विशेष महत्व का हो, जो इसलिए जरूरी हो कि हम अपने चारो ओर की क्रियाशीलता को समझ सके और उसे आवश्यकतानुसार बदल सकने की क्षमता प्राप्त कर सके। श्रमिको तथा किसानो के पास उतना समय या शक्ति नही है कि वे उन्हे अनावश्यक ज्ञान प्राप्त करने में लगा सके।

बेशक, किसी विषय का अध्ययन करने में यथासम्भव सर्वोत्तम पुस्तके ही चुननी चाहिए, ऐसी पुस्तके जो उस विषय का पूरी तरह और ठीक ठीक प्रतिपादन करती हो। अन्तत., पाठक को उस विषय से आरम्भ करना चाहिए जिसमें उसकी सब से ज्यादा दिलचस्पी हो। धीरे धीरे उसे अपने ज्ञान क्षेत्र का विकास करना चाहिए, उस विषय की सब से निकटवर्ती प्रमुख शाखाओ का अध्ययन करना चाहिए और नव प्राप्त जानकारी को मुख्य विचार के साथ सबद्ध करना चाहिए।

ङ. एक निश्चित पूर्वायोजित योजना के अनुसार काम करना चाहिए। अनुभवहीन व्यक्ति प्राय कई काम एक साथ उठा लेता है वह कोई पुस्तक उठाता है, फिर उसे छोड कर दूसरी ले लेता है, एक विषय से दूसरे विषय पर कूदता है और दक्षता किसी में भी नही प्राप्त कर पाता। अध्ययन की इस पद्धति से न तो कुछ पल्ले ही पडता है और न उसने समय या शक्ति की बचत ही होती है। मनुष्य को इस प्रकार विषयो के सबध मे कूदाफादी नही करनी चाहिए। उसे चाहिए कि अपने आगे एक लक्ष्य बना ले, जो सामर्थ्य के बाहर न हो, निश्चित हो, निर्दिष्ट हो। मान लीजिये आपको पूजीवाद का अध्ययन करना है। यह एक बडा व्यापक विषय है। इसमें दक्षता प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि उसे कई भागो मे विभाजित किया जाय और फिर एक को, उदाहरणार्थ, आधुनिक पूजीवाद को, चुन लिया जाय। उसके बाद उसे, इस विषय को, भी कई भागो में बाट लेना चाहिए, उदाहरणार्थ, इगलैंड जैसे देश

के आधुनिक पूंजीवाद का अध्ययन शुरू कीजिये। आपको इस मार्ग का अनुसरण करते हुए पूंजीवाद के वर्तमान चरण में ब्रिटिश श्रमिक वर्ग की स्थिति का अध्ययन करना चाहिए। इसे अच्छी तरह से जान समझ लेने के वाद फिर आगे किसी दूसरे संवद्ध विपय को उठाना चाहिए। इस प्रकार विपय का भी अच्छा ज्ञान हो जाता है और समय और शक्ति का भी अपव्यय नहीं होने पाता। लेकिन इस योजना को तैयार करने के लिए विपय का सामान्य ज्ञान तो होना ही चाहिए, थोड़ा भी हो तो भी कोई वात नही।

श्रम संघटन के वारे में प्रसिद्ध अमेरिकी इजीनियर फ़्रेडरिक टेलर का कथन है कि हर कर्मचारी को, हर श्रमिक को, एक निश्चित कार्य सौंपा जाना चाहिए। वह लिखता है, "किसी व्यक्ति का मस्तिष्क और आचरण जितना ही प्रारम्भिक अवस्था में होगा, उसके लिए यह वात उतनी ही जरूरी है कि वह सरल और छोटे छोटे काम उठाये। स्कूल का कोई भी अध्यापक वच्चो को सामान्य रूप से यह नही वतायेगा कि अमुक पुस्तक या अमुक विपय पढ लो। यह प्राय एक सार्वभौमिक नियम-सा वन गया है कि प्रत्येक दिन के लिए एक एक सवक निश्चित किया जाता है, जैसे किसी पृष्ठ पर लिखी कोई कविता या कहानी पढना, और इस प्रकार पाठ्यपुस्तक क्रमवद्ध ढग से पढाई जाती है।"

टेलर का कथन पूर्णत. सत्य है। पहले-पहल अध्ययन करते समय मनुष्य को अपने लिए आसान और सरल काम निश्चित कर लेने चाहिए। तभी उन कामो को पूरा किया जा सकता है।

आरम्भकर्ता के लिए योजना तैयार करना एक दुष्कर कार्य है क्योकि वह यह नही समझ सकता कि उसे कितना पढ़ना चाहिए अथवा विषय को उपविपयों में कैसे वाँटना चाहिए। इस मामले में उसे उन साथियों की मदद लेनी चाहिए जिन्हे सामान्य विषय का अच्छा ज्ञान है अथवा उपलव्व मैनुअलों और सहायक सामग्री का सहारा लेना चाहिए।

इस सबध में वे लोग कही अच्छे है जो विशेष कोर्सों के विद्यार्थी हैं। ऐसे लोगो के बारे में हमारे किसान कहते है कि "वे दूसरो के मस्तिष्क के सहारे जीते है।" उनकी योजनाए उनके शिक्षकों द्वारा तैयार की जाती है। बेशक, आरम्भ में ऐसा करना आसान है, अनुभवहीन व्यक्ति के लिए तो बेहतर भी है क्योकि इसमें उसके गलत कदम उठाने का कोई खतरा नही। लेकिन अगर उसे खुद ही अपनी कार्य-योजना तैयार करनी पड़े तो उसकी स्थिति ऐसे व्यक्ति की अपेक्षा अधिक अनुकूल होगी जो कोर्सों का विद्यार्थी है, क्योकि वह व्यक्ति ऐसी कार्य-योजनाए तैयार करना सीख लेगा जो उसके अपने व्यक्तित्व और ज्ञान के अधिक अनुरूप होगी।

च. हमें एक और प्रश्न पर भी विचार करना चाहिए अकेले अथवा मडल में पढते हुए क्या किसी व्यक्ति का समय और शक्ति बच सकती है? इस प्रश्न का उत्तर इस बात पर निर्भर है कि मडल में अध्ययन की कैसी व्यवस्था है? यदि मडल के सदस्य पूरी लगन से अध्ययन करते है, यदि वे नियमित रूप से बैठकों में भाग लेते है और उन उत्तरदायित्वो को पूरा करते है जिन्हे वे उठाते है और यदि मडल की अध्यक्षता कोई अनुभवी शिक्षक करता है, तो अध्ययन में विद्यार्थी का बहुत-सा समय और शक्ति बच जाती है। सामूहिक कार्य से हमेशा समय बचता है। एतदर्थ यह जरूरी है कि श्रम-वितरण-प्रणाली आरम्भ की जाय और कार्यों का सम्यक् वितरण किया जाय। विचार-विनिमय से बहुत-सी बाते स्पष्ट हो जाती है और समझ में आती है। अधिक विचार-विनिमय लोगो में रुचि और नये नये विचार पैदा करता है। एक बात और। सामूहिक कार्य लोगो में उमग पैदा करता है और वे और भी अधिक अध्ययन करने लगते है। इन्ही कारणो से मडलीय अध्ययन उपयोगी है। मगर कब? जब उपर्युक्त शर्तें पूरी होती हो। लेकिन अगर मडल के सदस्य देर में आयें या बिल्कुल न आये, अगर वे घर पर अध्ययन न करे और मडल में होने वाले विचार-विनिमय को ही काफी समझ ले मानो अगर वे

स्वतत्र रूप से कोई गम्भीर कार्य न करे तो अच्छा यही होगा कि मंडल से इस्तीफा दे दिया जाय और स्वतत्र रूप से अध्ययन शुरू कर दिया जाय।

छ. आप चाहें स्वतत्र रूप से पढ़ें-लिखें या मंडल में मिल-जुल कर, आपके लिए यह जरूरी है कि अगर आप अपना समय और अपनी शक्ति वचाना चाहते हैं और कायदे से काम करना चाहते हैं तो आपको चाहिए कि आप आवश्यक मैनुअलो और संवद्ध सहायता-सामग्री की मदद ले। आपके पास एक अच्छा राजनीतिक कोश, विश्वकोश, उन समस्त पुस्तकों की, जिन्हें आप पढ़ना चाहते हो तथा जो सर्वाधिक महत्व की हो, सूची और इस संवंध में वे समस्त निर्देशपत्र होने चाहिए जिनमें इस वात का उल्लेख हो कि उन पुस्तको को पढने के लिए आपको क्या क्या जानना जरूरी है, आदि-आदि। अध्ययन सवंधी कुछ ऐसे आयोजनो का होना भी जरूरी है जिनमें भिन्न भिन्न शिक्षा-स्तरो के लोगो के लिए ज्ञान के विभिन्न विषयो के निमित्त वनी वनाई योजनाएं दी गई हों। ज्ञान की सव से प्रमुख शाखाओ के लिए छोटी छोटी पुस्तकें होना तथा स्वाध्याय पर ऐसी ऐसी मैनुअले होना भी आवश्यक है जिनमें इस वात के निर्देश हो कि अमुक अमुक विपय पर स्वतंत्र रूप से कैसे कार्य किया जाय। यह सारी सहायता-सामग्री, मैनुअले और छोटी छोटी पुस्तके स्वतत्र रूप से शिक्षा प्राप्त करने के लिए वडी उपयोगी हैं।

स्वतंत्र रूप से पढ़ने वालों को निर्देश

('पोवीसिम ग्रामोत्नोस्त' पत्रिका, अंक ३, १९३४)

सामान्य नियम

१ यदि स्वाध्याय को सफल वनाना है तो कई आदते डालनी जरूरी है: मन ही मन पढना, वहुत धीरे धीरे न पढना, पुस्तके, अखवार, मैनुअल, लाइब्रेरी-कटलाग कैसे इस्तेमाल किये जाते है यह जानना और

इस बात का ज्ञान होना कि किन किन चीजों के उद्धरण लेने चाहिए और किनकी टिप्पणिया। दूसरे शब्दों में, अगर स्वय ढग से पढना है तो पाठक को स्वाध्याय की न्यूनतम टेक्निकल विधियों से परिचित होना चाहिए।

२ सफल अध्ययन के लिए कुछ नियमो का पालन करना बडा जरूरी है।

पढने का सर्वोत्तम समय वह है जब पढने वाला अधिक थका न हो, यानी जब उसका दिमाग 'ताजा' हो। अतएव अध्ययन का सब से अच्छा समय है प्रात.काल अथवा विश्राम कर चुकने का समय।

मनुष्य को थोडी रोशनी वाले, अधियारे और जरूरत से ज्यादा गर्म कमरे में नहीं पढना चाहिए अन्यथा शीघ्र ही थकान आ घेरेगी। जब आस-पास बातें हो रही हों, जब पाठक का ध्यान बराबर बट रहा हो उस समय पढना-लिखना मुश्किल हो जाता है।

पढना तभी सब से उपयोगी है जब पाठक के पास आवश्यक मैनुअले हो, विश्वकोश आदि हो।

यही कारण है कि किसी वाचनालय अथवा पुस्तकालय में पढना सर्वोत्तम है।

३ आपको क्या पढना चाहिए इस सबध में आपको पहले से ही निश्चय कर लेना चाहिए। कभी कभी मनुष्य अध्ययन करना चाहता है मगर क्या पढा जाय यह वह नहीं जानता। सामूहिक फार्म या फैक्ट्री में काम ठीक ठीक चलता है क्योकि वहा योजनानुसार काम होता है। इसी प्रकार अगर योजना हो, अगर आप जो भी पुस्तक आप के हाथ में पड जाय उसी को ले कर न बैठ जाय, यानी इतिहास से कूद कर साहित्य पर या साहित्य से कूद कर भौतिक विज्ञान पर न झाग-ज्ञार तो स्वाध्याय से लाभ हो सकता है। कोई पार्टी के बारे में जानना चाहता है, कोई सामूहिक फार्मों के बारे में, कोई टेक्नोलाजी के बारे में, कोई शिशु-पालन के बारे में, इत्यादि। कुछ लोग स्कूल या कालेज

कोर्स पूरा करना चाहते हैं तो कुछ माध्यमिक शिक्षा का और कुछ टेक्निकल स्कूल का।

४ आप क्या अध्ययन करना चाहते हैं इस सबंध में निश्चय भर कर लेना काफी नही है। अध्ययन संबंधी योजना तैयार करना वहुत ज़रूरी है। और यही सब से कठिन चीज़ है। आरम्भकर्ता को न तो यही पता रहता है कि उसे कितना ज्ञान प्राप्त करना है और न यही कि यह ज्ञान उसे किस ढंग से प्राप्त करना है; अर्थात् वह नही जानता कि उसे किस क्रम से अध्ययन करना चाहिए, पुस्तके पढ़नी चाहिए, आदि आदि।

इस सिलसिले में अभिस्तावित साहित्य, स्वाध्याय मैनुअले, पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तके वडी सहायक सिद्ध हो सकती है। लेकिन सब से अच्छा तो यह होगा कि पहले वह किसी विशेषज्ञ से बातचीत करे, उससे सलाह करे। अध्यापको, पुस्तकाध्यक्षो अथवा उन परामर्शदाताओ से भी सलाह-मशविरा किया जा सकता है जो पुस्तकालयो द्वारा उन लोगो की सहायता के लिए नियुक्त किये जाते हैं जो स्वतंत्र रूप से अध्ययन करते हैं। कृषिविदो, इजीनियरो, चिकित्सको आदि से भी अच्छी सलाह प्राप्त की जा सकती है।

अध्ययन आरम्भ करने के पहले ली जाने वाली सलाह बड़ी ज़रूरी है। इसका निश्चयात्मक प्रभाव आगे के अध्ययन पर प्राय पडता है।

५. अध्ययन कैसे किया जाय?

(क) मनुष्य को जल्दवाज़ी नही करनी चाहिए अथवा जैसा कि लोग कहा करते हैं उसे "धीरे धीरे जल्दी" करनी चाहिए। स्वाध्याय के लिए जल्दवाज़ी वड़ी हानिकर है।

(ख) मनुष्य को इस वात का ध्यान रखना चाहिए कि वह सारे अस्पष्ट स्थलो को स्पष्ट कर ले। एतदर्थ उसे विश्वकोशो का उपयोग करना चाहिए, जानकारों से सलाह लेनी चाहिए या परामर्शदाताओ से मिलना चाहिए।

(ग) आपने जो कुछ पढा है उसे आप फिर से पढ ले, विशेष रूप से पहले पढी हुई चीज़ जरूर दुहरा ले।

(घ) लम्बी अन्तरावधियां दे कर नहीं पढना चाहिए, विशेष रूप से आरम्भ मे, यानी उस समय जब पढी गई चीज़ दिमाग में न जमी हो। पढना नियमित रूप से चाहिए।

(ङ) उद्धरण याद करने में सहायक होते हैं — यह आवश्यक है कि अपनी कापी में पढी गई चीजो के सर्वाधिक महत्वपूर्ण भाग, मुश्किल शब्दो और वाक्-व्यवहारो के स्पष्टीकरण, नगरो और लोगो के नाम तथा आकडे लिख लिये जाय और उद्धरणो को बार बार पढा जाय। लिखावट साफ हो ताकि उसे समझने में समय न नष्ट हो।

६ यदि मुमकिन हो तो पत्र-व्यवहार-पाठ्यक्रम के लिए उपयोगी वे पाठ्यपुस्तके इस्तेमाल में लाई जाय जिनमें इच्छित विषय में दक्षता प्राप्त करने के लिए आवश्यक सलाह-मशविरा तो रहता ही है साथ ही ऐसी भी अनेक बाते रहती हैं जिनसे पाठक को काफी सहायता मिल सकती है।

स्वाध्याय के विषय में

('तरुण कम्यूनिस्ट' पत्रिका, अक ४, १९३४)

१९१९ में मैंने स्वाध्याय विषय पर पहला लेख 'तरुण कम्यूनिस्ट' के लिए लिखा था। उसमें स्पष्ट रूप से बताया गया था कि "अपने को सर्वोत्तम ढग से शिक्षित करने का तरीका है सामूहिक कार्यों में भाग लेना न कि कक्षाओ में बैठ कर काम करना"। यह ठीक भी है। परन्तु यह लेख १९१९ में उस समय लिखा गया था जब गृह-युद्ध जोरो पर था, जब हम सोवियत सत्ता के लिए लड रहे थे, जब कि देश अधिकतर निरक्षर और आर्थिक रूप मे अस्तव्यस्त था, जब पाठ्यपुस्तकों के लिए काफी कागज न मिलता था और अखबारो के वितरण तक को परिमित करना पडता था, जब स्कूलो की सख्या बहुत थोडी थी। ऐसा इसी लिए

उस समय मेरे लेख का मुख्य विषय था शिक्षा के क्षेत्र में पारस्परिक सहायता का प्रश्न।

उस ज़माने में लोगो में ज्ञान प्राप्त करने की उत्कंठा थी, किन्तु अवसरो की कमी।

तब से अब तक देश की काया-पलट हो चुकी है—अब हमारे यहां सार्वभौम अनिवार्य शिक्षा है, बहुत बड़ी संख्या में निकलने वाले अख़बार है, बड़े बड़े संस्करण वाली पाठ्यपुस्तकें है, सभी तरह के पाठ्यक्रम हैं और रेडियो का जाल-सा बिछा हुआ है। मुख्यतया देश साक्षर है, लोग अधिक चेतनाशील हैं। परन्तु पारस्परिक सहायता के संबंध में मैंने जो बात १९१९ में कही थी वह आज भी उतनी ही उपयोगी है। देश मुख्यतया साक्षर है। फिर सास्कृतिक तकाज़े भी तो काफी बढ गये है और यह भी ज़रूरी है कि निरक्षरता के विरुद्ध चलने वाले संघर्ष में सफलता मिले क्योंकि अब भी गोर्की प्रदेश के सेम्योनोव्स्की जैसे ज़िले मिलते हैं जहां शताब्दियों से चम्मच बनाने की दस्तकारी विकसित होती आई है और जहा बच्चो का अधिक से अधिक शोषण हुआ है। वहां अब भी बहुत-से निरक्षर है। उन राष्ट्रीय क्षेत्रों में भी शत प्रतिशत साक्षरता नही है जहां अभी हाल ही तक लोग मुख्यतया बंजारो जैसा जीवन व्यतीत करते थे, जहा गाव अनन्त स्टेपी में खो जाते थे, और जहा राष्ट्रभाषाओ में पुस्तके छपाने की अब भी बड़ी खराब व्यवस्था है। अर्द्ध-साक्षरता के बारे में भी यही कहा जा सकता है। तरुण कम्यूनिस्ट लीग द्वारा चलाये गये साक्षरता आन्दोलन ने प्रारम्भिक शिक्षा के क्षेत्र में बड़ी सहायता की और देश से निरक्षरता भगाने में बडा योग दिया। मगर सारा काम कुछ इतनी जल्दबाज़ी में किया गया कि शिक्षा की किस्म पर बहुत थोडा ध्यान दिया जा सका और साक्षरता की धारणा संकुचित हो कर रह गई। हमें शिक्षा के प्रारम्भिक रूपों में अपनी रुचि कम नही करनी चाहिए। हमें याद रखना चाहिए कि अब भी हमारे देश में स्वयं

युवकों में भी, बहुत-से अर्द्धसाक्षर है। शिक्षा के प्रत्येक चरण में सामूहिक हित तथा पारस्परिक सहायता अपरिहार्य है। जो कुछ मैंने १६१६ में कहा था वह आज भी उतना ही सत्य है।

परन्तु इस लेख में मै एक दूसरे प्रश्न, अर्थात् स्वाध्याय के प्रश्न, इस प्रश्न की ओर, कि स्वत. ज्ञान कैसे प्राप्त करना चाहिए, ध्यान आकृष्ट करना चाहूगी। सोवियत सरकार के आरम्भिक वर्षो मे हमारे स्कूलो ने अध्ययन की अपेक्षा बच्चो के सामान्य विकास पर अधिक ध्यान दिया था। उस समय कुल मिला कर शिक्षा की व्यवस्था बहुत बुरी थी। अध्यापन के कोई अच्छे कैडर न थे। हमें समस्त शिक्षण-प्रणाली का सघटन करना पडा था और इस कार्य ने हमे विशेष रूप मे व्यस्त रखा था। पिछले कुछ वर्षो में हमने अपना ध्यान पढाई-लिखाई, दूसरो में ज्ञान का प्रसार करने, व्याख्यान देने, अध्यापको द्वारा विद्यार्थियो को दिये गये, और पाठ्यपुस्तको में सन्निहित, ज्ञान मे दक्षता प्राप्त करने की ओर दिया था। शिक्षा हमारे लिए सब से महत्वपूर्ण विषय है। 'ज्ञान ही शक्ति है' शीर्षक अपने पैम्फ्लेट में विल्हेल्म लीब्क्नेख्त ने, जो मार्क्स और एगेल्स का निकट का सहयोगी था, लिखा था कि गुलामो के मालिक, जमींदार और पूजीपति ज्ञान के सहारे अपने स्वार्थो को प्राप्त करने की कोशिश कर रहे है, इसे अपने विशेषाधिकार का प्रश्न बना रहे है और जनता को ज्ञान प्राप्त करने से रोकने के लिए यथासम्भव सभी कुछ कर रहे है।

लेनिन ने यही बात १८६५ में 'रबोचेये देलो' नामक अवैध अखबार के लिए लिखी थी। पुलिस ने छापा मार कर इस लेख की हस्तलिपि जब्त करके लेनिन को गिरफ्तार कर लिया था। यह लेख सोवियत शासन की स्थापना के बाद पुलिस सग्रहालय में मिला और पहले-पहल लेनिन की मृत्यु के बाद १६२४ में प्रकाशित किया गया। लेख का शीर्षक था 'हमारे मत्री क्या सोच रहे है?' लेख के अन्त में लिखा था. "श्रमिको, तुम खुद देखो कि हमारे मत्री इस बात से कितने

भयभीत है कि तुम्हे ज्ञान प्राप्त होगा। तुम हर शख्स को दिखा दो कि कोई भी शक्ति श्रमिको को चेतनाशील वनने से नही रोक सकती। ज्ञान के विना श्रमिक असहाय से रहते है परन्तु ज्ञान का आधार लेकर वे शक्तिशाली वनते है।"* इस हस्तलेख के जब्त हो जाने के वावजूद वाहर काम करने वाले साथियो ने इस विचार को अपने प्रचारात्मक कार्यो का अग वनाने का ख्याल नही छोड़ा। १८९६ में, अपनी गिरफ्तारी के छ महीने वाद, इल्यीच ने मई दिवस पत्रक लिख कर इस प्रवन्ध का विस्तार सहित उल्लेख किया था और इसे चोरी चोरी जेल के वाहर भी भेज दिया था। पत्रक में कहा गया था. "हम श्रमिको को अधेरे में रखा जाता है, ज्ञान के प्रकाश से वचित, क्योकि वे नही चाहते कि हम यह सीखें कि अच्छी दशाओ के लिए कैसे लडा जाता है।" तव से, संघर्ष के लिए ज्ञान प्राप्त करने की आवश्यकता पार्टी के कार्यकर्ताओ की समस्त प्रचारात्मक और आन्दोलनकारी क्रियाशीलता का सिद्धान्त वन गई है। और अन्यथा होता भी क्या? मार्क्स और एगेल्स के कथन, जिन्होने श्रमिक वर्ग को उनके संघर्षो के लिए शस्त्र दिया है, न तो दैविक सदेश ही हैं और न आविष्कार ही। वे वैज्ञानिक ग्रन्थ है जिनमें इस वात पर प्रकाश डाला गया है कि समाज किस दिशा में वढ रहा है और विजय कैसे प्राप्त की जा सकती है।

युवक लीग के समक्ष क्या क्या कार्य हैं इस संवंध में भाषण करते हुए, १९२० में, लेनिन ने कहा था: "और अगर आप यह पूछें कि मार्क्स के उपदेश लाखो और करोडो क्रान्तिकारियो के दिलो पर क्यो छा जाते है तो आपको वस एक जवाव मिलेगा—क्योकि मार्क्स ने पूजीवाद के अधीन प्राप्त मानव-ज्ञान के ठोस आधार पर कदम रखा था। मानव समाज के विकास के सिद्धान्तो का अध्ययन कर चुकने के वाद मार्क्स इस निष्कर्ष

*व्ला० इ० लेनिन, ग्रन्थावली, चतुर्थ रूसी संस्करण, खड २, पृष्ठ ७६।

पर पहुंचा था कि पूजीवाद का विकास अनिवार्य है जो साम्यवाद की ओर बढ रहा है। और खास बात यह है कि यह बात उसने इन पूजीवादी समाज के सब से शुद्ध, सब से विस्तृत और सब से गम्भीर अध्ययन के आधार पर, और उन सब बातो को आत्मसात् करने के बाद, कही थी जिन्हे पहले के विज्ञान ने जन्म दिया था।"*

अवसरवादी लोग बराबर यही सिद्ध करने की कोशिश करते रहे कि मार्क्स और एंगेल्स के कथनो का कोई भी वैज्ञानिक आधार नही है।

चालीस वर्ष पहले, १८९५ में, ब्रेसलाऊ (जर्मनी) में एक पार्टी काग्रेस में कुख्यात अवसरवादी डेविड ने कहा था कि श्रमिक वर्ग की पार्टी (उस समय उसे सामाजिक-जनवादी पार्टी कहते थे) एक ऐसी पार्टी है जिसमें सकल्प है, ज्ञान नही। क्लारा ज़ेतकिन ने इस बात का सख्त विरोध किया था। उसने कहा था. "मेरा विचार है कि सामाजिक-जनवादी पार्टी सोद्देश्य सकल्प वाली पार्टी है, इसलिए कि वह सोद्देश्य ज्ञान वाली पार्टी है।"

१९०८ की पार्टी काग्रेस में इस बात पर फिर विचार-विमर्श हुआ। बूर्जवा समाचारपत्रो के लिए अवसरवादी मायेरब्रेहर ने एक लेख लिखा था जिसमें उसने कहा था "उत्पादन के समाजवादी तरीके की कार्यान्विति ऐतिहासिक अनुभव का परिणाम न होगी, यह एक पूर्णत 'सयोजित विचार' है, यह मामला है निष्ठा और आशा का।" इस धारणा की आलोचना करते हुए क्लारा ज़ेतकिन ने क्रोध में आकर कहा था—

"यह सिवा इस दृष्टिकोण के निषेध के और कुछ भी नही है कि भविष्य का तथाकथित समाजवादी राज्य एक ऐसी चीज़ है जो ऐतिहासिक दृष्टि से अपरिहार्य और समाज के प्राकृतिक विकास का परिणाम है। और भी आसान शब्दो में हम कह सकते है कि यह समाजवाद को कल्पनावादी-समाजवादियो के सिद्धान्तो तक पीछे ढकेलना ही नहीं बल्कि

*ब्ला० इ० लेनिन, चुने हुए ग्रन्थ, खड २, भाग २, पृष्ठ ४८८।

सीधे सीधे उसे पुरोहिती व्यवस्था में परिवर्तित करना है। मैं समझती हूं कि यह वडा जरूरी है कि पूरी दृढ़ता के साथ घोषित किया जाय कि जो लोग मार्क्सवाद के सैद्धान्तिक आधारो के वारे में इतने कोरे और चकराये हुए है वे सर्वहारा वर्ग को समाजवाद का ज्ञान देने तथा उसके शिक्षक और नेता वनने के लिए विल्कुल अयोग्य है। (जोर की तालियां।) जो व्यक्ति भी इन विचारो से सहमत है, ऐसे विचारो से जो उस स्पष्ट, गहरे, वैज्ञानिक ज्ञान के लिए एक आघात है जिसे सामाजिक-जनवाद जनता में लाने और अपनी व्यावहारिक क्रियाशीलता का आधार वनाने का प्रयास कर रहा है उस व्यक्ति को चाहिए कि वह समाजवादी सांसारिक दृष्टिकोण में संशोधन करने की हिम्मत करने से पहले किसी कोने में चुपचाप और विनम्रता के साथ वैठ कर समाजवादी सिद्धान्त का अध्ययन और मनन करे।" (देर तक तालियां।)

अब जर्मनी के अवसरवादी फासिस्टवाद के हामी वन गये है जो वैज्ञानिक समाजवाद से किसी दूसरी चीज की अपेक्षा कहीं अधिक घृणा करता है। फासिस्टवादी मार्क्सवादी साहित्य को जलाते हैं परन्तु मार्क्सवाद के संस्थापको द्वारा प्रकाश में लाई गई ऐतिहासिक प्रक्रिया को रोकना, उस प्रक्रिया को रोकना, जिसका अन्त निश्चय ही समाजवाद की विश्वव्यापी विजय में होगा, उनकी ताकत के वाहर है।

हमारी पार्टी का इतिहास वताता है कि पार्टी ने मार्क्सवाद के सिद्धान्तों के लिए, उसकी विकृति के विरुद्ध, संघर्ष किये है।

उदाहरणार्थ, हम लेनिन का पहला वड़ा ग्रन्थ ''जनता के मित्र' क्या हैं और वे सामाजिक-जनवादियो के विरुद्ध कैसे लड़ते है?' (खड १) ले सकते हैं। यह ग्रन्थ मार्क्सवाद के वैज्ञानिक मूल्य के संवंध में नरोदनिकों की भ्रान्तियों से मोर्चा लेने के लिए १८९४ में लिखा गया था।

१८९५ में लेनिन ने एंगेल्स की मृत्यु के अवसर पर 'फ्रेडरिक एगेल्स' शीर्षक एक लेख श्रमिको के एक अवैध पत्र के लिए लिखा था

जिसमें उन्होने वैज्ञानिक मार्क्सवाद के वहुत अधिक महत्व पर जोर दिया था।

सिद्धान्त का महत्व न्यूनतम करने के कुछ प्रयास रूसी श्रम आन्दोलन में भी किये गये थे। १८९०-१९०० के अन्त में 'रवोचया मीस्ल' नामक एक अवैध अखवार ने श्रम आन्दोलन की क्रियाशीलता को छोटी छोटी मागों के लिए होने वाले सघर्ष के रूप में चित्रित करने की कोशिश की थी। इस अखवार ने श्रमिको का नाम ले ले कर यह भी कहा था "हमें किन्ही मार्क्सों अथवा एगेल्सो की जरूरत नही। हम श्रमिक अच्छी तरह जानते है कि हमें क्या करना है।"

शताब्दी के मोड लेते ही रूसी सामाजिक-जनवाद में एक अवसरवादी प्रवृत्ति, तथाकथित 'अर्थवाद', का जन्म हुआ। 'अर्थवादियो' का कहना था कि श्रमिको को सिद्धान्तो के चक्कर मे अथवा राजनीतिक सघर्षों में नही पडना चाहिए। उन्हे तो अपने को सिर्फ आर्थिक सघर्ष तक, जीवन के गुजर-वसर के लिए जरूरी और अधिक अच्छी दशाओ के सघर्ष तक ही सीमित रखना चाहिए।

लेनिनवादियो ने इस प्रवृत्ति का जोरदार मुकावला किया।

वाद में, १९०५ की क्रान्ति के वाद की प्रतिक्रिया और वैचारिक अस्थिरता के युग में वोल्शेवीको में एक ऐसी प्रवृत्ति दिखाई पडने लगी जिसने मार्क्सवाद के वैज्ञानिक आधार—द्वंद्वात्मक भौतिकवाद—की वैधता को ललकारा और यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया कि प्राकृतिक विज्ञान के क्षेत्र में होने वाले आधुनिकतम आविष्कारो ने दुनिया की घटनाओ के भौतिक निर्वचन का खडन किया है और इसी लिए एक नये सिद्धान्त को जन्म देना 'जरूरी' है। इल्यीच ने उन्हे एक वैज्ञानिक सघर्ष में घसीटा और यह दिखा दिया कि उनके निष्कर्ष विल्कुल गलत थे और उनका कोई वैज्ञानिक आधार भी न था। यह वात १९०८-१९०९ की है। जिस पुस्तक मे लेनिन ने उपर्युक्त वाते कही थी उनका नाम है 'मैटीरियलिज्म

ऐंड एम्पीरिओक्रिटिसिज्म' (खंड १४)। उन्होंने मार्क्सवादी प्रचार पर विशेष ज़ोर दिया था। वे चाहते थे कि पार्टी और तरुण कम्यूनिस्ट लीग के सभी सदस्य मार्क्सवाद की मूल धारणाओं का अध्ययन करें।

युवक लीगों के कामों के संबंध में लेनिन ने जो भाषण दिया था उसमें यह बात अच्छी तरह समझाई गई थी कि युवकों को मार्क्सवाद का अध्ययन कैसे करना चाहिए। वे क्या और कैसे अध्ययन करें, उनके अध्ययन का प्रयोजन क्या हो, तदर्थ आवश्यक सामग्री का चुनाव कैसे किया जाय, और अगर कोई चेतनाशील कम्यूनिस्ट बनना चाहता है तो उसके लिए अध्ययन कितना अपरिहार्य है, आदि बातों पर उन्होंने अपने विचार प्रकट किये थे। उन्होंने समझाया था कि अध्ययन के लिए चुनी गई सामग्री का कैसे उपयोग किया जाय और किस प्रकार कार्य किया जाय कि "कम्यूनिज्म महज़ तोतारटन्त वाली चीज़ न रह जाय बल्कि एक ऐसी चीज़ बने जिसपर आपने खुद विचार किया हो"।

उन्होंने कहा था: "हमें हर विद्यार्थी के दिमाग को मूलभूत तथ्यों का ज्ञान करा कर विकसित करना और उसे पूर्ण बनाना है। उसने जो कुछ ज्ञान प्राप्त किया है अगर वह उसके मस्तिष्क में न जमा तो कम्यूनिज्म शून्य-सी चीज़, महज़ एक साइनबोर्ड बन कर रह जायेगी और कम्यूनिस्ट घमण्डी हो जायेगा। आपको यह ज्ञान न सिर्फ ऐसे ही आत्मसात् करना है अपितु इस आलोचनात्मक ढंग से करना है कि आपके दिमाग में बेकार का कूड़ा-करकट ही न भरे वरन् वह उन तथ्यों से समृद्ध भी हो जो आधुनिक शिक्षित व्यक्ति के लिए अपरिहार्य हैं। अगर कोई कम्यूनिस्ट पूर्वनिश्चित निष्कर्षों का ज्ञान प्राप्त कर लेने के कारण, परन्तु साथ ही बिना गंभीर और कठोर मेहनत किये हुए, बिना उन तथ्यों को समझे हुए जिनकी उसे आलोचनात्मक दृष्टि से जाच करनी थी, अपने कम्यूनिज्म की शेखी बघारता है तो ऐसा व्यक्ति एक शोचनीय कम्यूनिस्ट साबित होगा। ऐसी अल्पज्ञता का परिणाम बड़ा घातक होगा। अगर मैं यह जानता हूं

कि मुझे वहुत कम ज्ञान है तो मैं और अधिक सीखने की कोशिश करूंगा। परन्तु यदि कोई व्यक्ति यह कहता है कि वह कम्यूनिस्ट है और उसे कोई भी वात पूरी पूरी जानने की जरूरत नही तो वह कम्यूनिस्ट नही हो सकता।"*

यह एक स्वत स्पष्ट वात है कि अगर आप कोई सामग्री चुनते हैं और उसके सव से महत्वपूर्ण अशो को छाटते है तो आपको उनपर मनन करके आवश्यक निष्कर्ष स्वय निकालने चाहिए न कि उन्हे यन्त्रवत् आत्मसात् ही कर लेना चाहिए। दूसरे शब्दो में, यह जरूरी है कि आप स्वतन्त्र रूप से काम करने की आदत डाले और यह कैसे किया जाय इसके वारे में कुछ सोच-विचार करे।

उक्त भाषण में लेनिन ने जिस दूसरे प्रश्न पर विचार प्रकट किये थे वह था सिद्धान्त को व्यवहार के साथ सवद्ध करना। उन्होंने कहा था "पुराने पूजीवादी समाज ने हमारे लिए जो अनेकानेक दुर्गुण और सकट छोडे है उनमें से एक सव से वडा सकट है पुस्तको का व्यावहारिक जीवन से पूर्ण संवध-विच्छेद ; हमारे पास ऐसी पुस्तके थी जिनमें यथासभव हर चीज अच्छी से अच्छी समझाई गई थी, फिर भी अधिकाशत ये पुस्तके उन अनेकानेक घृणित एव आडम्वरपूर्ण झूठो से भरी हुई थी जिनके आधार पर पूजीवादी समाज का मनगढत चित्रण किया गया था।

"यही कारण है कि कम्यूनिज्म के वारे में पुस्तको में जो कुछ लिखा है उसी को घोट डालना एक गलत-सी चीज होगी। अव हम अपने भाषणो और लेखो में वही वाते नही दुहराते जो पहले कम्यूनिज्म के वारे में कही गई थी क्योकि हमारे भाषणो और लेखो का सवध हमारे दैनिक जीवन से है। विना काम के, विना सघर्ष के कम्यूनिस्ट पैम्फ्लेटो और पुस्तको को पढ कर कम्यूनिज्म के वारे में जो ज्ञान होगा वह विल्कुल वेकार होगा क्योकि इसका परिणाम यह होगा कि हम व्यवहार को सिद्धान्त से अलग कर देगे। यह एक पुरानी चीज थी और पुराने वूर्जवा समाज की एक

---

*व्ला० इ० लेनिन, चुने हुए ग्रन्थ, खड २, भाग २, पृष्ठ ४७६।

घृणित विशेषता।"* सिद्धान्त को व्यवहार के साथ, सार्वजनिक लाभ के लिए मेहनत के हर क्षेत्र में रोज़मर्रा के कामो के साथ समन्वित करने की कला सीखने के लिए मनुष्य को अधिक और स्वत. अध्ययन करना चाहिए। व्यावहारिक कामो में ऐसे बहुत-से सवाल उठते है जो तभी हल किये जा सकते है जब कि मनुष्य को काफी ज्ञान हो। मनुष्य को जानना चाहिए कि यह कार्य स्वतंत्र रूप से किस प्रकार किया जाय। ऐसा करने के लिए मनुष्य को कुछ निश्चित और कम से कम ज्ञान ज़रूर होना चाहिए। साथ ही उसे स्वत. अध्ययन करने की आदत भी डालनी चाहिए।

हमने अनेकानेक सफलताएं प्राप्त की है। हमारे देश की काया पलट चुकी है। लोग संघटित और जागरूक बन चुके है। लेकिन और अधिक प्रगति के लिए और अधिक ज्ञान की ज़रूरत है। इसके अतिरिक्त, श्रमिक जनता को ज्ञान प्राप्त करने की ज़रूरत है, ऐसा-वैसा ज्ञान नही, परन्तु वह ज्ञान जो सम्पूर्णता का निर्माण करता है, जो हमारे व्यावहारिक कामो को और भी ऊंचे स्तर तक बढाने के लिए ज़रूरी है।

हमें ज्ञान की ज़रूरत है दूसरे देशो की श्रमिक जनता पर अपने प्रभाव को मज़बूत बनाने के लिए, अपने देश को अत्यधिक समृद्ध, सुसंघटित और सशक्त बनाने के लिए, और इसलिए कि हमारी सफलताओं में सभी को और भी अधिक विश्वास हो।

हमें ज्ञान की ज़रूरत है इसलिए कि हम अपनी समाजवादी मातृभूमि की रक्षा कर सकें, इसलिए कि हम दुनिया की समाजवादी क्रान्ति के लिए होने वाले संघर्ष को आगे बढ़ा सके।

और पहले से कहीं अधिक अब ..

---

* वही, पृष्ठ ४७६।